सफलता
और
उसकी साधनाके उपाय ।

हिन्दी-ग्रन्थरत्नाकर-सीरीजका १२ वाँ ग्रन्थ।

सफलता
और
उसकी साधनाके उपाय।

लेखक,
श्रीयुत बाबू रामचन्द्र वर्मा
सम्पादक, नागरीप्रचारिणी पत्रिका और सहकारी सम्पादक, हिन्दी-शब्दसागर।

प्रकाशक,
हिन्दीग्रन्थरत्नाकर कार्यालय, बम्बई।

मुम्बईवैभव प्रेसमें मुद्रित।

मूल्य बारह आने।] अगस्त १९१५ [सादीका दश आने।

हिन्दी-ग्रन्थरत्नाकर-सीरीजके

उत्तमोत्तम ग्रन्थ ।

हिन्दी साहित्यको उत्तमोत्तम ग्रन्थरत्नोंसे भूषित करनेके लिए इस ग्रन्थ-मालाके निकालनेका प्रयत्न किया गया है । हिन्दीके नामी नामी विद्वानोंकी सम्मतिसे इसके लिए ग्रन्थ तैयार कराये जाते हैं। प्रत्येक ग्रन्थकी छपाई, सफाई, कागज़ जिल्द आदि सभी बातें लासानी होती हैं । स्थायी ग्राहकोंको सब ग्रन्थ पौनी कीमतमें दिये जाते है । जो स्थायी ग्राहक होना चाहें, उन्हें पहले आठ आना जमा कराकर नाम दर्ज करा लेना चाहिए । अबतक इसमे जितने ग्रन्थ निकले हैं, उन सबहीकी प्राय सबही पत्रोंने एक स्वरसे प्रशंसा की है । नीचे लिखे ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं.—

१।२ स्वाधीनता—जान स्टुअर्ट मिलकी लिबर्टीका अनुवाद । अनुवादक, सरस्वतीसम्पादक पं० महावीरप्रसादजी द्विवेदी इसके साथमें लगभग ६० पेज-की मिलकी जीविनी और दो चित्र भी हैं । मूल्य दो रुपये ।

३ प्रतिभा—श्रीयुक्त बाबू अविनाशचन्द्रदास एम ए. बी. एल. के कुमारी नामक उपन्यासका अनुवाद । अनुवादक, श्रीयुत नाथूराम प्रेमी । मूल्य सादी जिल्दका एक रुपया ।

४ फूलोंका गुच्छा—ग्यारह चुनी हुई सुन्दर सुन्दर गल्पोंका संग्रह । इसे भी श्रीयुत नाथूराम प्रेमीने लिखा है । मूल्य दश आना ।

५ आँखकी किरकिरी—साहित्यसम्राट् कविवर रवीन्द्रनाथ टागोरके ' चोखेर वाली ' नामक प्रसिद्ध उपन्यासका अनुवाद । अनुवादक, पं० रूपनारा-यणजी पाण्डेय । मूल्य डेड़ रुपया ।

६ चौबेका चिट्ठा—स्वर्गीय बाबू बंकिमचंद्र चट्टोपाध्यायके 'कमला-कान्तेर दफ्तरका अनुवाद । अनुवादक, पं० रूपनारायणजी पाण्डेय । मूल्य ग्यारह आना ।

७ मितव्ययिता—डा० सेमुएल स्माइल्सके ' थिरिफ्ट ' ग्रंथका सरल अनुवाद । अनुवादक बाबू दयाचन्द्रजी गोयलीय बी. ए । मूल्य चौदह आने ।

८ **स्वदेश**—बाबू रवीन्द्रनाथ टागोरके महत्त्वपूर्ण निबंधोंका अनुवाद । अनुवादक, बाबू महावीरप्रसादजी गहमरी । मूल्य दश आना ।

९ **चरित्रगठन और मनोबल**—डा० राल्फ वाल्डो ट्राइनके 'करेक्टर बिल्डिंग थाट पावर'का अनुवाद । अनुवादक बाबू दयाचन्द्रजी गोयलीय बी. ए । मूल्य तीन आना ।

१० **आत्मोद्धार**—डा० बुकर टी वाशिंग्टनके आत्मचरितका अनुवाद । अनुवादक पं लक्ष्मण नारायणजी गर्दे । मूल्य कागजकी ।जेल्दका एक रुपया, कपड़ेकी पक्की जिल्दका सवा रुपया ।

११ **शान्तिकुटीर**—बाबू अविनाशचन्द्रदास एम. ए बी एल. के 'पलाशवन' नामक उपन्यासका अनुवाद । अनुवादक प रूपनारायणजी पाण्डेय । मूल्य बारह आने । कपड़ेकी जिल्दका एक रुपया ।

नीचे लिखे ग्रन्थ तैयार हो रहे हैं:—

१३ **अन्नपूर्णाका मन्दिर**—पवित्र शिक्षाप्रद और करुणारसपूर्ण सामाजिक उपन्यास । यह उपन्यास इतना अच्छा और भावपूर्ण है कि थोड़े ही समयमें अँगरेजी और मराठी आदि भाषाओंमें हो चुका है । मूल्य लगभग १) रु ।

१४ **स्वावलम्बन**—डा० सेमुएल स्माएल्सके 'सेल्फ हेल्प' नामक प्रसिद्ध ग्रन्थका रूपान्तर । मूल ग्रन्थमें जितने उदाहरण हैं वे सब पश्चिमी देशोंके हैं परन्तु इसमें सैकड़ो उदाहरण भारतवासी आदर्श पुरुषोंके दिये गये हैं । मूल्य लगभग १॥) रु० ।

विशेष विवरण जाननेके लिए बड़ा सूचीपत्र मगाकर देखिए ।

पत्रव्यवहार इस पतेसे कीजिए—

मैनेजर, हिन्दीग्रंथरत्नाकर कार्यालय

हीराबाग, पो. गिरगांव—**बम्बई** ।

भूमिका ।

संसार कर्म-क्षेत्र है। यहाँ आनेपर सभी लोगोंको कुछ न कुछ करना पडता है। ऐसी अवस्थामें सब लोगोंका अपने हाथमें लिये हुए कामोंको ठीक तरहसे पूरा उतारने और उसमें यथासाध्य यश प्राप्त करनेकी इच्छा रखना बहुत ही स्वाभाविक और योग्य है। इस पुस्तकमें उसी इच्छाकी पूर्त्तिके कुछ उपाय बतलाये गये हैं। ये बतलाये हुए उपाय कुछ नये नहीं, पुराने ही हैं। पुस्तकमें उनका सग्रह और दिग्दर्शन मात्र है। दिग्दर्शन इसलिये कि जिन अनेक आवश्यक उपायों, गुणों और दूसरे विषयोंका इसमें समावेश या उल्लेख किया गया है, वे इतने महत्त्वपूर्ण और प्रशस्त हैं कि उनमेंसे प्रत्येक पर एक स्वतत्र बडी पुस्तक लिखी जा सकती है।

अनेक प्रकारके सांसारिक पदार्थों और विषयों अथवा सुखके अनेक साधनोंमेंसे किसी एक या अधिकका सम्पादन और अधिकृत कर लेना ही कभी वास्तविक सफलता प्राप्त करना नही कहा जा सकता। जीवनकी वास्तविक सफलता वही है जो सर्वांगपूर्ण एकदम निर्दोष हो। जो मनुष्य शारीरिक, साम्पत्तिक और आर्थिक दृष्टिसे सुखी न हो, जो विद्या और कलासे हीन हो, जो समाजका आवश्यक अग और देशका पूरा सेवक न हो, जिसकी विद्यमानता किसीको वाछित न हो और जिसमें किसी मानवोचित गुणका अभाव हो उसका जीवन ठीक ठीक अर्थमें कभी सफलतापूर्ण नहीं कहा जा सकता। इस दृष्टिसे देखते हुए ससारमें ऐसे लोग बहुत ही कम मिलेंगे जिनका जीवन वास्तवमें 'मानव जीवन' कहा जा सके। यह पुस्तक बहुतसे अशोंमें इसी उद्देश्यसे लिखी गई है कि जिसमें इससे लोगोंको वास्तविक मानवजीवनके एक साधारण आदर्शका अनुमान करनेमें सहायता मिले। पर साधारणतः 'सफलता'

शब्दका जो अर्थ प्रचलित है उसका ध्यान रखते हुए और कई विशिष्ट कारणोंसे इस पुस्तकका विषयाधिकार कुछ संकुचित रक्खा गया है और इसी लिये उक्त उद्देश्यकी भली भाँति पूर्त्ति भी नहीं हो सकी है । पर तो भी जो कुछ हो सका है उसीसे यदि पाठकोंका थोड़ा बहुत उपकार या कल्याण हुआ और यह पुस्तक पाठकोंको रुची तो मै अपने आपको कृत-कृत्य समझूँगा और शीघ्र ही इस पुस्तकके पूर्तिस्वरूप ' मानव जीवन ' नामकी एक और पुस्तक पाठकोंकी सेवामें भेट करूँगा ।

आपत्ति की जा सकती है कि सफलताविषयक पुस्तक लिखनेका अधि-कारी वही मनुष्य है जिसने विद्या या धन आदि उपार्जित करने अथवा किसी और शुभ कार्य्यमें अच्छी सफलता प्राप्त की हो; और बहुत सभव है कि इस दृष्टिसे मै बिलकुल ही कोरा ठहरूँ और अनधिकारचर्चा करनेका दोषी समझा जाऊँ । ऐसी दशामें यह निवेदन कर देना आवश्यक समझता हूँ कि सफलता-विषयक अँगरेजीके Success Secrets, The Secret of Success, The Art of Success आदि कई अच्छे ग्रथोंको पढकर यह छोटी सी पुस्तक लिखी गई है । यथास्थान अपने अल्प अनु-भव और ज्ञानकी सहायता लेकर उन ग्रन्थोंमे प्रकट किये हुए बहुमूल्य विचा-रोंके साराशको मैने जैसे तैसे एक नया स्वरूप दे दिया है । आशा है, पाठक इस पुस्तकका आदर करके इससे कुछ लाभ उठानेका प्रयत्न करेगे ।

काशी ।
१० मई १९१५

विनीत—
रामचन्द्र वर्म्मा ।

॥ श्रीः ॥

सफलता और उसकी साधनाके उपाय।

उपोद्घात।

सफलताकी व्याख्या—वैद्य और कवि—वास्तविक और कल्पित सफलता—चिकित्सक और कोठीवाल—वास्तविक मनुष्य कौन है?—धनका महत्त्व—कर्म्मठ और अयोग्य—जीवनमें लहर—साहस और अध्यवसाय—प्रत्येक मनुष्य उत्तम कार्य्य कर सकता है—मार्गकी कठिनाइयाँ—कर्त्तव्य पालन—उच्चाकांक्षाके विभाग—अकर्मण्य मनुष्य—उद्देश्यका स्वरूप—दुनियाकी शिकायत—उपयुक्त अवसर और कार्य्य—स्वास्थ्य—साधारण बुद्धि और विचारशक्ति—एक निश्चित गुण—शुद्ध आचरण—भिन्न भिन्न कार्य्योंका सफलताके साथ सबंध।

किसी आरम्भ किये हुए कार्य्यको उत्तमतापूर्वक समाप्त करने और उससे यथेष्ट लाभ उठानेका ही नाम सफलता है। सफलता साधारण जूते बनानेमें भी हो सकती है और करोड़ों रुपयोंका व्यापार करने अथवा बड़ेसे बड़ा राज्य चलानेमें भी; क्योंकि जूता सीना भी काम ही है और राज्य चलाना भी काम ही है। पर साधारणतः नित्यके सांसारिक व्यवहारोंमें सब लोग सफलताका इतना व्यापक अर्थ नहीं लेते। प्रायः लोग अधिक धन कमानेको ही सफलता प्राप्त करना समझते हैं। यदि कोई मनुष्य निरन्तर कठिन परिश्रम करके बड़ा भारी विद्वान् बन जाय तो वह संसारकी दृष्टिमें उतना सफल नहीं

ठहरता जितना कि एक लखपती सेठ, साहूकार या महाजन। ऐसी दशामें सफलताकी की हुई व्याख्या कुछ अयुक्त ठहरती है। पर वास्तवमें यह बात ठीक नही है। यदि वास्तविक दृष्टिसे देखा जाय तो मालूम होगा कि दोनोंने ही एक न एक उद्देश्य पर लक्ष्य रखकर परिश्रम किया है और अन्तमें उसकी सिद्धि भी की है। यदि दोनोंकी अवस्थाओं पर और भी सूक्ष्म विचार किया जाय तो जान पड़ेगा कि एक महाजनके धन कमानेकी अपेक्षा एक विद्वान्का विद्या उपार्जित करना अधिक उपयोगी और श्रेयस्कर है।

मान लीजिये कि एक वैद्यने नए प्रकारका एक चूरन निकाला, और एक कविने कुछ कविता की। अब विचारिये कि इन दोनोंमेंसे किसकी कृतिसे समाजकी अधिक सेवा हुई? किसके परिश्रमसे जन-साधारणको अधिक लाभ पहुँचा? चूरनसे शरीरका रोग दूर होगा और कवितासे आत्मा और बुद्धि संस्कृत और परिष्कृत होगी। अब चूरनके संबंधमें बड़े बड़े वैद्यों और रोगियोंके प्रशंसापत्र और कविताके संबंधमें बड़े बड़े समाचारपत्रोंकी आलोचनाएँ सग्रह करके लम्बे चौड़े विज्ञापन छापिये, तो उक्त प्रश्नका उत्तर सहजमें ही निकल आवेगा। कविजीकी कीर्ति तो बहुत हो जायगी, पर उन्हें आर्थिक लाभ बहुत ही कम, प्राय· नहींके बराबर होगा। लेकिन वैद्यराजका घर रुपयोंसे भर जायगा, और कीर्ति उनकी प्राय· उतनी ही कम होगी जितनी कि कविजीकी अर्थ-प्राप्ति। अर्थात् कविताकी अपेक्षा चूरनके अधिक प्रचार और आदरकी संभावना है। कैसे आश्चर्य्यकी बात है कि जन-साधारण कविताकी तो थोड़ी सी प्रतियाँ खरीदकर ही सन्तुष्ट हो जाते है और चूरनकी बिक्री उस समयतक बराबर जारी रहती है जबतक कि वैद्यराज उसका विज्ञापन देना बन्द न कर दें। पर दूसरे रूपमें समाज कविके उपकारोंका बदला चुका ही देता है और उसकी स्मृतिको वह सैकड़ों हजारों वर्षोंतक बनाये रखता है।

लक्ष्मीके भक्तोंकी बात जाने दीजिये, पर विचारवानोंके निकट कविकी कृति और सफलता स्थायी और वास्तविक है और वैद्यकी कृति और सफलता अस्थायी और कृत्रिम । वैद्यको धन आदिके रूपमें संसारसे जो कुछ मिलता है उसकी अपेक्षा कविको होनेवाली प्राप्ति कही बढ चढ़कर है । गोसाईं तुलसीदासजीने रामायण लिखकर टके नहीं कमाये थ, पर सफलतापूर्ण जीवनका ठीक अनुमान करनेके लिये हमें गोसाईजीकी साधुता और उच्चतम मनोवृत्तियोंसे ही अधिक सहायता मिलती है, जगतसेठकी सम्पत्तिसे मिलनेवाली शिक्षा और सहायता अपेक्षाकृत बहुत ही कम है ।

यह तो हुई कृतिकी बात; अब उसके कर्त्ता मनुष्यको लीजिये । आपके सामने एक चिकित्सक और एक कोठीवाल है । चिकित्सकमें मनुष्यत्व है और साहित्य, प्रकृति और चिकित्सा-शास्त्र पर उसका अनुराग है । उसे जंगलों, पहाड़ों और नदियोंकी शोभा देखकर शान्ति और प्रसन्नता होती है, अच्छी अच्छी पुस्तकें उसे सच्चे मित्रोंसे भी बढ़कर उपदेश और सहायता देती हैं, वह चिकित्सा-शास्त्रका अध्ययन करके अपने ज्ञान और अनुभव द्वारा सर्वसाधारणको बहुत अधिक लाभ पहुँचाता है और अपने स्वार्थत्याग तथा सद्व्यवहारके कारण सर्वप्रिय बन जाता है । अन्तमें वह बहुत ही थोड़ी सम्पत्ति छोड़कर इस संसारसे बिदा होता है और उसके वास्तविक गुण जाननेवालोंकी संख्या परिमित ही होती है । अब कोठीवालको लीजिये । उसे संसारमें धनके सिवा और कुछ अच्छा ही नहीं लगता । बाजार-भाव, दलाली, ब्याज-बट्टे और पड़ता बैठानेके सिवा उसे और कुछ सूझता ही नही । उसकी प्रवृत्ति सदा हर एक चीज़ और हर एक काममेंसे रुपया पैदा करनेकी ओर ही होती है और यही सबसे अधिक बुरी बात है । उसके सामने विचारों और भावोंकी सुन्दरता नष्ट हो जाती है और " सर्वे गुणाः काञ्चनमाश्रयन्ति " ही उसका एक मात्र मूलमंत्र रह जाता है ।

हाँ, जब वह मरने लगता है तो अपने पीछे बहुत बड़ी सम्पत्ति अवश्य छोड़ जाता है ।

अब इस चिकित्सक और कोठीवालकी अवस्थाओंकी तुलना करनेसे जान पड़ता है कि चिकित्सक तो वास्तवमें मनुष्य था और कोठीवाल रुपया पैदा करनेकी कल । चिकित्सकने अपने '**आप**' को बनाया और कोठीवालने केवल '**सम्पत्ति**' बनाई । चिकित्सकका जीवन शान्ति और सुखसे पूर्ण था और कोठीवालका जीवन झंझटों और चिंताओंसे भरा हुआ । हमारे इस कथनका यह अभिप्राय नही है कि चिकित्सक या कवि मात्र देवता है और कोठीवाल, सेठ, महाजन आदि दानव । इन दृष्टान्तोंसे हमारा तात्पर्य्य केवल यही है कि संसारमें एकका जीवन तो मानव-जातिका कल्याण, उपकार और अभ्युदय करनेमें व्यतीत होता है और दूसरेका केवल झगड़ों, बखेड़ों और झंझटोंमें । दूसरी ओर एक बड़े धनवान् द्वारा भी मानव-जातिका यथेष्ट कल्याण हो सकता है और एक कवि, चिकित्सक या दार्शनिक भी अपने जीवनका बड़े ही निन्दनीय रूपसे उपयोग या निर्वाह कर सकता है । पर यह बात निर्विवाद सिद्ध है कि समाजका अधिक कल्याण और उपकार वे ही लोग कर सकते है जो सांसारिक सुख और वैभवके जालमें अधिक नही फँसते । लक्ष्मीके उपासक भी ससारका उपकार कर सकते हैं पर इस सम्बन्धमें उनका उद्देश्य गौण ही रहता है और उनमें धन उपार्जन करनेकी इच्छा ही प्रधान और बलवती होती है ।

इस पुस्तकका उद्देश्य परोपकारव्रतधारी साधुओं तथा महात्माओं और कुबेरका अवतार बननेकी इच्छा रखनेवाले व्यापारियोंके गुणों और दोषोंकी मीमांसा करना नहीं है । इसका वर्ण्य विषय केवल 'सफलता' है जो कि दोनोंके उद्देश्यों और कार्य्योंमे समान रूपसे प्रयुक्त और आवश्यक होती है । इसके अतिरिक्त संसारमें बहुत से

लोग ऐसे भी होते हैं जो केवल प्रसिद्धि, सर्वप्रियता, मान-मर्य्यादा, अथवा इसी प्रकारकी और किसी बातके इच्छुक होते हैं। वे सब भी अपने प्रयत्नमें सफलता चाहते है। पर संसारमें बहुत अधिक संख्या उन्हीं लोगोकी है जिनकी दृष्टि सदा धन पर रहती है और जो केवल धनवान् होनेको ही सफल-मनोरथ होना समझते है। उनका यह समझना बहुतसे अंशोंमें ठीक भी है, क्योंकि संसारके अधिकांश कार्य्य एक मात्र धनके अभावके कारण ही कभी कभी अधूरे या अछूते पड़े रह जाते हैं। इसके अतिरिक्त प्रत्येक मनुष्य स्वतंत्र जीवन व्यतीत करना चाहता है और यह स्वतंत्रता धनकी सहायतासे ही मिल सकती है। पर धन-को ही हमें अपना सर्वस्व और देव-देव न समझ लेना चाहिये, बल्कि उसे ससारमें सुख और प्रतिष्ठापूर्वक जीवन व्यतीत करनेका साधन मात्र समझना चाहिये। जो धन ससार, मानव-जाति या समाजके कार्य्योंमें सुगमता उत्पन्न करने और उसके उपकार-साधनका कुछ भी ध्यान रखकर उपार्जित किया जाता है वही वास्तविक धन है और उसीका उपार्जित होना सबको अभीष्ट है। पर जो धन अपने शरीरको अत्यंत कष्ट देकर, गरीबोंका जी दुखाकर, समाजका अनिष्ट करके अथवा इसी प्रकारके किसी और अनुचित उपायसे एकत्र होता है, वह अत्यंत निन्दनीय और गर्हित है। इस प्रकार उपार्जित किये हुए धनसे संसारकी अशाति और कष्टकी वृद्धिके अतिरिक्त और कोई लाभ नही होता। अतः जो लोग केवल धन उपार्जन करनेको ही सफ-लता समझते हों उन्हें उक्त सिद्धान्त कभी भूलना न चाहिये।

स्थायी या वास्तविक और अस्थायी या कृत्रिम सफलताका भेद ऊपर दिखलाया जा चुका है। संभव है कि कोई मनुष्य बहुत सा धन एकत्र कर ले—रुपया पैदा करनेकी कल बन जाय—पर समाज या मानव-हितकी दृष्टिसे वह कौड़ी कामका न हो। संसारमें ऐसे लोगोंकी कभी

भी नहीं है । इसके सिवा आपको बहुत से लोग ऐसे भी मिलेंगे जिन्हें और सब कामोंमें तो पूरी पूरी सफलता हो जाती है पर धन एकत्र करनेमें वे नितान्त असमर्थ होते हैं । कुछ लोग ऐसे भी मिलेंगे जिनके किये न तो धन ही संग्रह हो सकता है और न और दूसरा कोई काम। इसलिये वास्तविक सफलता वही है जो समस्त सांसारिक कार्य्योंमें समान रूपसे प्राप्त की जाय, जिसमें मनुष्यको आत्म-ज्ञान हो, जिससे संसारका अनुभव हो, जो हमारी शारीरिक, मानसिक, नैतिक और सामाजिक शक्तियोंकी वृद्धिमें सहायता दे और जो समाजके लिये सुखद और शान्ति-प्रद हो । धन, बल, विद्या, परोपकार, उपदेश आदि जिन जिन बातोंसे उक्त फल प्राप्त हो सकें उन सबको सफलता-की सामग्री या अंग समझना चाहिये ।

संसारमें ऐसे लोगोंकी बहुत कमी है जो स्वयं किसी प्रकारका व्यापार, पेशा या नौकरी आदि न करते हो और केवल दूसरोंके दान पर निर्भर रहकर संसारका कल्याण करना चाहते हों । अधिकाश संख्या ऐसे ही लोगोंकी है जो अपने पेटके लिये तरह तरहके धन्धे करते है और दया, समाज-हित, धर्म्म या प्रसिद्धि आदिकी लालसासे कभी कभी कोई शुभ कार्य्य कर बैठते हैं । ऐसे लोगोंकी सफल होनेकी इच्छाका भी ध्यान रखना इस पुस्तकमें आवश्यक है । यद्यपि हर एक व्यापार और पेशेमें कुछ न कुछ स्वतन्त्र विलक्षणता या विशेषता होती है और उन सब व्यापारों और पेशोंमे सफल होनेके लिये कोई एक ही निश्चित सिद्धान्त नहीं बतलाया जा सकता, तथापि दो बातें ऐसी है जिनकी आवश्यकता सभी कार्य्योंमे समान रूपसे होती है । उनमेंसे एक तो ज्ञान है और दूसरा कर्म्म । ज्ञानसे हमारा तात्पर्य्य अपने पेशे या रोजगार और समयके प्रवाहकी पूरी जानकारीसे है, अपने अनुभवकी सहायतासे भविष्यका कुछ कुछ अनुमान कर लेना भी इसी ज्ञानके अन्तर्गत है । अपने उद्दे-

श्यकी पूर्तिके लिये हम जो जो काम करनेका विचार करते है उनमें अपनी सारी शक्तियोंसे लग जानेका नाम ही कर्म्म है। इसके अतिरिक्त निश्चित उद्देश्य, विचारोंकी दृढ़ता, समयका सदुपयोग आदि और भी अनेक बातें ऐसी है जिनका होना सफलता-प्राप्तिमें बहुत बड़ा सहायक होता है और जिनका वर्णन आगेके प्रकरणोंमे किया गया है। इस अवसर पर हम सफलताके सम्बन्धमें कुछ विद्वानोंका मत दे देना और दो एक साधारण बातें बतला देना ही आवश्यक और यथेष्ट समझते हैं।

धनवानों और विद्वानोंके मतसे सफलताके रूप और लक्षणोंमें भेद होना बहुत स्वाभाविक है; पर हमारे मतलबके लिये दोनोंके मत और विचार उपयोगी और आवश्यक है। संसारमें अधिक संख्या उन्ही लोगोंकी है जो एक मात्र धनको ही सब कुछ समझते अथवा कमसे कम धन पर ही सबसे अधिक दृष्टि रखते हैं और इसी लिये एक विद्वान्के मतकी अपेक्षा लोग धनवान्के मतका ही अधिक आदर कर सकते है। अतः पहले एक प्रसिद्ध धनवान्का मत देना ही उपयुक्त जान पड़ता है। इगलैडमें राथ्सचाइल्ड (Rothschild) नामक एक बहुत बड़ा व्यापारी घराना है। उसके करोडों पाउडके सैकडों कारबार और रोजगार होते है। उस घरानेके मूलपुरुषने अपने चार सिद्धान्त स्थिर किये थे। एक तो वह दोहरे और तेहरे मुनाफेका काम करता था। अर्थात् बड़े बड़े कारखानेवालोंके हाथ कच्चा माल बेचता था और पीछे उनसे तैयार माल खरीदकर साधारण ग्राहकोंके हाथ बेचता था। * दूसरे

* अभी हालमें कलकत्तेकी एक अंगरेजी कम्पनीने ऐसा ही तेहरे मुनाफेका रोजगार आरम्भ किया है। वह ग्राहकोंके हाथ मोजे बनानेकी मशीन बेचती है और साथ ही मोजे बिननेके लिये ऊन आदि भी। इन दोनों चीजोंमे नफा लेनेके उपरान्त वह उन्हीं ग्राहकोंसे बने हुए मोजे खरीदती और फिर नफा लेकर दूसरे लोगोंके हाथ बने हुए मोजे बेचती है और इस प्रकार तीन बार नफा लेती है।

वह चटपट सौदा कर लेता था और अधिक लाभकी आशासे मालको रोक न रखता था। वह समझता था कि एक बार माल बेचकर फिर अवसर पड़ने पर किफ़ायत दाममें माल खरीदा और अच्छे नफे पर बेचा जा सकता है। तीसरे वह अभागे लोगोंसे किसी प्रकारका संबंध न रखता था। वह कहता था–"मैंने बहुतसे ऐसे चतुर मनुष्य देखे हैं जिनके पास पहननेके लिये जूते भी नहीं है। मै ऐसे लोगोंसे कभी कोई सम्बन्ध नहीं रखता। उनकी सम्मति तो बहुत अच्छी होती है पर भाग्य सदा उनके प्रतिकूल रहता है। वे स्वयं ही दुखी रहते हैं; मुझे वे क्या लाभ पहुँचावेंगे ?" अपने चौथे सिद्धान्तका वर्णन वह इस प्रकार करता है:–"सदा सचेष्ट और साहसी रहो। धन संग्रह करनेके लिये बड़ी दूरदर्शिता और साहसकी आवश्यकता होती है; और जब धन मिल जाता है तो उसे बनाये रखनेके लिये दसगुनी बुद्धिकी आवश्यकता होती है।" एक विद्वान्का मत है कि इन सिद्धान्तोंके अनुसार चलनेसे मनुष्य चाहे धनवान् न हो सके, पर स्वार्थी अवश्य हो जाता है। जो हो, पर इसमें संदेह नहीं कि अयोग्य और अपात्रके पास धन नहीं ठहरता। एक बड़े अनुभवीने एक बार लेखकसे कहा था—"शेरनीका दूध मिलना बहुत कठिन है, और यदि किसीको भाग्यवश मिल भी जाय तो सोनेके सिवा और किसी धातुके बरतनमें वह ठहरता ही नही, बहुत जल्दी फट जाता है। ठीक यही दशा धनकी भी है। पहले तो वह किसीको जल्दी मिलता ही नहीं, और यदि संयोगवश मिल भी जाय तो अयोग्य या अपात्रके पास ठहरता ही नहीं, तुरन्त निकल जाता है।" अतः यह सिद्ध है कि जो लोग धन प्राप्त करना चाहते हों, वे पहले उसके पात्र बननेका प्रयत्न करें।

एक और विद्वान् कहता है–"मैंने अपने जीवनमें जो कुछ देखा

है उससे मुझे यही मालूम हुआ कि संसारमें अबतक जितने लोगोंने सफलता प्राप्त की है उनमेंसे अधिकांशने सदा अपने बाहु और विचार-बल पर ही भरोसा रक्खा है। " अर्थात् जो लोग बात बातमें दूसरोंसे सहारा या सहायता चाहते हों उनके लिये सफल होनेका बहुत ही कम अवसर है। प्रत्येक मनुष्यके जीवनमें एक या अनेक बार एक प्रकार-की लहरें आती हैं। उन लहरोंसे यदि ठीक ठीक काम लिया जाय तो वे बहुत शीघ्र मनुष्यको सफल-मनोरथ कर देती हैं—उन्हें मनोवाञ्छित फल तक पहुँचा देती है। ये लहरें और कुछ नहीं, उपयुक्त अवसर हैं, और जो लोग ऐसे अवसर पर चूक जाते हैं उनका जीवन सदा दुःखमय बना रहता है। यदि हमें कभी सौभाग्यवश कोई शुभ अवसर मिल जाय तो बिना इस बातका विचार किये कि उसमें हमारी तबीयत लगेगी या नही, वह हमारे लिये उपयुक्त होगा या नहीं, हमें उससे लाभ उठानेके लिये कटिबद्ध हो जाना चाहिये। कुछ लोग ऐसे होते हैं जो बहुत ही साधारण कामोंको देखकर हतोत्साह हो जाते है और उनके मनमें यह आशंका होने लगती है कि यह काम हमारे किये होगा या नही। वे लोग यह नही जानते कि वही मनुष्य कोई काम कर सकता है जो यह समझता है कि—हाँ, मैं इसे कर सकूँगा। यदि हम पहलेसे हिम्मत हारकर बैठ जाँय तो हमें समझना चाहिये कि हम सचमुच उस कार्य्यके अयोग्य हैं। मनुष्यके सामने छोटे और बड़े सभी प्रकारके काम आते हैं, पर उसके द्वारा होते वही काम हैं जिनके लिये वह अपने आपको समर्थ समझता है। यदि हम योग्य और साहसी हो तो बड़े बड़े कामोंको भी सहज समझकर उसमें लग जाते हैं और यदि हम अयोग्य और भीरु हों तो छोटे छोटे कामोंसे भी घबरा जाते है। यही साहस उद्देश्य-सिद्धिके पथमें पहला पग है।

ऊपर जो कुछ कहा गया है उसका यह तात्पर्य्य नहीं है कि, हमारे

सामने जो काम आवे उसमे हम आँखें मूँद कर लग ही जाँय। हमें अपनी परिस्थितिका भी कुछ ध्यान रखना चाहिये। साधारण बल बुद्धिके मनुष्य कभी कभी बहुत बड़े कामोमें हाथ डालकर अपनी भारी हानि कर बैठते हैं। ऐसे मनुष्य जबतक दृढप्रतिज्ञ, साहसी, धीर, सहिष्णु और परिश्रमी न हों तबतक उन्हें भारी भारी कामोंसे यथासाध्य बचना चाहिये। एक कृतविद्यका कथन है—" मेरा नियम है कि किसी कार्य्यको आरम्भ करनेसे पहले मै भली भाँति समझ लेता हूँ कि वह कार्य्यरूपमें परिणत किया जा सकता है या नही। जब मुझे इस बातका पूरा निश्चय हो जाता है कि वह कार्य्यरूपमें परिणत हो सकता है तो मैं उसे पूरा करनेमें कोई बात उठा नही रखता। जिस कामको मै एक बार आरम्भ कर देता हूँ उसे कभी बिना पूरा किये नही छोड़ता। मेरी सारी सफलताका मूल यही नियम है।"

बड़े बड़े बुद्धिमानों, विद्वानो और धनवानोंके कथनका सारांश यही है कि किसी कार्य्यमें सफलता प्राप्त करनेके लिये मनुष्यको विचार और परिश्रमपूर्वक निरन्तर प्रयत्न करते रहना चाहिये। जब जार अलेकजेंडरने नेपोलियनसे उसकी सफलताका मूल मंत्र पूछा तो उसने उत्तर दिया कि इसके लिये किसी कार्य्यमें निरतर लगे रहना ही आवश्यक और यथेष्ट है। बेन्‌जमिन फ्रैंकलिनकी सम्मति और भी अधिक उपयुक्त और ग्राह्य है। वह कहता है:—" कोई कार्य्य केवल इच्छा करनेसे ही नही बल्कि परिश्रम करनेसे होता है। जो मनुष्य केवल आशा पर जीता है उसे भूखों मरना पडता है। बिना प्रयासके कोई फलप्राप्ति नहीं होती। . ...जो व्यापार करता है वह एक जागीरका मालिक है और जो पेशेवर है वह अच्छी आय और प्रतिष्ठा-का पदाधिकारी है। पर हमें अपने काममें अच्छी तरह और परिश्रमपूर्वक लगे रहना चाहिये। यदि हम परिश्रमी है तो

हमें कभी भूखों मरनेकी नौबत न आवेगी । ....याद रक्खो, परिश्रम करनेसे ऋण घटता है और हाथ पर हाथ रखकर बैठनेसे बढ़ता है। यदि तुम किसी बड़ी सम्पत्तिके उत्तराधिकारी नही हो तो कोई चिन्ता नहीं, क्योंकि परिश्रम ही सौभाग्यका जनक है और परिश्रमीको ईश्वर सब कुछ देता है। ... . आज परिश्रम करो, न जाने कल तुम्हारे मार्गमें कितनी रुकावटें आ पड़ें। एक ' आज ' दो ' कल ' के बराबर है। जो काम तुम आज कर सकते हो उसे कलके लिये मत छोडो। . . ऐसी दशामें जब कि तुम्हें अपने, अपने परिवार, अपने समाज और अपने देशके लिये बहुत कुछ करना है, तुम कभी हाथ पर हाथ रखकर सुस्त न बनो। . तुम्हें बहुत कुछ करना है और सम्भव है कि तुम्हारे पास यथेष्ट साधन न हों, तोभी तुम दृढतापूर्वक काममें लग जाओ और तब तुम देखोगे कि उसका कैसा अच्छा परिणाम होता है। रस्सीकी निरन्तर रगड़से पत्थर घिस जाता है, निरन्तर परिश्रम करके कीडा भी पत्थरमें घर बना लेता है और लगातार आघात पडनेसे बड़े बड़े पेड कटकर गिर पडते हैं। " एक दूसरे विद्वानका कथन है–" संसारमें कुछ भी समझ रखनेवाला कोई मनुष्य ऐसा नही है जिसमें सत्कर्म्म करनेकी शक्ति न हो । क्या तुम कह सकते हो कि संसारमें एक भी ऐसा साधारण किसान, मजदूर या कारीगर है जिसकी बुद्धि और ज्ञान तुमसे बढ़कर है ? नाचरंग और सैर तमाशेमें फँसे रहनेवाले निकम्मे और अकर्मण्य मनुष्य योग्यता और बुद्धिके अभावका बहाना नहीं कर सकते। मनुष्योंमें योग्यताका अभाव नही है, अभाव है निश्चित उद्देश्यका । अथवा यों कहिये कि फल-सिद्धिकी शक्तिकी कमी नहीं है; कमी है केवल परिश्रममें मन लगानेकी । "

जो लोग सफल-मनोरथ होना चाहते हैं, उन्हें यह आशा कभी

न रखनी चाहिये कि कोई ऐसा जादू या मन्तर हाथ आ जायगा जिससे वे विना परिश्रम किये ही कार्य्य सिद्ध कर सकेंगे। गुरु गोविंदसिंह और शिवाजीने हाथ पैर बाँधकर इतनी बड़ी शक्तियोंको जन्म नहीं दिया था। भारतवासियोंके हृदयमें नवीन जागृति उत्पन्न करनेके लिये महात्मा महादेव गोविन्द रानडे आरामसे मसनद पर पड़े नहीं रहते थे। बड़े बड़े धनवानों और व्यापारियोंने आसमानकी तरफ मुहँ करके धन एकत्र नहीं किया है। विद्वानों और धनवानोंके पास जाकर पूछिये कि वे किस प्रकार अपने पद पर पहुँचे हैं। उनके उत्तरके शब्द भले ही एक दूसरेसे भिन्न हों, पर अभिप्राय सबका एक ही होगा। सफलतातक पहुँचनेके लिये आपको कोई ऐसी सीधी बढ़िया सडक नही मिल सकती जिस पर आप दौड़ते हुए चले जायँ। सफलता देवीके मन्दिरका मार्ग, बदरिकाश्रमके मार्गकी तरह, बड़ा ही संकीर्ण, बीहड, दुर्गम और कंटकाकीर्ण है। उसमें बहुत ही सँभाल सँभालकर कदम रखना पड़ता है और इसीमें यात्रीके धैर्य्य और साहसकी परीक्षा होती है। एक बार एक आदमीने दूसरेसे कहाः–"मै चाहता हूँ कि मै भी तुम्हारे समान भाग्यवान् बन जाऊँ।" उसने उत्तर दिया–"हाँ, तुम्हारा तात्पर्य्य धैर्यपूर्वक निरन्तर परिश्रम करनेसे है।"

प्रत्येक महान् पुरुषके जीवन-चरितसे हमें यही शिक्षा मिलती है कि सफल-मनोरथ होनेके लिये सबसे पहले हमें अपने कर्त्तव्योंका पालन करना चाहिये। यह कार्य्य देखनेमें भले ही सरल जान पड़े, पर वास्तवमें उसका करना बहुत ही कठिन है। इस उपायको जानते हुए भी मनुष्यके लिये उससे लाभ उठाना बहुतही दुस्साध्य है। कर्तव्यपालन करनेमें हमें अपनी अनुचित इच्छाओंको रोकना पड़ता है, अनेक प्रकारकी कठिनाइयाँ और विपात्तियाँ झेलनी पडती हैं और सब प्रकारसे अपने आपको वशमें रखना पड़ता है। इतना सब कुछ करके भी जब किसी कारणवश अथवा

विशेष अवस्थामें हम अकृतकार्य्य होते हैं तो हमारा जी टूट जाता है, हमारे खेद और कष्टका वारापार नही रहता । एक विद्वान्ने तो अकृत-कार्य्यतासे होनेवाले दुःखको ' नरकयातना ' कहा है । और इसमें सन्देह नहीं कि जब हम दिन रात कठिन परिश्रम करके अपना उद्देश्य सिद्ध कर लेते हैं तो उस समय हमें स्वर्ग-सुखका ही अनुभव होता है । पर अकृतकार्य्य होनेपर हमें कभी हताश या निरुत्साह नही होना चाहिये, वरन् उस अकृतकार्य्यताका मुख्य कारण ढूँढ़ निकालना चाहिये और उस कारणको दूर करके पुनः अपने प्रयत्नमें नये उत्साहसे लग जाना चाहिये । याद रहे, विफलतासे घबरानेवाला कभी किसी कार्य्यमें सफलता नहीं प्राप्त कर सकता । संसारमें एक ही बार प्रयत्न करके बहुत बडी सफलता प्राप्त करनेके उदाहरण बहुत ही कम मिलेंगे । अधिकाश उदाहरण ऐसे ही होंगे जिनमें बहुत सी विफलताएँ ही सफलताके आधार-स्तंभ हुई हैं । उद्योगी और साहसी मनुष्य सफलताके उच्च शिखर पर चढ़नेके लिये विफलताओंसे सीढ़ियोंका काम लेते है और अकर्मण्य मनुष्य उनसे घबराकर जहाँके तहाँ रह जाते है ।

सफलता प्राप्त करनेके लिये हमें पहले अपना उद्देश्य निश्चित करनेकी आवश्यकता होती है और यह उद्देश्य निश्चित करनेमें हमें बुद्धिमत्तासे काम लेना चाहिये । उद्देश्य स्थिर करते समय हमें अपनी परिस्थिति और साधनोंका पूरा पूरा ध्यान रखना चाहिये और अपनी उच्चाकाक्षाओंको परिमित रखना चाहिये । यदि हम इस सिद्धान्तको भूल जायँगे और झोंपड़ेमें लेटकर महलोंके स्वप्न देखेंगे तो संसार हमारी मूर्खता पर हँसेगा और हमें पागल कहेगा । यहाँ पर यह आपत्ति की जा सकती है कि बड़े बड़े आविष्कर्त्ताओंके प्रारम्भिक प्रयत्न देखकर लोग हँसते और उन्हें पागल समझते थे; अतः हमें लोगोंके कहने सुननेकी

ओर ध्यान न देना चाहिये। पर यह बात विद्या और विज्ञानसम्बन्धी खोजोंके लिये ही अधिक उपयुक्त हो सकती है, सांसारिक वैभव और सम्पत्ति प्राप्त करनेके सम्बन्धमें नही। यदि हमारी उच्चाकाक्षा बहुत बढ़ी चढ़ी और असम्भव या पागलपनकी सीमातक पहुँची हुई हो और हम किसी प्रकार उससे पीछा न छुड़ा सकें तो हमें उचित है कि उसके कुछ विभाग कर ले। करोड़ रुपये पैदा करनेकी इच्छा रखकर केवल दस लाख रुपये पैदा करना अवश्य ही अकृतकार्य्य होना है। इसलिये हमे पहले ही केवल दस लाखकी आशा रखकर अपने काममें लगना चाहिये और जब हम एक बार दस लाख रुपये उपार्जित कर लें तो फिर करोड रुपयेको अपना लक्ष्य बनाना चाहिये।

हम लोग प्राय: देखते हैं कि बहुत ही साधारण बुद्धिके मनुष्य अच्छा धन या नाम पैदा कर लेते है और उनसे अधिक बुद्धि या विद्याके लोग मुहँ ताकते रह जाते हैं। इसका मुख्य कारण यही है कि वे लोग अपनी आवश्यकताओ और इच्छाओंको सीमाबद्ध रखते हैं और शीघ्र ही सफलता प्राप्त कर लेते है। जो मनुष्य एक घोड़े पर सवार होता है वह भली भाँति अपनी यात्रा समाप्त कर लेता है, पर जो सरकसवालोंकी देखादेखी दो घोड़ों पर सवार होना चाहता है वह तुरन्त जमीन पर गिर पड़ता है और उसके हाथ पैर टूट जाते हैं। जिन लोगोंकी इच्छाएँ उनके साधनोंसे बढ़कर होती हैं और जिनके उद्देश्य उनके विचारोंसे लम्बे चौड़े होते हैं उनकी सबसे अच्छी पहचान यह है कि वे स्वयं कभी कोई बड़ा काम नही करते। वे दिनमें जब घरसे बाहर निकलते है तो उन्हें किसी अच्छे साधु, महात्मा या सिद्धसे मिलने और रसायन बनानेकी चिन्ता लगी रहती है और जब रातको बिस्तर पर लेटते है तो छतकी तरफ रुपयोंकी थैलियाँ गिरनेकी आशासे देखते रहते है। कुछ लोग ऐसे भी होते है जो अपने बाहुबलसे भी

थोड़ा बहुत काम कर लेते हैं; पर उनका सारा जीवन बड़ी ही चिन्ता और निराशामें बीतता है । ऐसे मनुष्योंको यदि दुर्भाग्यवश अधिक बकने और कोरी डींगें हॉकनेका रोग हुआ तो फिर वे किसी अर्थके नहीं रह जाते । संसारमें ऐसे मनुष्य बहुत मिलेंगे जो यदि अपना सारा दिन लोगोंको अपनी उच्चाकांक्षाएँ और लंबी चौडी इच्छाएँ सुनानेमें ही न बिताते तो वे अपने जीवनका थोड़ा बहुत सदुपयोग अवश्य कर सकते थे और अधिक उत्तमतासे अपनी जीविकाका प्रबन्ध कर सकते थे । ऐसे लोगोंके जीवनसे हमें बहुत कुछ शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये ।

अपना उद्देश्य स्थिर करते समय हमें इस बातका भी पूरा ध्यान रखना चाहिये कि एक मात्र धन ही उसका आधार न हो, एकान्त वैभव ही उसकी भित्ति न हो । सुख वृद्धिका सेहरा केवल धनकेही सिर नही बँधा है । उत्तम विचार, परिवार और समाजके लोगोंके साथ प्रेम, दीन दुखियोंकी सहायता, अपने कर्त्तव्योंका ज्ञान आदि अनेक ऐसी बातें हैं जो धनकी अपेक्षा कही अधिक शुभ और प्रसन्न तथा सन्तुष्ट करनेवाली है । एकान्त धनकी उपासना दूसरोंके लिए छोड़ दो, तुम अपने जीवन-को यथार्थ और सार्थक बनानेका उद्योग करो । यही वास्तविक सफलता है । धनकी बहुत अधिक लालसा मनुष्यको नीचे गिरा देती है, उसे उठते बैठते, सोते जागते धनका भूत सताया करता है । वास्त-विक सुख उससे कोसों दूर रहता है । हमारा अभिप्राय यह नही है कि लोग धनसे एकदम विरक्त हो जायँ । जो धन ईमानदारी, नेकनीयती और दूसरे अच्छे उपायोंसे एकत्र किया जाता है वही परोपकार और लोकोन्नति आदिमें लगकर हमें अधिक सुखी भी कर सकता है । इस लिये यदि हमारा लक्ष्य धनपर ही हो तो वह भी इसी दृष्टिसे होना चाहिये । पर साथ ही हमारा यह विश्वास अवश्य है कि शुद्ध, सत्यनिष्ठ और उच्च आशयोंवाला मनुष्य कभी धन-प्राप्तिको सच्ची सफलता न समझेगा ।

सफलता और उसकी साधनाके उपाय।

संसारमें प्रत्येक मनुष्यका कुछ न कुछ कर्तव्य हुआ करता है और उसके पास उस कर्त्तव्यके पालनके साधन भी होते हैं। अतः किसी मनुष्यको इस बातकी कभी शिकायत न करनी चाहिये कि उसके लिये सफलता प्राप्त करना असम्भव है। अक्सर लोग यह कहते हुए देखे जाते हैं कि हमें कोई काम तो मिलता ही नहीं, हम उन्नति कैसे करें और अपनी योग्यता किस प्रकार दिखलावें? पर यदि वास्तविक दृष्टिसे देखिये तो जान पडेगा कि ऐसे लोगोंने काममें लगनेका कभी कोई सच्चा प्रयत्न ही नहीं किया। हम इस बातको स्वीकार करते हैं कि आजकल साधारण पढ़े लिखे लोगोंको नौकरी पानेमें बड़ी कठिनाइयाँ होती हैं, और इन्हीं कठिनाइयोंकी लोग शिकायत भी करते हैं। पर कोई कारण नहीं है कि हम केवल नौकरीके लिये ही जान दें और जीविका-निर्वाहके लिये स्वतंत्र व्यापार करनेसे वैसी ही घृणा करें जैसी कि वास्तवमें नौकरीसे होनी चाहिये। उद्योगी, साहसी और परिश्रमी मनुष्योंके लिये सारा संसार खुला पड़ा है। जो मनुष्य अपना कर्त्तव्य भलीभाँति पालन कर सकता है उसके लिए ससारमें किसी तरहकी कमी नही है, कमी केवल अपनी योग्यताकी है। योग्य मनुष्यको कामके लिये दूर जानेकी आवश्यकता नहीं होती। हाँ, यदि वह सीधा और उचित मार्ग छोड़कर दाहिने बाएँ मुडेगा तो अवश्य चूक जायगा। ऐसी अवस्थामें दुनियाकी शिकायत करना बिलकुल व्यर्थ है। कुछ लोग प्रायः कहा करते हैं कि दुनियामें रहना दिनपर दिन कठिन होता जाता है; हमारे ऐसे लोगोंकी अब गुजर नहीं। मानो यदि वे आजसे पाँच सौ वर्ष पूर्व जन्म लेते तो बड़ा भारी राज्य ही स्थापित कर देते। ऐसी बातें करनेसे बढ़कर और कौन सी मूर्खता हो सकती है? ईश्वरने हमें जिस कालमें उत्पन्न किया है, हमें उसीमें अपनी योग्यता दिखलानी चाहिये, उसीमें अपना कर्त्तव्य पालन

करना चाहिये । भूत या भविष्य काल पर हमारा कोई अधिकार नहीं है। यदि समय और संसार आगेसे कठिन हो गया है तो हमें अपने आपको भी उसीके अनुकूल बना लेना चाहिये । यदि हम ऐसा न कर सकेंगे तो समय और संसार तो हमारे लिये अपनी गति रोकेंगे ही नहीं, हम अवश्य पिछडे रह जायँगे । संसार और समयको अपने अनुकूल बनानेकी इच्छा रखना पागलपन है और स्वयं उनके अनकूल बननेका प्रयत्न करना बुद्धिमत्ता है । जो मनुष्य वर्तमान समयमें सफलता नहीं प्राप्त कर सकता, वह न तो भूत-कालमें ही कुछ कर सकता था और न भविष्य कालमें ही कुछ कर सकेगा; क्योंकि उसमें कर्त्तव्य-परायणताकी कमी है, कार्य्य-पटुताका अभाव है ।

कुछ लोगोंका विश्वास है कि यदि उपयुक्त अवसर पर मनुष्य कार्य्य आरम्भ करे तभी वह सफलता प्राप्त कर सकता है, अन्यथा नहीं । इसी लिये कुछ लोग ऐसे अवसरोंकी ताक लगाये बैठे रहते है । कभी कभी तो ऐसा भी होता है कि अवसर आता है और निकल जाता है, लोग ताक लगाये बैठे ही रह जाते है । हम मानते है कि उपयुक्त अवसरसे हमारे कार्य्यमें बहुत सरलता हो जाती है और हमें अपनी योग्यता प्रदार्शित करनेकी बहुत अच्छी सन्धि मिलती है । पर इसका यह तात्पर्य्य नहीं होना चाहिये कि जबतक कोई उपयुक्त अवसर न आवे तबतक हम कोई काम ही न करें । यदि सच पूछिये तो अधिक अवसर काम करनेवालोंको ही मिलता है, हाथ पर हाथ रखकर बैठनेवालोंको नहीं । इस समय जो काम मिले, हमें उसीमें लग जाना चाहिये । संसारमें बहुत सी चीजें ऐसी हैं जो हमारे ध्यानमें केवल इसी लिये नहीं आतीं कि हम उनकी ओर देखते नहीं । एक बड़े विद्वान्का कथन है–" हमारा जन्म विश्वकी जटिल समस्याकी मीमांसा करनेके लिये नहीं बल्कि अपना कर्त्तव्य ढूँढ़ निकालनेके लिये हुआ है ।"

सफलता और उसकी साधनाके उपाय।

ऊपर कहा जा चुका है कि संसारमें प्रत्येक मनुष्यका कुछ न कुछ कर्त्तव्य हुआ करता है। इसी प्रकार यह भी कहा जा सकता है कि प्रत्येक मनुष्य किसी न किसी विशेष कार्य्यके लिये उपयुक्त हुआ करता है। इस लिये जीवन-यात्रा आरम्भ करनेसे पहले अर्थात् बाल्यावस्थाकी समाप्ति पर ही प्रत्येक व्यक्तिके लिये उसकी रुचि और स्वभावके अनुकूल कार्य्य-का निश्चय हो जाना चाहिये। युवा पुरुषोंके लिये यह कार्य्य बड़े महत्त्वका है। संसारमें ऐसे लोग बहुत कम होते हैं जो सभी प्रकारके कार्य्य उत्तमतापूर्वक कर सकें; अधिकांश लोग ऐसे ही हैं जिनकी प्रवृत्ति और रुचि किसी विशेष कार्य्यकी ओर हो। संभव है, कुछ लोग ऐसे भी हों जिनकी कोई निश्चित रुचि न हो, ऐसे लोग आरम्भमें जिस कार्य्यको हाथमें लेते है उसीमें किसी न किसी प्रकार उनका जीवन बीत जाता है। इसलिये माता पिताका यह प्रधान कर्त्तव्य होना चाहिये कि वे अपने लड़कोंकी रुचिका ध्यान रखकर उसीके अनुकूल उन्हें शिक्षा दिलवावें। सम्भव है कि अपरिपक्व बुद्धिके कारण युवकोंकी रुचि आगे चलकर कुछ अंशोंमें हानिकारक प्रमाणित हो, पर वह हानि अपेक्षाकृत कम ही होगी। इस हानिसे बचनेके लिये यह आवश्यक है कि युवकोंकी रुचि और कार्य्यों आदि पर विशेष ध्यान रक्खा जाय, और यदि उनकी प्रवृत्ति किसी विशेष कार्य्यकी ओर न जान पड़े तो उन्हें अच्छे कार्य्यमे लगा दिया जाय। अच्छे कार्य्यसे हमारा तात्पर्य किसी ऐसे व्यापार या पेशे आदिसे है जो प्रतिष्ठित हो, जिसमें बहुत अधिक शारीरिक श्रम न करना पड़े, जिसमें जीविका-निर्वाहके लिये यथेष्ट आय हो सके, और जो अन्य दृष्टियोंसे उपयुक्त हो। नहीं तो निराशा और विफलताकी ही अधिक सम्भावना होगी, आशा और सफलताकी कम।

हमें यह बात भूल न जानी चाहिये कि सफलताके साथ स्वास्थ्यका

भी बहुत कुछ सम्बन्ध है । एक हृष्ट पुष्ट और स्वस्थ मनुष्य जितने दृढ़तापूर्वक कर्त्तव्यके पालनमें निरन्तर लगा रहता है उतना एक दिन रात कराहनेवाला रोगी मनुष्य नही रह सकता । सफल-मनोरथ होनेके लिये स्वस्थ होना बहुत आवश्यक है । यदि शरीर स्वस्थ हो और मन किसी अंशमें दुर्बल भी हो तो किसी प्रकार काम चल सकता है । पर शरीरकी अस्वस्थताके कारण अधिक कठिनाइयोंकी संभावना हो सकती है, इसलिये अपना व्यापार या पेशा निश्चित करनेसे पहले अपनी शारीरिक और मानसिक शक्तिका भी ठीक ठीक विचार कर लेना चाहिये । जिन लोगोंकी मानसिक शक्ति निर्बल और शारीरिक शक्ति अधिक सबल हो वे व्यापारके लिये अधिक उपयुक्त होते हैं और जिनका शरीर दुर्बल और मास्तिष्क पुष्ट हो वे विद्या, बुद्धि और विज्ञान आदिके कार्य्यों के लिये अधिक उपयोगी होते हैं । यदि हममें शरीर या मन सम्बन्धी कोई प्राकृतिक दोष या अभाव हो तो हमें यथासाध्य उसे दूर करनेका प्रयत्न करना चाहिये और यदि ऐसा करना असाध्य हो तो हमें अपनी प्राप्त शक्तियोंसे ही काम लेना चाहिये । गोसाईं तुलसीदासजीने बाँहमें बहुत अधिक पीड़ा होने पर भी हनुमानबाहुक तथा अन्य कई काव्य लिखे थे । सूरदासने नेत्रहीन रहकर ही इतना काव्यामृत बरसाया था । रणजीतसिंहने काने होकर और तैमूरने लँगड़े होकर ही इतने बड़े बड़े राज्योंकी सृष्टि की थी ।

यद्यपि सफलतामें शारीरिक स्वस्थताकी आवश्यकता होती है, तथापि अधिकाश प्रमाण इसी बातके मिलते हैं कि प्रायः विचक्षण बुद्धि-वालोंको ही अपने प्रयत्नोंमें श्रेय मिलता है । यदि हमसे तीव्र बुद्धिवाले और दूरदर्शी लोग सब कार्योंमें हमसे आगे बढ़े रहें तो हमें आश्चर्य न करना चाहिये । बल्कि वास्तविक आश्चर्य्यका स्थल तो वही है जब कि हम उन्हें पीछे छोड़कर उनसे आगे बढ़ जायँ । जिन लोगोंने

अपनी बुद्धिमत्ता और दूरदर्शिता आदि गुणोंके कारण प्रतिष्ठित पद पाया हो, उनके बतलाये हुए 'परिश्रम' 'धैर्य्य' 'साहस' 'कर्त्तव्यपरायणता' 'उत्तम आचरण' तथा सफलता प्राप्तिके इसी प्रकारके अन्य अनेक मूलमंत्रोंसे यदि हम किसी प्रकारका लाभ न उठा सकें तो इसमें भी आश्चर्य्यकी कोई बात नहीं है। इसलिये हमें यही सिद्धान्त स्थिर करना चाहिये कि सच्ची सफलताके पूरे अधिकारी वही लोग होते है जिनकी बुद्धि तीव्र, विचार-शक्ति प्रबल और दूर-दर्शिता असाधारण होती है।

अब प्रश्न यह उठता है कि जिनकी बुद्धि और विचार-शक्ति साधारण या अल्प हो वे अपना जीवन किस प्रकार सफल और श्रेष्ठ बनावे। ऐसे लोगोंसे हमारा नम्र निवेदन है कि वे यथासाध्य अपनी बुद्धिको सबल और विचारोंको उन्नत बनानेका प्रयत्न करें। शिक्षा, सदाचरण और अच्छे लोगोंकी संगति आदि अनेक बाते ऐसी है जिनकी सहायतासे हमारी मानसिक निर्बलता बहुत कुछ दूर हो सकती है। इसके अतिरिक्त यह बात भी ध्यान रखने योग्य है कि ईश्वरने मनुष्यको जितनी शक्तियाँ दी है उन सबका, बहुत ही विशेष अवस्थाओंको छोड़कर, अच्छा सुधार और सस्कार हो सकता है। यह एक साधारण नियम है कि मनुष्य अपनी जिस शक्तिसे जितना ही अधिक काम लेता है वह शक्ति उतनी ही संस्कृत, पुष्ट और उपयोगी हो जाती है और जिस शक्तिका व्यवहार कम हो वह आप ही आप मन्द पड़ जाती है। एकहीमें मिले हुए सैकडों आदमियोंके हजारों कपड़ोंको अच्छेसे अच्छा राजनीतिज्ञ या कवि उतनी सरलतापूर्वक अलग नही कर सकता जितनी सरलतापूर्वक एक धोबी कर सकता है। एक साधारण गड़रिया जितनी जल्दी हजारों भेडोंमें मिली हुई अपनी सेकड़ों भेड़ोंको पहचानकर अलग कर सकता है उतनी जल्दी अच्छेसे अच्छा शतावधानी भी नही कर सकता। न तो

धोबीमें ही कोई असाधारण शक्ति है और न गडरियेमें ही कोई लोकोत्तर गुण। दोनोंने अपनी बुद्धि और स्मरण शक्तिका जिस कार्य्यमें अधिक उपयोग किया है उसीमें वे अधिक दक्ष भी हो गये हैं। इस प्रकार यदि आप भी चाहें तो बराबर काम लेकर अपनी किसी मन्द शक्तिको अधिक तीव्र कर सकते और उससे यथेष्ट लाभ उठा सकते हैं।

यदि आप किसी ऐसे मनुष्यके कार्य्यों पर भली भाँति विचार करें जिसने आपकी समझमें सांसारिक अथवा अन्य कार्य्योंमें अच्छी सफलता प्राप्त की हो तो आपको शीघ्र ही ज्ञात हो जायगा कि उसमें केवल किसी एक निश्चित गुण या शक्तिके अतिरिक्त और कोई लोकोत्तर विशेषता नहीं है। साथ ही यह बात भी ध्यानमें रखने योग्य है कि अधिक विफल-मनोरथ वे ही लोग होते हैं जिनकी कई मानसिक शक्तियाँ अधिक तीव्र होती हैं। साधारण मानसिक बलवाले मनुष्यकी ही प्रवृत्ति व्यापार आदिकी ओर अधिक होती है। जिनकी मानसिक शक्तियाँ अधिक प्रबल होती है उन्हें व्यापार या शारीरिक परिश्रमका और कोई काम नहीं रुचता। ऐसी अवस्थामें कोई मनुष्य यह नही कह सकता कि मेरी योग्यता बहुत ही साधारण है और इसी लिये मै सफलता प्राप्त नहीं कर सकता। क्योंकि आर्थिक दृष्टिसे सफलता बहुधा साधारण योग्यताके लोगोंको ही होती है।

"अनुभवके द्वारा हमें जो सबसे मुख्य शिक्षा मिलती है वह यह है कि विचारशक्ति या योग्यताकी अपेक्षा आचरण पर सांसारिक सफलता अधिक निर्भर करती है, और यही बात प्रायः देखी भी जाती है। इसमें सन्देह नहीं कि कुछ अधिक विचक्षण बुद्धिवाले लोग इस नियमको भंग करते हुए देखे जाते हैं और सफलता प्राप्त करानेवाले अनेक उपायोंकी गणना दोषों या दुर्गुणोंमें ही हो सकती है, तथापि उक्त नियमकी सत्यतामें सन्देह नहीं किया जा सकता और ज्यों ज्यों सभ्यता बढ़ती जाती

है त्यों त्यों उसकी यथार्थता प्रकट होती जाती है।" यह मत एक बड़े विद्वान् का है और इसकी सत्यतामें किसी प्रकारका सन्देह नही किया जा सकता। अत्यन्त दूषित और निन्दनीय उपायोंसे धन संग्रह करके चैनसे जीवन बितानेवाले दो चार दस आदमी हर शहरमें मिल जायँगे, पर अधिकांश लोग ऐसे ही होंगे जिन्होंने इच्छा और विचार-शक्ति, साहस और धैर्य्य आदि गुणोंके कारण ही सफलता पाई हो, और ये सब गुण आचरणकी व्याख्याके अन्तर्गत ही आ जाते हैं। जो कोठीवाल सदासे बेईमानी करता आया हो उसका कारबार बहुत अधिक दिनोंतक नही चल सकता। जिस मनुष्यका हृदय कलुषित हो और जो दूसरोंका धन अपहरण करनेके लिये सदा तैयार बैठा रहता हो उसकी आत्मा उत्तम फलों की प्राप्तिमें कभी उसकी सहायक नहीं हो सकती, उलटे उसके कामोंमें अड़चन डाल सकती है। हम यह तो नही कह सकते कि व्यापारिक सफलताका मूल केवल पूरी ईमानदारी ही है, पर यदि वास्तवमें ऐसा ही हो तो वह बहुत अधिक प्रशंसनीय और श्रेष्ठ है। जो कर्ज़दार अपने कर्ज़का आधा रुपया आज चुका दे और बाकी आधा रुपया आजसे दस बरस बाद ब्याज-सहित चुकावे उसकी प्रशंसा लुच्चेसे लुच्चा व्यापारी भी करेगा। कार-बारमें लेन देनकी सफ़ाईसे जितना अधिक लाभ होता है उतना बे-ईमानीसे नहीं। एक अनुभवी भारतीय व्यापारीका उपदेश है—" अपना ऋण ठीक समय पर चुका दो, सारे संसारके धन पर तुम्हारा अधिकार हो जायगा।" जो मनुष्य किसीका धन लेकर उसे वापस करना जानता है उसे कभी किसी चीजके अभावका कष्ट नहीं सहना पड़ता।

शुद्ध आचरण स्वभावतः दूसरोंकी श्रद्धा, भक्ति और प्रीति अपनी ओर खींचता है। यदि हम किसी बड़े नेताकी आचरणभ्रष्टताका हाल सुनते हैं तो हमारे हृदयमें उसके लिये वह उच्च स्थान और भाव

नहीं रह जाता जो कि उसके शुद्धाचारी समझनेके समय था। यदि हमें किसी बड़े विद्वान्के मद्यप (शराबी) होनेका प्रमाण मिल जाय तो हमारी दृष्टि में उसका आदर कम हो जाता है। यह मनुष्यका स्वभाव ही है, इसे कोई बदल नहीं सकता। बहुतसे लोग ऐसे होंगे जिन्हें कोई केवल इसी लिये नौकर नहीं रखता कि वे शराबी है, जूएके शौकीन है, कभी कभी मुजरा सुनते है, या कमसे कम जमकर कभी कोई काम नही कर सकते, ठीक समय पर हाजिर नही होते, काम–चोर है, मालिकको जवाब दे बैठते है, या बहुत अधिक गप्पें लडानेके रोगी हैं। ये सब दोष आचरणकी हीनताके ही द्योतक है और इनसे मनुष्यकी उन्नतिमें बड़ी भारी बाधा होती है। जी लगाकर काम न करना भी वैसा ही दोष है जैसा कि गँजेडी, शराबी या जुआरी होना। ऐसे आदमी सचमुच सफल होनेके अयोग्य होते हैं।

और आगे चलकर हम देखते हैं कि भिन्न भिन्न कार्य्यों, व्यापारों और पेशोंमें सफलताकी मात्रा भी एक दूसरेसे भिन्न होती है। अर्थात् कुछ कार्य्योंमे औरोंकी अपेक्षा शीघ्र और अधिक सफलताकी सम्भावना होती है। यदि सफलताका अधिक व्यापक अर्थ लिया जाय तो यह सिद्धान्त निरर्थक हो जाता है, क्योंकि साधारणतः यही कहा जाता है कि प्रत्येक मनुष्य प्रत्येक समय और कार्य्यमें परिश्रम करके पूर्ण सफलता प्राप्त कर सकता है। पर फिर भी यह मानना ही पड़ेगा कि कुछ कार्य्योंमें सफलताका विशेष अवसर मिलता है। पानकी दूकान करनेकी अपेक्षा पंसारीका काम करने, और लेमनेड और शरबत बेचनेकी अपेक्षा बिसातबानेका काम करनेमें शीघ्र सफलता होती देखी गई है। आर्थिक दृष्टिसे एक लेखक या सम्पादकको सफलताका उतना अच्छा अवसर नही मिलता, जितना कपड़े या गल्लेके किसी व्यापारीको। अधिकांश नौकरी पेशेवाले सदा ज्योंके त्यों बने रह जाते हैं और उनसे कम

बुद्धि और ज्ञानवाले साधारण व्यापारी देखते देखते अच्छी हैसियत पैदा कर लेते हैं। यह बात ठीक है कि व्यापारीकी अपेक्षा नौकरी करनेवाला अपने सिर कम झंझटें लेता है और थोड़ी जोखिम सहता है और संभवतः इसी लिये सफलतासे भी वंचित रहता है। यह बात भी ध्यान रखने योग्य है कि विद्वानों और विद्याकी सहायतासे जीविका निर्वाह करनेवालोंको आर्थिक दृष्टिसे अपेक्षाकृत बहुत ही कम सफलता मिलती है। बात यह है कि विद्या-व्यसनियोंको न तो धनकी अधिक परवाह ही होती है और न धन उपार्जित करनेकी अक्ल। और उनकी दरिद्रताका प्राय: यही मुख्य कारण हुआ करता है। अनेक प्रकारसे लोगोंसे रुपया खींचनेकी कल—लखपती लालची बैरिस्टरों और डाक्टरोंकी गणना सच्चे विद्या-व्यसनियोंमें नही हो सकती, हाँ उन्हें विद्याके व्यवसायी अवश्य कह सकते हैं।

इन पृष्ठोमें कही हुई सब बातोंका मुख्य साराश यही है कि यदि किसी मनुष्यमें साधारण योग्यता हो, उसका शरीर स्वस्थ हो और वह निरन्तर विचारपूर्वक उद्योग करता चला जाय तो साधारणत: उसे अच्छी सफलता प्राप्त हो सकती है। इसके अतिरिक्त समयका सदुपयोग, निश्चित उद्देश्य, दृढता, मितव्यय, सदाचरण, सहिष्णुता, सुशीलता, दूरदर्शिता, बुद्धिकी विचक्षणता आदि अनेक ऐसी बातें हैं जो समय समय पर मनुष्यको उन्नत, अग्रसर और सफल बनानेमें बहुत कुछ सहायक होती हैं और अगले पृष्ठोंमें इन्हीं सबका सविस्तर वर्णन किया गया है।

पहला अध्याय ।

समयका सदुपयोग ।
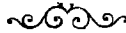
जीवनकी निःसारता—समयका नाश—समयका सदुपयोग ही मनुष्यको सर्वगुणसम्पन्न बनाता है—व्यवस्था—समय और अवसर—एक उदाहरण—बाल्यावस्थाके संस्कार—कुछ उपयोगी सिद्धान्त—प्रत्येक बातसे कुछ शिक्षा लो—सवेरे दूकान खोलनेवाले दूकानदार—दोनोंकी तुलना—समयकी पाबन्दी ।

यदि संसारमें कोई ऐसा पदार्थ है जो मनुष्यके हिस्सेमें बहुत ही थोड़ा आया है और जिसका सबसे अधिक अपव्यय और नाश होता है, तो वह समय ही है । जब हम इस बातका ध्यान करते हैं कि जीवनमे हमें कितना कम समय मिला है तो हमें उसके अपव्यय पर बडा ही आश्चर्य्य होता है । और बातोंमें तो हम लोग बहुत कुछ सचेत रहते है पर समयको बड़ी बुरी तरहसे नष्ट करते हैं । ऐसे लोग बहुत ही कम हैं जो इस बातका ध्यान रखते हों कि उनका कितना समय आवश्यक और उपयोगी कामोंमें लगता है और कितना हँसी दिल्लगी, सैर तमाशे और दूसरे व्यर्थके कामोंमें नष्ट होता है । यदि आप कभी अपने समयके सद् और असद् उपयोगका हिसाब लगावें तो सिवा लज्जित और दुःखी होनेके आपसे और कुछ भी न बन पड़ेगा ।

सब लोग कहा करते है कि दुनिया एक सराय है, जीवन पानीका बुलबुला या स्वप्न है, आदमीकी जिन्दगीका कोई ठिकाना नहीं, आदि आदि । अधिकांश कवियोंने भी जीवनकी अल्पताके ही गीत गाये हैं और प्रकारान्तरसे समयका महत्त्व ही सिद्ध किया है । पर तो भी

लोगोंको ज्ञान नही होता, वे समयका कोई मूल्य नहीं समझते । यह सब देखते हुए हमें यही समझना पड़ता है कि बड़े बड़े विद्वानों और महात्माओंने हमें लाभ पहुँचानेके जो प्रयत्न किये थे वे सब व्यर्थ हुए, शताब्दियोंका प्राप्त किया हुआ अनुभव हमें कुछ भी लाभ न पहुँचा सका। संसारके अधिकांश लोगोंको देखते हुए यही कहना पड़ता है कि न तो अबतक उन लोगोने अपना उत्तरदायित्व समझा है और न समयका मूल्य। इसके दो कारण हो सकते हैं; एक तो विचारोंकी त्रुटि और दूसरे अपने कर्त्तव्योंके ज्ञानका अभाव। ये दोनों कारण बहुत-से अंशोंमें एक दूसरेसे मिले हुए हैं और दोनोंका फल या परिणाम भी सम्मिलित ही है। यह विश्वास करनेको जी नही चाहता कि समय नष्ट करनेवाले लोग इतने अपरिणामदर्शी हो गये हैं कि ऐसे अमूल्य पदार्थका ऐसा दुरुपयोग करें । इसमें सन्देह नही कि ऐसे लोगोंमें न तो उच्च विचार ही होते है और न महान् उद्देश्य ही। उन लोगोंको न तो समयका मूल्य मालूम होता है और न उसके भली भाँति उपयोग करनेका ज्ञान। यदि सच पूछिये तो हम लोग अपने बालकोंको इस बातकी शिक्षा ही नही देते कि अपने वास्तविक धनका उपयोग किस प्रकार करना चाहिये। हम उन्हें भाषा, विज्ञान और कला आदिकी शिक्षा तो अवश्य देते है पर हम उन्हें यह नहीं सिखलाते कि समयको किस प्रकार नष्ट होनेसे बचाना चाहिये ।

पाठशालाको ही लीजिये। बालक वहाँ शिक्षा प्राप्त करनेके लिये जाते है, पर वहीं उनका बहुतसा समय व्यर्थ नष्ट किया जाता है। जब वे घर आते हैं तो वहाँ भी वही दशा उपस्थित रहती है। सवेरे, सन्ध्या, भोजन, या बातचीतके समय कभी इस समयका ध्यान नहीं रक्खा जाता। बालक अपने माता-पिताको प्रायः यही कहते हुए सुनते हैं– "आज हम अमुक कार्य्य करनेको थे, पर नहीं हो सका। आज

हम अमुक परम आवश्यक कार्य्य करना बिलकुल भूल गये । अच्छा, कल देखा जायगा । " पर वह कल कभी नहीं आता । न जाने इस 'कल' ने संसारमें कितनी मूर्खता फैला रक्खी है, कितनोंके प्रण तोड़े हैं और कितने लोगोंका सर्वनाश किया है । रोज एक दिन आता है और बीत जाता है; उसे हम वापस नही ला सकते और न 'आज' बना सकते है । जो दिन बीत गया उसके लिये पश्चात्तापके अतिरिक्त और कुछ भी नही हो सकता । उचित तो यह है कि उसका पीछा छोड़कर हम 'आज'का ध्यान रक्खें और उसे व्यर्थ नष्ट न करें । पर जिस प्रकार शोर कम करनेके लिये सभा समितियो और थिएटरों आदिमें "चुप रहो, चुप रहो" करके ही लोग बहुतसा शोर मचाते हैं, उसी प्रकार बहुतसे लोग बीते हुए समयके लिये पश्चात्ताप करनेमें ही अपना बहुतसा वर्तमान समय भी नष्ट कर देते हैं । पर उचित यह है कि "बीती ताहि बिसारि दे, आगेकी सुधि लेय" को हम अपना मूल सिद्धान्त बनावें और वर्तमान कालके एक एक क्षणका पूरा ध्यान रक्खें, यथासम्भव उनमेंसे किसीको भी व्यर्थ न जाने दें ।

मनुष्य ज्योंही समयकी उपयोगिता समझने लगता है त्योंही उसमें महत्ता, योग्यता आदि अनेक गुण आने लगते हैं । मनुष्यमें चाहे कितने ही गुण क्यों न हों पर जब तक वह समयकी कदर करना न सीखे, उपस्थित अवसरोंका उपयोग न करे, तबतक उसे कोई लाभ नहीं हो सकता । यदि सच पूछिये तो समयका दुरुपयोग करनेवालोंको कभी अच्छे अवसर मिल ही नही सकते । जिस समयको मनुष्य व्यर्थ गँवाता है उसी समयमें प्रयत्न करके वह बहुत कुछ सफलता प्राप्त कर सकता है । जो मनुष्य अपना कर्त्तव्य पालन करना चाहता हो—जो युवक जीवनमें सफलता प्राप्त करनेका इच्छुक हो, उसे सबसे पहले यही शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये । अपनी योग्यता, शक्ति और

साधनोंकी शिकायत छोडकर उसे यह समझना चाहिए कि समय ही उसकी ' सम्पत्ति ' है और उसीसे लाभ उठानेके लिये उसे प्रयत्नशील होना चाहिए। कितने दुःखकी बात है कि लोगोंको व्यर्थ नष्ट करनेके लिए तो बहुतसा समय मिलता है पर काममें लगानेके लिए उसका एकदम अभाव हो जाता है । बहुतसे लोग ऐसे मिलेंगे जो परोपकारमें हातिमसे भी बढ जाते, सैकड़ों रोगियोकी सेवा शुश्रूषा करते और बहुतोंके कष्ट दूर करते । पर क्या करे, बेचारोंके पास समय नहीं है ! बहुतसे लोग ऐसे भी होंगे जो अपनी बुद्धि और योग्यताके द्वारा बडे बड़े दार्शनिकोंके कान काटते और अच्छे अच्छे विषयोंकी पुस्तकोंके ढेर लगा देते । पर क्या करें उन्हें समय नही मिलता ! यदि आप ऐसे लोगोंकी बातें सुनें तो आप समझेंगे कि उनका सारा समय बड़े ही उपयोगी और आवश्यक कर्त्तव्योंके पालनमें बीत जाता है* । पर वे ' उपयोगी और आवश्यक कर्तव्य ' समयके नाशके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है । समयका दुरुपयोग ही उन्हे समयका इतना दरिद्र बना देता है कि वे जीवन-यात्राका निर्वाह करनेमें नितान्त असमर्थ हो जाते हैं ।

सच तो यह है कि व्यवस्थासे ही समय निकलता है । प्रत्येक कार्य्यके लिए एक निश्चित समय होना चाहिए और हर एक काम अपने

---

* इस अवसर पर लेखकको अपने एक ऐसे मित्रका स्मरण हो आया जो कि पढ़े लिखे और सम्पन्न होनेपर भी कभी किसी प्रकारका काम नहीं करते । एक बार जब वे रास्तेमे मिले तो मैंने शिकायत की कि कभी तुम्हारे दर्शन नहीं होते । उत्तर मिला–" क्या करूं मित्र, बहुतसी झझटें रहती हैं, फुरसत बिलकुल नहीं मिलती " । इधर उधरकी दो चार बातें करनेके उपरान्त मैंने फिर पूछा–"कहो, आजकल करते क्या हो ?"–आप बोले–" कुछ नहीं, यों ही घरपर पड़े रहते हैं । " कहाँ तो–' फुरसत बिलकुल नहीं मिलती ' और कहाँ–' यों ही घरपर पड़े रहते हैं ! '

समय पर होना चाहिए। बिना इसके किसी उत्तम फलकी प्राप्ति नहीं हो सकती। समयका ठीक ठीक उपयोग करनेके लिये हमें उसका उचित विभाग करना चाहिए। हमारा यह तात्पर्य्य नहीं है कि मनुष्य इस प्रकारके बन्धनसे अपने आपको कसकर जकड ले। वास्तवमें मनुष्यको समय पर अपना पूरा अधिकार रखना चाहिए, स्वयं उसका गुलाम न बनना चाहिए। समय पर पूरा पूरा अधिकार रखनेके लिए कुछ निश्चित नियमोंका बना लेना आवश्यक है और उन नियमोंका कभी व्यर्थ और निरर्थक अतिक्रमण न हो। कोई कोई आदमी उतना ही काम केवल एक दिनमें कर लेते है जितना कि और लोग एक सप्ताहमें भी नही कर पाते। विचार करनेसे ज्ञात होगा कि इस भेदका कारण समयका सदुपयोग ही है, उस मनुष्यकी असाधारण योग्यता या बुद्धि नही। कामकाजी आदमीके मुँहसे आप फुरसतका नाम भी न सुनेंगे, क्योंकि उसे फुरसत है ही नहीं। फुरसत केवल निकम्मे और सुस्त आदमियोंको ही होती है, और वह भी काम करनेके लिए नहीं बल्कि गप्पें लड़ाने, इधर उधर घूमने और सैर तमाशे आदिमें जानेके लिए। उन्हें इतनी अधिक फुरसत होती है कि काम करनेका अवसरही नहीं मिलता। फुरसतमें आप ही आप बढ़ जानेकी इतनी अधिक शक्ति है कि यदि उसे दबानेका प्रयत्न न किया जाय तो मनुष्यका सारा जीवनही उसके नीचे दब जाय। जिस मनुष्यको इस प्रकारकी बहुतसी फुरसत हो उसके जीवनको बडा ही दुःखपूर्ण समझना चाहिए। ऐसे मनुष्योंको समयके मूल्य और उसके सदुपयोगकी आवश्यकताका कुछ भी ज्ञान नहीं होता।

संसारका सबसे अधिक उपकार उन्ही लोगोंके द्वारा हुआ है जिन्होंने कभी अपना एक क्षण भी व्यर्थ नहीं गँवाया। ऐसे ही लोग बड़े बड़े कवि, महात्मा, दार्शनिक और आविष्कर्ता हुए है। सर्व साधारण जिस समयका कुछ भी ध्यान नहीं रखते उसी समयमें उन्होंने बड़े बड़े काम

किये है–उन्होंने एक क्षण भी व्यर्थ नहीं जाने दिया। एक महात्माका मत है–"हमें उत्तम अवसरोंके आसरे न बैठना चाहिए बल्कि साधारण समयको उत्तम अवसरमें परिणित करना चाहिए।" और यही सफलता प्राप्त करनेका बहुत बडा सिद्धान्त है।

समयका सदुपयोग ही मानों अवसरका सदुपयोग है। अच्छा कार्य्य करने, उत्तम विषयों पर विचार करने और ज्ञानकी वृद्धि करनेका कोई अवसर कभी हाथसे न जाने देना चाहिए। जो लोग अपने पढ़ने लिखनेकी कोई निश्चित व्यवस्था या प्रबन्ध नहीं कर सकते वे थोड़ी फ़ुरसतके समय ही थोड़ा बहुत पढ़ लिखकर धीरे धीरे अपना ज्ञान भाण्डार बढ़ा सकते है। जिन चीजोंको हम बहुत ही तुच्छ समझकर उनकी अवहेलना करते है उन्हीसे और लोग बहुत अच्छा लाभ उठाते हैं। इस अवसर पर हमें उस परिश्रमी होनहार बालक का ध्यान आता है जिसे एक महाजनके यहाँसे व्यापार करनेके लिए एक मृतप्राय चूहा मिला था। बिल्लीके खानेके लिये वह चूहा एक बनियेको देकर उसने दो मुट्ठी चने पाये थे और वेही चने कुछ यात्रियोंको खिला और पानी पिलाकर उसने कुछ पैसे जमा किये थे। धीरे धीरे उन्हीं पैसोंसे उसने एक छोटा व्यापार आरम्भ किया और कुछ समय बाद लाखों रुपयोंकी सम्पत्ति प्राप्त की। ऋण देनेवाले अपने महाजनको जब वह मृतप्राय चूहेके बदलेमें सोनेका चूहा देने गया तो महाजनने उसकी योग्यता और बुद्धिमत्तासे प्रसन्न होकर अपनी कन्याका विवाह उसीसे कर दिया और उसे अपनी अतुल सम्पत्तिका उत्तराधिकारी बनाया। इतना वैभव उसने केवल एक मृतप्राय चूहेके उपयोगसे पाया था! बहुत ही तुच्छ और निकम्मी चीजोंसे भी कभी कभी बहुत बड़ा काम निकलता है। संसारकी कोई वस्तु इतनी तुच्छ नहीं है कि उसका जरा भी उपयोग न हो सके। जरासा चिथड़ा ऐसे छेदोंको बन्द कर देता है जिनमेंसे हजारों रुपयोंकी

चीजें बह जाती हैं। कभी किसी चीजको व्यर्थ या तुच्छ न समझो, कभी न कभी उससे तुम्हारा बहुत बड़ा काम निकलेगा। फारसीमें एक कहावत है–" दाश्त: आयद बकार।"–रक्खी हुई चीज काम आती है। अँगरेजीकी एक कहावतका तात्पर्य्य है–" किसी चीजको सात बरसतक अपने पास रक्खो, तब तुम्हें उसकी उपयोगिता जान पड़ेगी।" ये सब सिद्धान्त समय पर भी इसी प्रकार प्रयुक्त हो सकते है। जो घंटा आध घंटा तुच्छ समझकर हम व्यर्थ गँवा देते हैं वही हमारे लिये बहुत कुछ उपयोगी भी हो सकता है।

बाल्यावस्थाके सस्कारोंका प्रभाव हमारे भविष्य जीवनपर बहुत कुछ पड़ता है। यदि किसी छोटे वृक्ष पर कोई अक्षर या चिन्ह आंकित कर दिया जाय तो वृक्षके बढ़नेके साथ ही साथ वह अक्षर या चिह्न भी बराबर बढ़ता ही जायगा। इसलिये हमें उचित है कि अपने बालकोंको आरम्भ से ही समयका महत्त्व बतला दें और उन्हें उसका सदुपयोग करनेकी शिक्षा दें। जो बालक आरम्भसे ही समयकी कदर करना न सीखेंगे उनके लिए आगे चलकर समयका मूल्य समझना बहुत ही कठिन हो जायगा। जैसा कि ऊपर कहा गया है। सफलता प्राप्त करनेके लिये समयका महत्त्व जानना और उसका सदुपयोग करना बहुत ही आवश्यक है। समयकी व्यवस्थासे बहुत काम निकलता है। व्यवस्था एक ऐसी चीज है कि जिसके अभावमें बहुतसे गुण व्यर्थ हो जाते हैं और मनुष्यको उलटे दुखी और अपराधी बनना पड़ता है। जिस मनुष्यके सब कार्य्य व्यवस्थित हों उसके कामोंमें अड़चनोंकी बहुत ही कम सम्भावना होती है। चित्तको शान्त और प्रसन्न रखनेमें भी व्यवस्थासे बहुत बड़ी सहायता मिलती है। सब प्रकारकी व्यवस्थाकी अपेक्षा समयकी व्यवस्था बहुत ही आवश्यक और उपयोगी है। मनुष्य समयकी सहायतासे ही, जो चाहे सो कर सकता है। बुद्धिमान् मनुष्य समय-

से लाभ उठाता है और मूर्ख उसीसे हानि सहता है। किसीके लिये वह बड़े कामकी चीज है और किसीके लिये बिलकुल निकम्मी। पर यदि सब लोग उसका यथार्थ मूल्य समझकर उससे ठीक ठीक काम लेने लगें तो संसारके बहुतसे क्लेशोंका शीघ्र ही अंत हो जाय।

इस अवसर पर कुछ ऐसे सिद्धान्तोंका वर्णन कर देना आवश्यक जान पड़ता है, जो कि साधारण युवकोंके लिये बहुत ही उपयोगी है। (क) एक समयमें सदा एक ही काम करो। सरलतापूर्वक बहुतसे काम करनेका सीधा उपाय यही है। जो लोग एक ही समयमें कई काम करना चाहते हैं उनके सभी काम प्राय बिगड़ जाते हैं। (ख) आवश्यक कामोंको तुरन्त कर डालो; उन्हें दूसरे समयके लिये टाल न रक्खो। जो लोग कामोंको टालते जाते हैं उनके बहुतसे काम सदा बिना किये ही पडे रह जाते है और जिनसे कभी कभी भारी हानि भी हो जाती है। कहा है—"काल्ह करनको आज कर, आज करनको अब।" यदि हम कलका काम आज ही न कर डालें तो कमसे कम आजका काम तो जरूर निपटा डालें। कुछ लोग ऐसे अवसरपर "देर आयद दुरुस्तआयद" (देरसे होनेवाला काम अच्छा होता है) वाला सिद्धान्त उपस्थित करते हैं पर यह सर्व्वथा ग्राह्य नही हो सकता। बहुतसे कार्य्य प्रायः ऐसे ही होते है जो थोडे विलम्बसे नष्ट या कमसे कम भ्रष्ट हो जाते हैं। यदि कोई बहुत बड़ा कार्य्य हो और उसके विषयमें सोचने विचारनेके लिये तुम्हें अधिक समयकी आवश्यकता हो तो उस समय विलम्ब करना प्रायः लाभकारी प्रमाणित होता है, कंजूस लोग प्रायः ऐसे छोटे छोटे कामोंको जिनमें कुछ भी खर्च-की आवश्यकता होती है, बिना किसी अन्य आवश्यक कारणके बहुत समयतक टालते चले जाते हैं और इसी बीचमें अपनी भारी हानि भी कर बैठते है। ऐसा करना बड़ी भारी मूर्खता है। (ग) आज

के कामको कल पर कभी मत छोड़ो। जो लोग अपना काम रोज करते चलते हैं उन्हें कभी बहुत अधिक कामकी शिकायत नहीं करनी पड़ती। यदि हम आज अपना काम न करें तो कल हमें दो दिनोंका काम करना पड़ेगा। यदि हम एक ही दिनमें दो दिनोंका काम न कर सके तो और भी कठिनता होगी। सारा क्रम बिगड़ जायगा और एक दिनकी जरा सी सुस्ती या असावधानीसे हमें कई दिनोंतक कठिनता सहनी पड़ेगी। (घ) जो काम स्वयं तुम्हारे करनेका हो उसे दूसरे पर कभी मत छोड़ो। कुछ लोगोंका मत है कि जोकाम तुम स्वयं कर सकते हो उसे दूसरे पर मत छोडो और कुछ लोगोंका सिद्धान्त है कि जो काम तुम दूसरोंसे ले सकते हो वह स्वयं मत करो। बहुत बड़ा काम करनेवालोंके लिए अन्तिम सिद्धान्त ही अधिक उपयुक्त हो सकता है; क्योंकि बहुतसे छोटे छोटे काम वे किसी प्रकार स्वयं नहीं कर सकते। बड़े बड़े कार्य्यालयों और दूसरी संस्थाओंके अधिकारी जब तक साधारण काम दूसरों पर न छोड़ें तब तक वे एक कदम भी आगे नही बढ़ सकते। ऐसे लोगोंका छोटेसे छोटे काम पर पूरी देख भाल रखना ही उस कामको स्वयं करनेके तुल्य हो जाता है। अतः इस सम्बन्धमें यही सिद्धान्त सबसे अधिक उपयुक्त जान पड़ता है कि जो काम आवश्यक और स्वयं तुम्हारे करनेका हो उसे कभी दूसरों पर न छोड़ो। बहुत सम्भव है कि दूसरा मनुष्य उस कार्य्यको उतनी उत्तमतापूर्वक न कर सके जितनी उत्तमतापूर्वक तुम स्वयं उसे कर सकते हो। ऐसी दशामें उस किये हुए कार्य्यसे तुम्हारा सन्तोष न होगा और तुम्हें पुनः अपने हाथसे वह काम करना पड़ेगा। इस प्रकार एक ही काममें तुम्हारा दूना समय लगेगा। पर जिस कामके विषयमें तुम्हें दृढ़ विश्वास हो कि दूसरा मनुष्य उसे बहुत भली भाँति पूरा कर लेगा और साथ ही तुम दूसरे कार्य्योंके लिए अपना समय निकालना चाहते हो तो स्वयं वह

कार्य्य करनेका कष्ट कभी स्वीकार न करो। (च) बहुत अधिक शीघ्रता कार्य्यको नष्ट कर देती है। आपको बहुतसे लोग ऐसे मिलेंगे जो नित्यके साधारण व्यवहारों, कार्य्यों और बातचीत आदिमें जरासी शीघ्रता करके बड़ी भारी हानि कर बैठते है। कुछ लोगोंका स्वभाव ही जल्दी करनेका होता है और जल्दीके कारण बार बार हानि सहकर भी वे अपनी उस प्रकृतिसे पीछा नही छुड़ाते। यह दोष बहुत ही बुरा है। लोग कहते है,—जल्दीका काम शैतानका होता है, अथवा जल्दबाज मुँहके बल गिरता है। दोनों ही बातें किसी न किसी हद्तक बहुत ठीक हैं। कुछ लोग केवल अपनी चतुरता दिखलानेके लिये ही जल्दी कर बैठते है और तुरन्त मुँहके बल गिरते हैं। ऐसे लोग यदि इस रोगसे पीछा छुड़ाना चाहें तो उन्हें कुछ सोचनेका अभ्यास डालना चाहिए। यदि कोई साधारण कार्य्य सामने आवे तो उचित है कि उसके सब अगों पर क्षण भर विचार कर लिया जाय। बहुतसी हानियों और दोषोंका इसीसे परिहार हो जायगा। एक पंजाबी मसलका अभिप्राय है कि किसी प्रकारका मन्तव्य स्थिर करनेके समय अपने सिरसे पगड़ी उतार लेनी चाहिए। क्यों? इसी लिये कि उस पर शान्तिपूर्वक विचार करनेके लिये क्षण भर समय मिल जाय। पर इस सिद्धान्तका इतना बड़ा अनुयायी बन जाना भी ठीक नहीं कि सुस्ती और अकर्म्मण्यताका दोषारोपण होने लगे। (छ) किसी कार्य्यको आरम्भ करनेके उपरान्त बीचमें बहुत ही थोड़ा विश्राम लो जिसमें वह कार्य्य शीघ्र समाप्त हो जाय। किसी कार्य्यके मध्यमें थोड़ा विश्राम करनेकी अपेक्षा उसकी समाप्ति पर अधिक विश्राम करना बहुत अच्छा है। संभव है कि बीचमें विश्राम करनेके समय उसमें और कोई झंझट या विघ्न आ उपस्थित हो और तब हमें अपने विश्राम करने पर पछताना पड़े। यदि किसी प्रकारकी झंझट या विघ्नकी बिलकुल संभावना न हो तो भी विश्राम नहीं करना चाहिये अथवा बहुत ही अल्प करना चाहिये। क्योंकि

उसके बाद हमें और भी काम करने होंगे। यदि कछुएसे शर्त लगाकर खरगोश आधे रास्तेमें ही विश्राम न करने लग जाता तो कछुएके पास उससे बाज़ी जीतनेका और कोई साधन या उपाय नहीं था।

ऊपर जिन सिद्धान्तोंका वर्णन किया गया है उनमें यथासमय विचारपूर्वक किंचित् परिवर्त्तन भी किया जा सकता है। ये समस्त सिद्धान्त स्थूल है। केवल उनके शब्दोंको हृदयंगम करके लकीर पीटनेकी आवश्यकता नहीं, और न वैसा करना किसी दशामें लाभदायक ही हो सकता है। वास्तवमें आवश्यकता है उनका ठीक ठीक अभिप्राय समझनेकी। साधारणत: नित्यप्रतिके सासारिक व्यवहारों-सम्बन्धी ऐसे सिद्धान्त बहुत ही कम मिलेंगे जिनका सब अवस्थाओंमें समान रूपसे प्रयोग हो सके। परिस्थिति आदिके विचारसे उनमें कुछ न कुछ परिवर्तन करनेकी आवश्यकता हुआ ही करती है। दूसरी बात यह है कि ऐसे कामोंमें हमें बहुत बड़े बड़े लोगोंको अपना आदर्श और पथदर्शक बना लेना चाहिए और यथासाध्य उनके कार्य्यों और प्रणालियोंसे अपने व्यवहारोंमें सहायता लेनी चाहिये। केवल बड़े बडे लोगोंसे ही क्यों, साधारण आदिमियोंसे भी कभी कभी बहुत अच्छी शिक्षा ग्रहण की जा सकती है। एक साधारण विचारशील मनुष्य यदि वास्ताविक सफलता प्राप्त करनेके लिये सचमुच उत्सुक हो तो उसे उचित है कि वह संसारके प्रत्येक कार्य और मनुष्यसे कुछ न कुछ शिक्षा ग्रहण करे। हमारे चारों ओर नित्य अनेक ऐसी घटनाऍं होती रहती हैं जिन पर यदि हम थोड़ा सा भी ध्यान दें तो कई कामकी और जानने योग्य बातोंका पता लग जाय। प्रत्येक अच्छे या बुरे कार्य्यके गर्भमें ढूँढ़ने पर एक न एक शिक्षाप्रद बातं निकल सकती है। यह एक ऐसा सिद्धान्त है कि यदि दो चार दिन इसके अनुसार कार्य्य किया जाय तो बहुत कुछ प्रत्यक्ष लाभ दिखलाई पड़ने लगता है। साधारण मनुष्यके आचार और कार्य्योंकी

अपेक्षा बड़े बड़े विद्वानों और महान् पुरुषोंके जीवनक्रमसे मिलनेवाली शिक्षाएँ अवश्य ही बहुत अधिक बहुमूल्य और उपादेय होती है और साधारण व्यावहारिक उक्तियोंकी अपेक्षा उनका उपयोग भी कहीं अच्छा होता है। सम्भव है कि इस स्थल पर कुछ विषयान्तर होता जान पड़े; पर ऊपर जिन छः सिद्धान्तोंका वर्णन किया गया है उन सबका समयके साथ थोड़ा बहुत सम्बन्ध अवश्य है। पाठकोंको समयका सदुपयोग करनेमें उनसे अच्छी सहायता मिल सकती है और उनके कार्य्योंमें बहुत कुछ सफलता भी हो सकती है। किसी मनुष्यकी मर्य्यादा और पदवृद्धिमें समयका सदुपयोग ही सबसे बड़ा सहायक होता है। कोई ऐसा मनुष्य ढूँढ़ो जो अपने पुरुषार्थसे बहुत ऊँचे पद या मर्य्यादा तक पहुँचा हो, जिसने अपनी विद्या या बुद्धिसे संसारका उपकार किया हो, जिसकी देशहितैषितासे उसके देशको लाभ पहुँचा हो, जिसने परोपकार-बुद्धिसे बहुतोंका कल्याण किया हो, ऐसे मनुष्यके जीवन-क्रम पर थोड़ासा विचार करनेसे ही तुम्हें स्पष्ट जान पड़ेगा कि उसने समयका बहुत ही अच्छा और पूरा पूरा उपयोग किया है। उसने एक क्षणको भी कभी व्यर्थ नहीं जाने दिया है। व्यापार-क्षेत्रमें भी तुम्हे वेही लोग सबसे अधिक सफलता प्राप्त करते हुए दिखलाई देंगे जिन्होंने कभी अपना समय व्यर्थ नही खोया है। साधारण दूकानदारोंको ही लीजिये। उनमेंसे जो सफलताके वास्तविक और उपयुक्त पात्र होंगे वही सवेरे सबसे पहले अपनी दूकान खोलते हुए दिखाई देंगे और अधिक रात बीतेतक उन्हींकी दूकान पर चिराग जलता रहेगा। जो लोग सफलताके वास्तविक पात्र नहीं हैं और जिनके भाग्यमें सदा दुःख भोगना बदा है उनकी दूकान कभी तो डेढ़ पहर दिन चढ़े खुलेगी और कभी केवल तीसरे पहर। साधारण मेले तमाशेके दिन तो वे कभी दूकान खोलना ही पसंद न करेंगे। और तिस पर मजा यह कि सवेरे दूकान खोलने और

अधिक परिश्रम करनेवालोंकी हँसी भी उड़ावेंगे। ऐसे लोग स्वयं तो जहाँके तहाँ पड़े ही रहना चाहते हैं; साथमें दूसरोंको भी अपना सहवर्ती बनानेके उत्सुक होते हैं। उनमें एक तो दोष होता है और दूसरी मूर्खता। ऐसे लोग यदि कभी उन लोगोंकी आर्थिक स्थिति से—जिनके कामोंकी वे हँसी उड़ाते हैं—अपनी धनहीनताका मुकाबला करें तो उन्हें तुरन्त अपनी भारी भूल मालूम हो जाय। अवसर पड़ने पर वही व्यापारी जिसे वे हँसते है, हजारों रुपए नकद देकर बहुतसा माल किफायतमें खरीद और अच्छे दामोंमें बेच लेता है और हँसी उड़ानेवाले मुँह ताकते रह जाते हैं।

समयसंबंधी एक और बातका वर्णन कर देना भी बहुत ही आवश्यक है। प्रत्येक मनुष्यको अपने समयका पूरा पाबन्द रहना चाहिये। हम जिस कामके लिये जो समय निश्चित करें उसमें उसी निश्चित समय पर लग जायें। यदि हम ऐसा नही करेंगे, समयके पूरे पाबन्द नही रहेंगे तो हमें एक दिनका काम समाप्त करनेमें कई दिन लग जायेंगे। एक महीनेमें यदि हमें दस काम करने होंगे तो उनमेंसे हम केवल दो या तीन ही कर पावेंगे; शेष सब पड़े रह जायेंगे। इस प्रकार हमारी अनेक हानियाँ होंगी। जिन लोगोंके कार्योंका सम्बन्ध और कई लोगोंसे भी हो, उन्हें तो इस बातका सबसे अधिक ध्यान रखना चाहिये, नहीं तो उनके साथ साथ दूसरोंके कामका भी हर्ज होगा; गेहूँके साथ घुन भी पिस जायगा। क्या आपको कभी किसी व्यापारीके ठीक समय पर माल न भेजनेके कारण हानि नहीं सहनी पड़ी है? क्या आपको निश्चित किए हुए समय पर किसी मित्र या आगन्तुकके न आनेके कारण बहुत कुछ मानसिक और शारीरिक कष्ट नहीं सहना पड़ा है? यदि हाँ, तो आप भी समयके पाबन्द बनिये। ऐसा करनेसे आप स्वयं भी अनेक झंझटों और हानियोंसे

बचेंगे और उन लोगोंको भी बचावेंगे जिनका आपके साथ किसी प्रकारका सम्बन्ध या व्यवहार है। जो लोग ठीक और निश्चित समय पर काम करना जानते हैं वे कभी कभी दो या तीन आदमियोंके काम भी कर सकते हैं। पर जो लोग इस बातका विचार नहीं करते वे अपना आधा काम करनेमें भी समर्थ नहीं होते । अमेरिकाके एक बहुत बड़े व्यापारीके सम्बन्धमें प्रसिद्ध है कि लोग उसके काम पर आने और जाने आदिसे ही समयका अनुमान कर लेते थे; घड़ी देखनेकी उन्हें जरूरत ही न होती थी। और वास्तवमें सफलता भी ऐसे ही लोगोंके बाँटे आती है।

दूसरा अध्याय ।

उद्देश्य और लक्ष्य ।

उद्देश्य स्थिर न करनेवालोंकी दशा—" मैं क्या होऊँगा"—उद्देश्य ही सफलताका मूल आधार है—प्रवृत्ति या रुचिकी अनुकूलता—उद्देश्य और अन्तःकरण—वास्तविक प्रवृत्ति—योग्य पुरुषके चिह्न—नौकरी और रोजगार—अमेरिकाकी दुर्दशाका उदाहरण—" गोल छेद और चौकोर आदमी "—इच्छा और योग्यता—उद्देश्यकी कसौटी—परिणामका ध्यान छोड़ दो—गीताका निष्काम धर्म्म—छोटी और तुच्छ बातें—परिस्थिति और परिवार आदिका प्रभाव—उत्तम संगति—उदाहरण और आदर्श—भलाई और बुराईका व्यापक प्रभाव—छोटी घटनाओंसे मानवजीवनमें बड़ा परिवर्त्तन—कुछ उपयोगी बातें ।

प्रत्येक युवकको अपनी जीवनयात्रा आरम्भ करनेसे पहले अपने उद्देश्य और लक्ष्य स्थिर कर लेने चाहिए । उनका अभाव जीवनके उपयोगोंके लिए बड़ा ही घातक होता है । जो मनुष्य बिना किसी उद्देश पर लक्ष्य किये जीवन आरम्भ कर देता है उसकी उपमा उस मनुष्यसे दी जा सकती है जो बिना कोई गन्तव्य स्थान नियत किये ही रेल या जहाज पर सवार होता है । वह मनुष्य न तो यही जानता है कि उसे कहाँ जाना है और न उसे यही ज्ञात है कि रेल या जहाज उसे कहाँ पहुँचावेगा । उसका कहीं पहुँचना रेल या जहाजकी कृपा पर ही अवलम्बित

है। रेल चाहे उसे काश्मीरकी सीमातक पहुँचा दे और जहाज चाहे उसे मिर्चके टापूमें उतार दे। रेल या जहाज उसे चाहे जिस स्थान पर पहुँचा दे, पर स्वयं उसे उस स्थानसे कोई विशेष लाभ नहीं हो सकता। हाँ, काश्मीर पहुँचकर वह थोड़ी सी सैर जरूर कर लेगा और मिर्च देशमें सम्भव है कि कुछ कष्ट भी उठा ले। पर इन सबका कोई विशेष फल नहीं। वास्तविक फलकी प्राप्ति केवल गन्तव्य स्थान निश्चित कर लेने से ही होती है; व्यर्थकी जगहों पर जाकर झूठ मूठ टक्करें मारनेसे नहीं। इस लिये प्रत्येक मनुष्यको सबसे पहले यह निश्चय कर लेना चाहिये कि " मैं क्या होऊँगा ? "। इस प्रकार जब वह अपना उद्देश्य निश्चित कर ले तब उस मार्गमें अग्रसर हो। अपना उद्देश्य या लक्ष्य निश्चित करनेका सबसे अच्छा अवसर बाल्य और युवावस्थाकी सन्धि है। हमारा तात्पर्य उस समयसे है जब कि युवक अपनी शिक्षा आदि समाप्त करके सांसारिक व्यवहारोमें लगनेकी तैयारी करता हो। उस समय वह जिस बात पर अपना लक्ष्य करे उसे बिना पूरा किये न छोड़े। ऐसा करनेसे उसका जीवन सार्थक होगा और उसमें दृढ़ता, कर्त्तव्यपरायणता आदि गुण आपसे आप आने लगेंगे। जब एक बार वह अपना उद्देश्य पूरा कर लेगा तो उसे और आगे बढ़नेका साहस होगा और वह दूसरी बार आगेसे अधिक उत्तम विषयको अपना लक्ष्य बनावेगा। इस प्रकार एकके बाद एक, उसके कई मनोरथ पूर्ण होंगे और वह जीवनकी वास्तविक सफलता प्राप्त कर लेगा।

अपना उद्देश्य स्थिर करनेको सफलता शिखरकी पहली सीढ़ी समझना चाहिए। इसी पर मनुष्यका सारा भविष्य निर्भर है और इसी लिए यह उसकी सफलता या विफलताका निर्णायक है। इस अवसर पर यह बात भूल न जानी चाहिए कि हमारा कथन केवल उन्हीं युवकोंके लिये है जो अपने पुरुषार्थसे जीविका-निर्वाह करना चाहते हों।

जिन्होंने जन्मसे ही सदा मखमली बिछौनें पर आराम किया हो वे यदि जीवन और उसके कर्तव्योंका यथार्थ महत्त्व समझते हों तो वे भी इन उपदेशोंसे अच्छा लाभ उठा सकते हैं। पर यदि वे इन पर यथेष्ट ध्यान न देकर कोई भूल भी कर बैठें तो उनकी उतनी हानि नहीं हो सकती और यदि हो भी तो उसकी शीघ्र ही पूर्ति हो जाती है। पर अधिकांश लोगोंको अपने शरीर और मस्तिष्कसे ही परिश्रम करके रुपया पैदा करना पड़ेगा, और इसी कारण अपना उद्देश्य स्थिर करना उनके लिये सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। अपने लिये व्यापार, पेशा, नौकरी अथवा और कोई काम ऐसा स्थिर करना चाहिए जो अपनी शारीरिक शक्तियों तथा परिस्थितिके बिलकुल अनुकूल हो। इसके विरुद्ध यदि वह अपने लिए कोई ऐसा काम सोचे जो उसकी योग्यता या शक्तिसे बाहर हो तो अवश्य ही उसे विफल-मनोरथ होना पड़ेगा। जिस आदमी-की रुचि व्यापार करनेकी ओर हो उसे यदि रेलमें टिकट-कलक्टर बना दिया जायगा तो भला जीवनमें उसे क्या सफलता होगी? जो जन्मसे तान उड़ानेका शौकीन हो वह ज्योतिष पढ़कर क्या करेगा? एक हृष्ट पुष्ट, धीर और साहसी मनुष्य शारीरिक परिश्रमवाले कार्य्योंमें तो बहुत अच्छी सफलता प्राप्त कर लेगा पर विचारक या पत्रसम्पादकका काम उसके किये भली भाँति न हो सकेगा। पर यह सब विषय इतने गूढ है कि साधारणत: युवक लोग उन्हें भली भाँति नहीं समझ सकते। केवल वयस्क और अनुभवी लोगोंके ध्यानमें ही वे आ सकते हैं। अत: यह कर्त्तव्य प्रधानत: विचारवान् माता-पिताका होना चाहिए कि वे अपनी सन्तानके लिए ऐसा काम सोचें जो सब प्रकारसे उसकी रुचि, अवस्था और शक्तिके अनुकूल हो। यदि माता-पिताने अपने पुत्रकी रुचि समझनेमें कुछ भूल की तो परिणाम उलटा ही होगा। नानकशाहके पिता तो उन्हें सौदागर बनाना चाहते थे और बार बार सौदागरीके

लिए रुपए देते थे। पर बाबा नानक क्या करते थे? सब रुपए साधु सन्तोंको खिलाकर स्वयं भगवत्-भजनमें लग जाते थे।

युवकोंको उचित है कि वे अपने लिए वही काम सोचें जिसका करना उनकी शक्तिके बाहर न हो। जिस कामके लिए दिल गवाही न दे उसे कभी न करना चाहिए। पर साथ ही अनुचित भय या आशंकाके कारण अपनी शुद्ध इच्छा या प्रवृत्तिको कभी रोकना भी न चाहिए। युवावस्थामें मनुष्य स्वभावतः साहसी होता है और अच्छे या बुरे परिणाम पर उसका ध्यान नहीं रहता। इसी लिये कभी कभी वह निःशंक भावसे ऐसे ऐसे कामोंका बोझा अपने ऊपर ले लेता है जिनका पूरा उतारना उसकी शक्तिके बाहर होता है। अपनी शक्तिका ठीक ठीक अनुभव करनेमें सबसे अधिक सहायता उस अनुभव-जन्य ज्ञानसे मिलती है जो कुछ कष्ट और हानि सहकर प्राप्त किया जाता है। आरम्भिक अवस्थामें लोगोंको जल्दी ऐसा ज्ञान नहीं होता और प्रायः इसी लिये लोग अधिक धोखा भी खाते है।

इस अवसर पर एक और बात बतला देना परम आवश्यक है। अपनी साधारण पसंदको ही हमें अपनी वास्तविक और शुद्ध रुचि या प्रवृत्ति न समझ लेना चाहिए। अगर किसीको गाना बजाना कुछ अच्छा लगता हो तो वह यह न समझ ले कि वह संसारमें दूसरा तान-सेन बननेके लिए ही आया है। यदि कोई अपरिपक्व बुद्धिवाला युवक किसी बड़े भारी वैज्ञानिकको देख अथवा उसका हाल सुन कर बिना उसके परिश्रम और कठिनाइयोंका हाल जाने ही उसके समान बननेका प्रयत्न करे तो अवश्य ही उसकी गिनती मूर्खोंमें होगी। यद्यपि ऐसी भूलें बड़ों बूढ़ों और वयस्क मनुष्योंसे भी हो सकती है तथापि एक अज्ञानी युवककी भूलोंकी अपेक्षा वह बहुत ही कम हानिकारक होगी। इसी लिये सब कामोंमें बड़ोंसे सम्मति ले लेना

और साथ ही उनकी सम्मतिका पूरा पूरा आदर करना बहुत ही लाभदायक होता है। आजकलके कुछ नवयुवक नई रोशनीके फेरमें पड़कर अपने बाप दादा या दूसरे बड़ों बूढ़ोंको निरा मूर्ख समझकर उनका निरादर और अपमान करने लगते हैं। ऐसे लोग प्रायः हानि ही उठाते हैं और अनेक प्रकारके लाभोंसे वञ्चित रहते हैं। बड़ोंकी सम्मतिसे चलनेमें पहले पहल भले ही कुछ कठिनता या अनुपयुक्तता जान पड़े; पर आगे चलकर शीघ्र ही अपना भ्रम प्रकट हो जाता है और तब बड़ोंके आज्ञाकारी बननेमें और भी उत्तेजन मिलता है।

जो मनुष्य कठिनाइयों और विफलताओंकी कुछ भी परवा न करके अपने मार्गके कंटकोंको बराबर दूर करता जाता है वही संसारको कुछ कर दिखलाता है। पर इतनी श्रेष्ठ योग्यता बहुत ही कम लोगोंमें होती है। जिन लोगोंमें ऐसी ईश्वरप्रदत्त योग्यता न हो उन्हें उचित है कि वे अपने विचारोंको उत्तमतर बनावें और राग, ईर्षा, द्वेष आदिसे सदा दूर रहें। ऐसा करनेसे उनका कार्य्य बहुत सरल हो जायगा और योग्यतावाले अभावकी कुछ अंशोंमें पूर्ति हो जायगी। जिस मनुष्यके प्रत्येक कार्य्यमें सत्यता और प्रत्येक विचारमें दृढ़ता होती है वही महानुभाव कहलानेके योग्य होता है। ऐसे मनुष्य पर अनुचित प्रलोभनोंका कभी कोई प्रभाव नही पड़ता। वह कठिनसे कठिन विपत्तियोंको ईश्वरेच्छा समझकर धैर्य्यपूर्वक सहन करता है और सदा शान्त और निर्भय होकर आपदाओंका सामना करता है। ईश्वर और सत्यता पर उसका बहुत ही अटल विश्वास रहता है। इसलिये सदा सत्य पथका अनुसरण करो और अध्यवसायपूर्वक अपने काममें लगे रहो। संसारके सभी लोग बहुत बड़े विद्वान्, दार्शनिक, वैज्ञानिक, आविष्कर्ता या करोड़पति नहीं बन सकते। पर हाँ, सभी लोग अपने जीवन-

को प्रतिष्ठा और सुखपूर्ण अवश्य बना सकते है । इसके अतिरिक्त यह बात भी ध्यानमें रखने योग्य है कि अप्रतिष्ठा और विफलता छोटे अथवा तुच्छ समझे जानेवाले कामोंमें नहीं है बल्कि उन कामोंको अपनी शक्ति भर न करनेमें है । जूता सीना निन्दनीय नही है, निन्दनीय है मोची होकर खराब जूता सीना ।

इस देशके लोगोंमें सबसे बड़ी विलक्षणता यह है कि वे अपने बालकोंको विद्यारम्भ करानेके समय ही निश्चय कर लेते हैं कि लड़का पढ़ लिखकर नौकरी करेगा । पर स्वतंत्रतापूर्वक घड़ीसाजी या बिसातबानेकी छोटी सी दूकान करनेकी अपेक्षा किसी दफ्तरमें १५) महीनेकी नौकरीको अच्छा समझना बड़ी भारी भूल है । १५) के मुहर्रिरको सवेरे दस बजेसे सन्ध्याके सात बजेतक दफ्तरमें पीसना पड़ता है और जब उतनी थोड़ी आयमें उसका काम नही चलता तो वह सवेरे और सन्ध्याके समय लड़कोंको पढ़ानेका अथवा इसी प्रकारका और कोई काम ढूँढ़ने लगता है । इस प्रकार उसका सारा जीवन बड़े ही कठोर परिश्रममे बीतता है और वह बड़ी ही दरिद्र और दुःखपूर्ण अवस्थामें इस ससारको छोड़कर चल बसता है । बहुतसे लोग ऐसे हैं जो नौकरीमें बहुत अधिक परिश्रम करते है । ऐसे मनुष्य यदि किसी स्वतन्त्र काममें नौकरीकी अपेक्षा आधा परिश्रम भी करें तो वे अपेक्षाकृत उत्तमतर जीवन निर्वाह कर सकते हैं । पर वे नौकरीके उस भूतसे लाचार रहते है जो उनके माता पिता बाल्यावस्थामें ही उनके सिरपर चढ़ा देते है ।

इधर कुछ दिनोंसे अमेरिकाके साधारण निवासियोंको वकील, डाक्टर अथवा पादरी बननेका खब्त बुरी तरहसे सवार है । उनका अनुमान है कि उन्ही कामोंमें सबसे अधिक धन भी मिलता है और प्रतिष्ठा भी । इसी खब्तके पीछे हजारों आदमी मर गये और हजारों

असाध्य रोगोंसे पीड़ित हो गये । ऐसे लोग देहातियों और कृषकोंका उत्तम स्वास्थ्य देखकर दाँतों उँगली दबाते और मन ही मन पछताते हैं। यही नहीं, जो पेशे उन्होंने बहुत अधिक धनप्रद समझकर आरम्भ किये थे, उन्हींसे उनकी रोटीतक ठीक ठीक नहीं चलती और दूसरे कामोंको जिनमें अच्छी आय हो सकती है, वे लोग अप्रतिष्ठाके विचारसे आरम्भ भी नहीं कर सकते। वहाँके एक विचारवान् लेखकने ऐसे लोगोंकी दुर्दशा पर शोक प्रकट करते हुए लिखा है कि अगर आप भिन्न भिन्न पेशों और व्यापारोंको एक टेबुलमें बने हुए भिन्न भिन्न आकारके—कोई गोल, कोई लम्बे, कोई तिकोने और कोई चौकोर—छेद समझें और आदमियोंको उन्ही सब आकारोंके लकड़ीके टुकड़े मानें तो आप देखेंगे कि चौकोर आदमी गोल छेदोंमें, गोल आदमी लम्बे छेदोंमें और लम्बे आदमी तिकोने छेदोंमें रक्खे हुए हैं । अर्थात् एक दूसरेकी देखादेखी लोग ऐसे ऐसे कामोंमें लग जाते हैं जिनके लिये वे कदापि उपयुक्त नहीं होते । और यही उनकी विफलता और विपत्तियोंका मूल कारण है ।

इच्छा मात्रसे ही हमारी योग्यताका कभी ठीक ठीक परिचय नही मिल सकता। अधिकांश लोग ऐसेही होंगे जिनकी इच्छाओंकी कभी कोई निर्दिष्ट सीमा ही नही होती। हम नित्यप्रति जिन मनोराज्योंके स्वप्न देखते हैं वे अवश्य ही बहुत ऊँचे और दूर होते है । करोड़पति बननेकी हमारी इच्छा मात्र ही इस बातका पूरा प्रमाण नहीं है कि हम वास्तवमें करोड़पति बननेके योग्य हैं अथवा किसी समय बन जायँगे। संसार-में ऐसे लोगोंकी कमी नहीं है जो किसी महाकविके दो एक काव्य पढ़कर ही स्वयं महाकवि बननेके स्वप्न देखने लगते हैं। पर वे कभी इस बातका विचार करनेकी आवश्यकता नहीं समझते कि काव्यमें थोड़ी सी गति या रुचि हो जाने अथवा केवल थोडेसे नीरस पदोंकी रचना कर

लेनेसे ही मनुष्य सफलताके शिखर पर नहीं पहुँच सकता और वास्तवमें महाकवि बननेके लिए हजारों बड़े बड़े ग्रन्थोंका ध्यानपूर्वक मनन करनेके अतिरिक्त किसी विशिष्ट दैवी गुणकी भी आवश्यकता होती है। यदि हम थोडे बहुत जोशके साथ किसी काममें लग जायँ तो इतनेसे ही हमें यह न समझ लेना चाहिये कि हम उसमें सफलता प्राप्त ही कर लेंगे । जबतक हम अपनी सारी शक्तियोंसे उस काममें न लगें तबतक हमें सफलताकी कोई आशा न करनी चाहिये। इसी लिये केवल इच्छाको ही योग्यता समझ लेना बड़ी भारी भूल है । यदि हमारी इच्छा बलवती होकर कार्य्यरूपमें परिणत हो जाय, हम उसमें सफलता प्राप्त करनेका दृढ़ निश्चय कर लें, अपनी सारी शक्तियो और अध्यवसायपूर्वक उस काममें लग जायें और उसे बिना पूरा किये न छोड़नेका दृढ संकल्प कर लें तभी हम सफल-मनोरथ होनेकी आशा कर सकते हैं; अन्यथा नहीं। सच्ची सफलता प्राप्त करनेके लिये उत्कट इच्छा, दृढ़ संकल्प, पूर्ण अध्यवसाय और वास्तविक योग्यताकी आवश्यकता होती है ।

अपने जीवनके उद्देश्य स्थिर करनेके समय हमें इस बातका पूरा ध्यान रखना चाहिए कि वे एक सत्यनिष्ठ मनुष्यके अयोग्य अथवा अनुपयुक्त न हों। यदि हम अपनी आकांक्षाओ और उद्देश्योंको पूरा करनेके लिये अनुचित और उचित सभी उपायोंका अवलम्बन करने लगे जायें, तो मानो हम आत्मप्रतिष्ठा, सत्यता आदि गुणोंको तिलांजली दे देते है और ईश्वरप्रदत्तशक्तियोंका बड़ा बुरा उपयोग करते है। अपने आपको बड़ा भारी व्यापारी और कमाऊ समझनेवाले एक भले आदमीने एक बार एक मित्रसे अपने व्यापारके सिद्धान्तोंका वर्णन करते हुए कहा था—" मै किसी राह-चलते भले आदमीको देखकर उसके पाँचों कपड़ों पर हाथ डालता हूँ और उनमेंसे

दुपट्टा, टोपी, रुमाल आदि जो कुछ मिल सके लेनेकी चेष्टा करता हूँ। यदि वह होशियार हो और बचकर भागना चाहे तो मैं उसके अंगे-का बन्द लेकर ही सन्तुष्ट हो जाता हूँ। यदि कुछ भी न मिले तो भी मैं कभी दुखी नहीं होता, क्योंकि ऐसे व्यापारमें हानिकी कभी कोई सम्भावना ही नहीं होती।" कैसे श्रेष्ठ और प्रशंसनीय विचार है! ऐसे लोग यदि कभी अपनी धूर्ततासे हजार दो हज़ार रुपए जमा भी कर लें तो भी वास्तविक सफलता कभी उनके पास नहीं फटकती। उलटे दिन पर दिन लोग उनकी धूर्ततासे अवगत होते जाते हैं और शीघ्र ही उन्हें अपने कुकर्म्मोंके लिये भारी प्रायश्चित्त और पश्चात्ताप करना पड़ता है। यदि वे बहुत अधिक धूर्त हुए और उनके लिये प्रायश्चित्त या पश्चात्तापकी नौबत न आई तो भी उनकी आत्माको कभी शान्ति नहीं मिलती, दुष्कर्म्म उनके हृदयको सदा कचोटते रहते हैं। उनके कुकर्म्मोंका संसारके अन्य लोगों पर जो विषाक्त प्रभाव पड़ता है और उनसे देश, समाज और व्यापार आदिको जो धक्का पहुँचता है, वह अलग।

मनुष्यमें उच्चाकांक्षा होना बहुत ही स्वाभाविक है और इसके लिये कोई उसकी निन्दा नहीं कर सकता, बल्कि वास्तवमें निन्दनीय वही है जिसमें उच्चाकांक्षा न हो। पर वह उच्चाकांक्षा सत्य और न्यायके गले पर छुरी फेरनेवाली न होनी चाहिये। सामाजिक अथवा आर्थिक दृष्टिसे उन्नति और वृद्धिकी इच्छा रखना बुरा नहीं है, पर शुद्ध और संस्कृत आत्मा ऐसी उन्नतिको कभी अपना लक्ष्य नहीं बनाती। हमें उचित है कि हम न्यायपूर्वक इस बातका विचार कर लें कि जीवन, परिश्रम, अध्ययन और कार्य्य आदिका वास्तविक परिणाम क्या होना चाहिये। कोरी प्रतिष्ठा प्राप्त करनेकी इच्छा बहुत ही बुरी और निन्दनीय है। जो मनुष्य ज्ञान, परिश्रम, और जीवनके उपयोग आदि-

का ध्यान नहीं रखता उसे मनुष्य न समझना चाहिये। सच्चा परिश्रम और प्रयत्न ही हमें वास्तवमें मनुष्य बना सकता है, परिणाम या फल-का उतना महत्त्व नहीं है। जो मनुष्य केवल परिणामके लिये ही लालायित रहता है वह कभी पूरा पूरा प्रयत्न नहीं कर सकता। उसके विचारोंमें उच्चता और शुद्धि नहीं हो सकती और इसी लिये मार्गमें पड़नेवाली कठिनाइयोंसे वह घबरा जाता है। इसी लिये भगवान् श्री-कृष्णने गीतामें निष्काम कर्म्मका उपदेश करते हुए कहा है—"केवल कर्म्म करना तुम्हारे अधिकारमें है, उसके फलाफल पर तुम्हारा कोई वश नही। किये हुये कर्म्मोंके फलोंकी आशा मनमें कभी न रक्खो। साथ ही यह समझकर चुपचाप भी न बैठ जाओ कि संसारमें अच्छे फलोंका एकदम अभाव है। पूर्ण ईश्वरनिष्ठ होकर अपने कर्त्तव्य करते रहो। यदि कार्य्य सिद्ध हो जाय तो भी वाह वा और न सिद्ध हो तो भी वाह वा। यश और अपयशको समान समझना ही ईश्वरनिष्ठा है। फलकी इच्छा रखकर कोई काम करना बहुत ही बुरा है और जो लोग ऐसा करते हैं वे क्षुद्र है। वास्तवमें यश और अपयशकी कुछ भी परवा न करके अपना कर्त्तव्य बराबर पालन करते जाना ही सबसे अधिक बुद्धिमता है।

कभी कभी बहुत ही छोटी और तुच्छ बातोंसे भी मनुष्यका सारा जीवन उसी प्रकार नष्ट हो जाता है जिस प्रकार एक छोटी सी चिनगारीसे सारा शहर। थोड़ीसी जल्दबाजी, नासमझी या सुस्तीसे बहुत कुछ अनर्थ हो सकता है। छोटेसे छोटे दोष या रोगको कभी उपेक्षाकी दृष्टिसे न देखना चाहिये, और उन्हें यथासाध्य शीघ्र समूल नष्ट करनेका प्रयत्न करना चाहिये। आज हम जिस दोषको उपेक्षाकी दृष्टिसे देखते है वही कुछ दिनों बाद हमारे लिये बड़ा घातक हो सकता है और उस समय उससे पीछा छुड़ाना भी हमारी सामर्थ्यसे बाहर हो जाता है। आज यदि हम थोड़ा सा ऋण ले लें तो कल हमें और भी भारी रकम लेनेका साहस

हो जायगा और चार दिन बाद उसीकी कृपासे हमारी सारी सम्पत्ति नष्ट हो सकती है । इसलिये जहाँतक हो सके सब प्रकारके दुर्गुणों और दोषोंसे बहुत बचना चाहिये ।

अपना व्यापार या पेशा निश्चित करनेसे पहले हमें अपनी वास्तविक रुचि और शक्तिका पता लगा लेना चाहिये। सम्भव है कि गृहशिक्षा, मित्रोंके आचरण, परिस्थिति अथवा अन्य ऊपरी बातोंका हम पर बहुत कुछ प्रभाव पड़े और उसके कारण हम अपने उचित पथसे हटकर दूर जा पड़ें । कभी कभी इन कारणोंसे मनुष्यकी वास्तविक रुचि बहुत कुछ दब जाती है। जिस प्रकार प्रातःकालसे ही दिनका पता लग जाता है उसी प्रकार बाल्यावस्थासे ही मनुष्यके सम्बन्धकी बहुतसी मुख्य मुख्य बातें जानी जाती है । इस वास्ते प्रत्येक व्यक्तिके लिये यह परम आवश्यक है कि बाल्यावस्थासे ही वह ऐसी परिस्थिति और साधनोंसे घिरा रहे जो उसकी मनोवृत्तियोंको शुद्ध, उच्च और सबल बनावें और उसमें सरलता, सुजनता, सत्यनिष्ठा और सात्त्विक भावोंका आरोपण करें । मन और वासनाओंको वशमें रखनेका अभ्यास बाल्यावस्थामें ही पूर्ण रूपसे हो सकता है, आगे चलकर नहीं । बाल्यावस्थामें हृदय अपनी कोमलताके कारण सब प्रकारके सद्गुणों अथवा दुर्गुणोको ग्रहण करनेके लिये सदा प्रस्तुत रहता है । बाल्यावस्थाके संस्कार ही युवावस्थामें प्रबल रहते और हमारे भविष्य जीवनके विधाता होते है । वृत्तियाँ उसी समय हर तरहके साँचेमें ढाली जा सकती हे । ऐसे महानुभाव बहुत ही कम मिलेंगे जिनका बाल्य-कालका आचरण अपवित्र और दूषित रहा हो । बाल्यावस्थामें प्रकृति अनुकरण-प्रिय होती है और आसपासके लोगोंको जो कुछ करते देखती है उसे तुरन्त ग्रहण कर लेती है ।

प्रकृतिपर प्रभाव डालनेके सम्बन्धमें एक और बात ध्यान रखने योग्य है । पुरुष मात्रपर जितना अधिक प्रभाव स्त्री-जातिका पड़ता है

उतना और किसीका नहीं पड़ता। इस प्रभावकी प्रधानता उस समय और भी बढ़ जाती है जब कि माता और पुत्रका सम्बन्ध उपस्थित होता है। मनुष्य प्रायः वही बनता है जो उसकी माता उसे बनाना चाहती है। जो शिक्षाएँ हमें माता द्वारा मिलती हैं वे चितातक हमारा साथ देती हैं। एक विद्वान्‌ने बहुत ठीक कहा है—"एक माता सौ शिक्षकोंके बराबर है।" राजमाता जिजाबाईने ही शिवाजीको वास्तविक शिवाजी बनाया था। बिना माता देवल देवीकी शिक्षाके आल्हा और ऊदलको हम उस रूपमें नहीं देख सकते थे जिसमें कि अब देखते हैं। ध्रुवने अपनी माताके कारण ही इतना उच्च स्थान पाया था। परशुरामसे उनकी माता रेणुकाने ही इक्कीस बार क्षत्रियोंका विध्वंस कराया था। नेपोलियन, पिट, जार्ज वाशिंग्टन आदि सभी बडे बड़े लोगोंने अपनी अपनी माताओंकी बदौलत ही इतनी कीर्ति पाई है। ऋषिकल्प दादाभाई नौरोजी भी सबसे अधिक अपनी माताके ही ऋणी हैं।

माताके उपरान्त मनुष्यपर दूसरा प्रभाव उसके साथियोंका पड़ता है। किसी मनुष्यकी वास्तविक योग्यता या स्थितिका बहुत कुछ परिचय उसके साथियोंकी योग्यता और स्थितिसे ही मिल जाता है। एक कहावत है—"तुख्म तासीर सोहबत असर"। उत्तम संगतिसे मनुष्यमें सद्गुण आते हैं और बुरी संगतिसे दुर्गुण। प्रसिद्ध फारसी कवि शेख सादीने एक स्थलपर कहा है—"मैंने मिट्टीके एक ढेलेसे पूछा कि, तुझमें इतनी सुगन्ध कहाँसे आई? उसने उत्तर दिया, यह सुगन्ध मेरी अपनी नहीं है, मैं केवल कुछ समयतक गुलाबकी एक क्यारीमे रही थी, उसीका यह प्रभाव है।" उसी कविने एक और स्थलपर कहा है—"अगर देवता भी दानवोंके साथ रहे तो कपटी और दोषी हो जायगा।" अर्थात् मनुष्यमें स्वयं जिन बातोंकी कमी हो, उसकी पूर्ति मित्रोंद्वारा हो जाती है। इसलिये यदि हममें उत्तम गुणोंका अभाव हो

और हम उस अभावकी पूर्ति करना चाहें तो हमें उचित है कि ऐसे लोगोंका साथ करें जिनमें वे गुण उपस्थित हों। अपने जीवनको परम पवित्र और आदर्श बनानेका सबसे अच्छा उपाय यही है कि हम सदा ऐसे लोगोंका साथ करें जो विद्या, बुद्धि, प्रतिष्ठा और विचार आदिमें हमसे कहीं अच्छे हों।

एक पुराने लेखकका कथन है-"जब तुम किसीसे मित्रता करना चाहो तो पहले उसकी परीक्षा कर लो; क्योंकि बहुतसे लोग बड़े स्वार्थी हुआ करते है और आपत्तिके समय कभी काम नहीं आते। + + + + एक सच्चा मित्र बहुत अच्छा सहायक और रक्षक होता है, जिसे सच्चा मित्र मिल जाय उसे समझना चाहिये कि मुझे कुबेरकी निधि मिल गई।" यद्यपि फ़ारसीके प्रसिद्ध कवि सादीने एक स्थानपर स्पष्ट कह दिया है कि इस संसारमें सच्चा मित्र नहीं मिल सकता और सम्भव है कि किसी विशेष आदर्शको देखते हुए उक्त कथन किसी अंशतक सत्य भी हो, तथापि इसमें सन्देह नहीं कि संसारमें बहुतसे लोग ऐसे मिलेंगे जिन्होंने अपने मित्रोंको घोर विपत्तिके समय पूरा सहारा दिया हो और यथासाध्य सब प्रकारसे उनकी सहायता करके उन्हें अनेक प्रकारके कष्टोंसे मुक्त किया हो। तौ भी ऊपर जो चेतावनी दी गई है वह सदा ध्यानमें रखने लायक है, क्योंकि तुम्हारे जीवनकी उपयोगिता बहुतसे अंशोंमें तुम्हारे मित्रोंकी योग्यता और विचारोंपर ही निर्भर करती है। उत्तम गुणोंवाले लोगोंसे मित्रता करो, तुम्हारा जीवन भी उत्तम हो जायगा। ऐसे आदमियोंको अपना आदर्श और पथ-दर्शक बनाओ जिनका अनुकरण करनेमें तुम्हारी प्रतिष्ठा हो। जिस प्रकार उत्तम या निकृष्ट खाद्य पदार्थोंका शरीरपर अच्छा या बुरा प्रभाव पड़ता है उसी प्रकार मनपर अच्छी या बुरी सोहबतका भी असर होता है। इसके अतिरिक्त सुयोग्य मनुष्यकी संगतिके कारण

लोगोंका महत्त्व भी बढ़ जाता है और अनेक अवसरोंपर उनके उत्तम गुणोंके विकाशकी बहुत अच्छी सन्धि मिलती है । यदि रामचन्द्र न होते तो सुग्रीव या बिभीषणका इतना महत्त्व कहाँसे बढ़ता? बिना श्रीकृष्णके सुदामाको कौन पूछता ? बिना चाणक्यके चन्द्रगुप्त और बिना चद्रगुप्तके चाणक्यकी कीर्तिका इतना विस्तार कब सम्भव था ?

बात यह है कि उदाहरण या आदर्शका उत्तम मनोवृत्तियों पर बहुत अधिक प्रभाव पढता है। बड़े बड़े देशहितैषियों विद्वानों और परोपकारियोंके जीवनचरित इसी लिये पढ़े जाते हैं कि उनसे हमारी मनोवृत्तियोंका संस्कार हो और उनके उच्च विचारों तथा उदार आशयोसे हमें अच्छे अच्छे काम करनेकी उत्तेजना मिले । उदाहरण ही सबसे अच्छा शिक्षक है । शब्दोंमें दी हुई शिक्षाकी अपेक्षा कृतियों द्वारा मिलनेवाले उपदेशोंका प्रभाव और महत्त्व कहीं अधिक होता है । बाल्यावस्थामें उर्दूकी एक पाठ्य पुस्तकमें मैने इस आशयके कुछ पद्य पढे थे कि एक बार बहुत अधिक गरमीके कारण सारी पृथिवी सूख गई थी और सब जीव वर्षाके लिये व्याकुल हो रहे थे । आसमानमें बादल आकर इकट्ठे हुए और सब आपसमे मिलकर बरसने और पृथिवीका ताप हरनेकी सलाह करने लगे । सलाह ही सलाह होती रहीं, पर स्वय बरसकर दूसरेको मार्ग दिखलानेका साहस किसीको न हुआ । यह देखकर एक साधारण बूँदको कुछ आवेश आया और वह पृथिवीकी ओर अपने साथियोंसे यह कहती हुई बढ़ी कि यदि तुम लोगोंमें भी कुछ साहस हो तो आओ और पृथिवीको शीतल करो । उस एक बूँद-को बरसते देखकर उसके पीछे सारे बादल बरस पड़े और पृथिवीमे लहर बहर हो गई । इस वर्णनसे जो चमत्कारपूर्ण ध्वनि निकलती है उसकी सत्यतामें तिल भर भी सन्देह नहीं किया जा सकता । हम नित्य-प्रति देखते है कि बहुतसे लोग केवल साथियोकी देखादेखी ही अपनी प्रबल इच्छा न होनेपर भी, कुमार्गमें फँस जाते और अपना सारा जीवन

नष्ट कर देते हैं। हम यह भी देखते हैं कि एक बहुत ही साधारण योग्यता और स्थितिका मनुष्य अच्छे अच्छे लोगोंके साथ रहकर अपनी मर्य्यादा बढ़ा लेता और अपने आदर्श साथियोंका समकक्ष हो जाता है। मौखिक उपदेश हमें चुपचाप दूरसे मार्ग दिखला देता है और उदाहरण अपने साथ साथ हमें मार्गमें ले चलता है। उत्तम उपदेशोंका महत्त्व अवश्य अधिक है, पर जबतक उनके साथ उत्तम उदाहरण न हों, कोई विशेष फल नही हो सकता।

भगवान् श्रीकृष्ण और बुद्ध, वीरशिरोमणि महाराणा प्रताप और शिवाजी, भक्तकुलतिलक तुलसी और सूरकी जीवनघटनाओंका विचारपूर्वक अध्ययन करनेसे हमें जान पड़ेगा कि वास्तवमें हमारा जीवन अपेक्षाकृत कितना हीन और नीच है और उसे उन्नत और सार्थक करनेकी हमें कहाँतक आवश्यकता है। क्या इससे यह शिक्षा नही मिलती कि यदि हम अपने जीवनके उद्देश्योंको उच्च बनाना चाहे तो हमे ऐसे श्रेष्ठ लोगोंका साथ करना चाहिये जो सदा हमारी उन्नतिमें सहायक होते रहें और जिनके साथसे हमारी प्रतिष्ठा और मर्य्यादा बराबर बढ़ती रहे। एक आदर्श महान् पुरुष हमारे लिये संसार-सागरमें दीपालयके समान है जो कि हमें विपत्तिजनक स्थानकी सूचना ही नही देता, बल्कि हमें सुरक्षित मार्ग दिखलाता है; जो कि हमें केवल चट्टानें ही नहीं दिखलाता, बल्कि बन्दरतक पहुँचा देता है। उत्तम विचारोंसे हृदय प्रकाशित होता है और उत्तम कार्य्योंसे उसे उन्नत होनेमें उत्तेजना और सहायता मिलती है। इसलिये सदा ऐसे लोगों-का साथ करना चाहिये जो हमें ऊपरकी ओर उठा सकें; और जिन-में हमें केवल नीचे ढकेलनेकी शक्ति हो उनसे सदा दूर रहना चाहिये। एक विद्वान्का कथन है—"संसारमें भलाईसे ही बहुतसा उपकार हो जाता है। भलाई और बुराई केवल अपनेतक ही नहीं रहती, बल्कि जिनका

उनके साथ संसर्ग हो, उन्हें भी वह भला या बुरा बना देती है । इस-की उपमा तालाबमें फेंके हुए पत्थरसे दी जा सकती है जो एकके बाद एक, इतनी लहरें उत्पन्न करता और उन्हें बढ़ाता जाता है कि अन्तमें वे किनारोंतक पहुँच जाती है । ” बुरे मनुष्यका साथ आपको कभी दूसरोंका उपकार करनेके योग्य नही रख सकता । आचरणका सूत्र तो पलीतेके समान है, जहाँतक उसका संसर्ग रहेगा वहाँतक उसका प्रभाव बराबर चला जायगा ।

अपने जीवनका उद्देश्य स्थिर करनेमे हमें अनेक प्रकारके कारणोसे सहायता मिलती है । कभी कभी तो एक साधारण घटना ही हमारे लिये विस्तृत भाग्यका द्वार खोल देती है । ऐसी घटना हमारी प्राकृतिक प्रवृत्तिको किसी ऐसे काममें लगा देती है जो हमारे लिये बहुत उपयुक्त होता है । सप्तर्षियोंके उपदेशसे बाल्मीकि कुछ ही क्षणोंमें डाकूसे साधु हो गये थे । इब्राहीम अहमद बादशाह अपनी लौडीके इसी कहने पर–“ मैं थोड़ी देर इस मसनद पर सोई तो मेरी यह दशा हुई, जो इसपर नित्य सोता है, उसकी क्या दशा होगी ? ” अपना सारा राज्य छोडकर फकीर हो गया था । गोस्वामी तुलसीदासको उनकी स्त्रीके एक ही मर्म्मभेदी वाक्यने इतना बड़ा महात्मा और कवि बना दिया था। भाग्य-चक्रको पलटनेके लिये थोड़ासा सहारा ही यथेष्ट होता है । पर हममेंसे अधिकांश न तो ऐसे सहारेकी प्रतीक्षा ही कर सकते है और न उसकी प्रतीक्षाकी कोई विशेष आवश्यकता ही है । जिस काममें हम लगे हैं वह यदि निन्द्य न हो और हमारी प्रवृत्ति उसकी ओर हो तो हमें अपनी सारी शक्तियोंसे उसीमें लगे रहना चाहिये । ऐसा करनेसे हमें कभी पश्चात्ताप करनेका अवसर न मिलेगा । जो कार्य्य हमारे सामने उपस्थित है उस-के पूरा करनेमें सारी शक्तियाँ लगा देना ही हमारा परम कर्त्तव्य है । ध्यान केवल इसी बातका रखना चाहिये कि हमारा वह कार्य्य, वह

उद्देश्य पवित्र और प्रशंसनीय हो और हम उसमें बराबर ईमानदारी-से लगे रहें।

अपने लिये कोई ऐसा काम ढूँढ़ निकालना जिसमें हमें पूरी सफ-लता हो सके, बहुत कठिन नहीं है। हमारी प्राकृतिक प्रवृत्ति कई प्रकारसे अपना परिचय दे देती है। बहुतसे लोगोंकी प्राकृतिक प्रवृत्ति-का परिचय तो उनकी बाल्यावस्थामें ही मिल जाता है। जो लोग अधिक प्रतिभा-शाली होते है उनकी प्रवृत्ति किसी प्रकार दबाये दब ही नही सकती। उसीसे सम्बन्ध रखनेवाले विचार उनके हृदयमें आते हैं और उसीके वे स्वप्न भी देखते हैं। सब अवस्थाओंमें वे उसीमें तन्मय रहते है। जो मनुष्य किसी संभावित उद्देश्यकी पूर्तिके लिये दिन रात चिन्ता और प्रयत्न करता रहता है उसके लिये निराश होनेका कोई विशेष कारण नहीं है। हॉ, पहले उद्देश्य निश्चित करनेमें किसी प्रकारका उतावलपन न करना चाहिये। जब एक बार उद्देश्य स्थिर हो जाय तो शीघ्र ही यह न समझने लग जाना चाहिये कि यह अयुक्त अथवा कष्टसाध्य है। सदा नम्र, साहसी और धीर रहना चाहिये। कुछ लोग जल्दी जल्दी अपने काम बदला करते है, फल यह होता है कि वे एकमें भी कृतकार्य्य नहीं होते। इसके अतिरिक्त अपने पेशे या कामसे कभी घृणा न करनी चाहिये। कुछ लोग शारीरिक श्रम अथवा किसी प्रकारकी छोटी मोटी दूकान करना अपनी शानके खिलाफ समझते है। यह बड़ी उपहासास्पद भूल है। तुम अपने कामको अपना कर्तव्य समझकर करो; और कर्त्तव्य-पालनसे बढ़कर प्रशंसनीय और कोई चीज हो ही नही सकती। याद रक्खो, परिश्रम कभी मनुष्यका महत्त्व नहीं घटा सकता, केवल मूर्ख ही परिश्रमका महत्त्व घटा देते हैं। कीर्ति प्राप्त करनेका उपाय कर्तव्य-पालन ही है, निकम्मे बैठे रहना नहीं।

तीसरा अध्याय ।

कुछ आवश्यक गुण ।
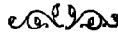
एक ही लक्ष्यपर सारी शक्तियाँ लगाओ—'लकीरके फकीर'—शक्तिका विकाश—स्वास्थ्यका सदा ध्यान रक्खो—बहुतसे काम एक साथ छेड़नेसे हानियाँ—धैर्य्यकी आवश्यकता—अपने विचारपर अटल और दृढ़ रहनेका फल—निरन्तर अभ्यास—आत्म-संयम—कुछ उदाहरण—विपत्तियोंका सामना—परिस्थिति और साधन—योग्य मनुष्य हर एक चीजसे अपना काम निकालता है—आत्म-निर्भरता—योग्यता और आवश्यकता—अपना कर्त्तव्य पहचानो—कुछ आवश्यक बातें—स्वार्थी होना बड़ा भारी पाप है—सदा परोपकारी बनो—कार्य्यपटुता—उसका महत्त्व और आवश्यकता—भोलेपनके कुछ उदाहरण—प्रतिभा और पटुता—आपत्तिके समय कर्त्तव्य निश्चित करना—कुछ उदाहरण—उपस्थित-बुद्धि—उत्तमअभ्यास—सर्वप्रियता—धनके इच्छुक चैन नहीं कर सकते ।

कोई उत्तम उद्देश्य स्थिर कर लेनेके बाद सफलतापूर्वक उसकी पूर्ति करनेके लिये यह बात बहुत ही आवश्यक है कि मनुष्य दृढता, एकाग्रता और अध्यवसायपूर्वक उसमें लगा रहे । बहुतसे कार्य्योंमें हाथ लगाकर सबमें विफल-मनोरथ होनेकी अपेक्षा किसी एक कार्य्यको योग्यतापूर्वक समाप्त करके उसमे यश और सफलता प्राप्त करना कहीं अच्छा है । जो मनुष्य बिना लक्ष्य-भ्रष्ट हुए निरन्तर परिश्रम करता रहता है उसके यशस्वी होनेमें कोई सन्देह नहीं रह जाता । यदि किसी कारणवश हमें उसमें पूर्ण विजय न प्राप्त हो, तौभी हम बुरी

तरह परास्त होनेके दोषसे अवश्य बच जायँगे। युद्धमें बुद्धिमान् सेनापति एक ऐसा स्थान ढूँढ़ निकलता है जहाँ शत्रु निर्बल या विवश हो, और फिर उसी स्थानपर अपनी सारी शक्तियाँ एकत्र करके वह आक्रमण करता और बहुधा विजय प्राप्त करता है। यही दशा अपने जीवन और सांसारिक व्यवहारोंकी समझनी चाहिये। एक बार जब हम उपयुक्त कार्य्य, अवसर या स्थान ढूँढ़ लेगे और उसीपर अपनी सारी बुद्धि और शक्ति लड़ा देंगे तो हमारे कृतकार्य्य होनेमें बहुत ही थोड़ा—बल्कि नहीके बराबर—सन्देह रह जायगा। प्रत्येक महान् पुरुषने उसी मानमें महत्ता प्राप्त की है, प्रत्येक सफल मनुष्यने उसी मानमें सफलता प्राप्त की है जिस मानमें उसने अपनी सारी शक्तियोंको किसी विशिष्ट मार्गमें लगा दिया है। इस बातको प्राय सभी बड़े बड़े लोगोने स्वीकार किया है कि किसी कार्य्यको हाथमें लेकर उसे पूरा करनेमें कोई बात उठा न रखना ही सफल होनेका मूलमन्त्र है। एक विद्वान्का कथन है—'मेरा यह विश्वास नित्यप्रति दृढ़ होता जाता है कि महान् और तुच्छ, बलवान् और निर्बल मनुष्योंमें केवल एक ही भेद है और वह भेद 'दृढ निश्चय' है। यह दृढ़ निश्चय ऐसा होना चाहिये कि एक बार उद्देश्य स्थिर करके या तो बिना उसे पूरा किये और या बिना मरे कभी न छोडना चाहिये।" संसारमे जितने कार्य्य हो सकते है उन सबको पूरा करनेके लिये यही गुण यथेष्ट और यही गुण आवश्यक है। साधारण योग्यताका मनुष्य भी यदि इसका आश्रय ले तो कभी किसी प्रकारकी परिस्थिति, प्रतिकूलता या त्रुटि उसके मार्गमें रुकावट नहीं डाल सकती।

एक उद्देश्य स्थिर करके उसे अपनी सारी शक्तियोंका क्रीड़ास्थल बना दो, तुम्हारा काम सिद्ध हो जायगा। चित्तको एक ओर और व्यवस्थित न रखना ही सबसे भारी दुर्गण है। प्राय: लोग एक साथ ही बहुतसे काम करनेके प्रयत्न करते हैं और इसी लिये वे कोई काम पूरा

और अच्छी तरह नहीं कर सकते। यह दोष आजकल इतना अधिक बढ़ गया है कि सभी स्थानोंपर उसका कुछ न कुछ अधिकार अवश्य दिखाई देता है। एक शिक्षाविभागको ही लीजिये जिसका उत्तर-दायित्व सबसे बढ चढ़कर है। प्रत्येक साधारण बालकको विद्यालयमें कमसे कम दो तीन भाषाएँ, गणित (रेखा, अंक और बीज), इति-हास, विज्ञान, चित्रकारी, भूगोल और अन्य कितने ही विषय सीखने पडते है। बालकोंका स्वास्थ्य ठीक न रहनेका भी यही कारण है और उनके किसी विषयमें पारगत या दक्ष न होनेका भी यही। यह दोष एकदेशीय नही, बल्कि जगव्द्यापी हो रहा है और बड़े बड़े विद्वानों-का ध्यान भी इसकी ओर गया है। प्रत्येक विषय वा पक्षका विस्तार तो बहुत अधिक कर दिया जाता है पर उसकी गूढता या गम्भीरताका कोई ध्यान नहीं रक्खा जाता। सब लोग यह बात भूल से गये हैं कि " एकहि साधे सब सधे, सब साधे सब जाय। "

' लकीरके फकीर ' होनेवाले लोगोंकी हँसी उड़ाई जाती है और वास्तवमें केवल लकीर पीटना है भी अयुक्त और निन्दनीय। पर यह बात स्मरण रखनी चाहिये कि उद्देश्यपूर्तिके लिये चित्तकी एकाग्रता और चीज है और लकीर पीटना और चीज। साथ ही बहुश्रुत और बहुज्ञ होना भी बुरा नहीं है; बुरा है किसी एक विषयको अपना लक्ष्य न बनाकर सब विषयोंके पीछे दौड़ना। केवल एक विषयको अपने विचारोंका पूरा आधार बनाकर भी हम अन्य विषयोंका यथेष्ट परिचय और ज्ञान प्राप्त कर सकते है। एक यात्री सीधी और साफ सड़कपर चलता हुआ उसके दोनों ओरकी हरियालीका आनन्द ले सकता है और पक्षियोंका सुन्दर गान सुनकर अपना चित्त प्रफुल्लित कर सकता है। हरियालीका आनन्द लेनेके लिये उसे सड़क छोड़कर खेतकी मेड़ों और नालियोंमें जाने अथवा पक्षियोंका चहकना सुननेके लिये पेड़ोंकी

डालियोंपर चढ़नेकी आवश्यकता नहीं होती। खेतोंमें केवल बोने, सीचने और काटनेवालोंको जाना चाहिये और पेड़ोंपर चढ़नेका अभ्यास भयानक जन्तुओंसे भरे हुए जंगलोंमें रहनेवालोंको करना चाहिये, छोटे बड़े सभी राहचलतोंको उसकी वैसी आवश्यकता नहीं। जब हम किसी कार्य्यमें हाथ लगा चुकते है तो और भी अनेक कार्य्य अपनी सुन्दरता या उपयोगिताके कारण हमें अपनी ओर खीचने लगते हैं। उनके प्रलोभनोंमें हमें उसी सीमातक आना चाहिये, जहाँतक कि हमारे मूल कार्य्यमें क्षति न पहुँचे। नही तो एकके बाद एक सभी कार्य्य हमें अपनी ओर खींचने लगेंगे और तब "दोनों दीनसे गये पाँड़े, हलुआ हुए न माँड़े" वाली कहावत हमपर चरितार्थ होगी।

यह एक स्वाभाविक नियम है कि, जब मनुष्य अपनी किसी विशेष शक्तिसे बहुत अधिक काम लेने लग जाता है तो उसकी शेष शक्तियाँ धीरे धीरे मन्द पड़ जाती है। इस बातने एक अच्छे लेखकका ध्यान अपनी ओर यहाँतक आकर्षित किया कि उसे अन्तमें लिखना पड़ा— "प्रत्येक कार्य्यमें कुछ न कुछ स्वतन्त्र विशेषता और विलक्षणता होती है, और उस काममें जो मनुष्य लगता है उसकी अनेक शारीरिक, मानसिक और नैतिक शक्तियाँ बेतरह ठंढी पड़ जाती हैं। बहुत अधिक काम करते करते जुलाहा एक जानदार करधा बन जाता है, विद्या-व्यसनी एक जीवित विश्वकोश हो जाता है और वकील साहब का-नूनी किताबोंकी चलती फिरती अलमारी बन जाते हैं। अब वह समय दूर नहीं है जब कि एक पूरा आदमी तैयार करनेके लिये दिमाग एक आदमीका लेना होगा, इन्द्रियाँ दूसरे आदमीकी, हृदय तीसरे आदमीका और शरीर चौथे आदमीका।" चित्तकी एकाग्रताको इस सीमातक पहुँचनेसे बचानेकी भी उतनी ही आवश्यकता है,

जितनी कि स्वयं चित्तकी एकाग्रताकी । किसी एक उद्देश्यकी पूर्तिके लिये अपनी सारी शक्तियोंका बुरी तरह बलिदान कर देना कभी प्रशसनीय नहीं कहा जा सकता। सब शक्तियोंको कुछ न कुछ जागृत रख कर उद्देश्य-सिद्धिका प्रयत्न करना ही सबको अभीष्ट होना चाहिये।

इसी प्रसंगमे यह भी कह देना आवश्यक जान पड़ता है कि किसी कार्य्यमें मनुष्यको इतना अधिक न लग जाना चाहिये कि उसका स्वास्थ्य जबाब दे दे। जो लोग अपने कर्त्तव्यका इतना अधिक ध्यान रखते हैं वे बड़ी भारी भूल करते है। जब हम किसी कार्य्यको अपना कर्तव्य समझ लें तो उसके पालन और निर्वाहके लिये हमारा अस्तित्त्व बहुत आवश्यक है और इस आवश्यकताको पूरा करनेके लिये हमें अपने शरीर और आत्माका भी पूरा पूरा ध्यान रखना चाहिये । जब हम कोई लम्बा चौड़ा काम आरम्भ करे तो हमें यह भी उचित है कि बीच बीचमें कोई ऐसा काम भी छेड़ दें जिससे हमारी तबीयत बदल जाय। इससे हमारी शक्ति और उत्साहमे एक विलक्षण नवीनता आ जायगी और हमारे मूल उद्देश्यकी पूर्तिमें और भी सहायता मिलेगी। इन सिद्धान्तोंका ध्यान न रखनेके कारण बहुतसे लोग अपने प्राणतक खो चुके है। बीच बीचमें चित्तको प्रफुल्लित करके अपने कार्य्यमें लगे रहनेवाले लोग भी प्राय. उतना और वैसा ही अच्छा काम कर लेते हैं जितना उसे चक्कीकी तरह दिन रात पीसनेवाले लोग करते हैं । अन्तमें चलकर "सखी और सूमका लेखा बराबर" हो ही जाता है।

जीवनकालमें होनेवाली अनेक प्रकारकी कठिनाइयोंकी शिकायत करते हुए प्रायः लोग अनेक त्रुटियोंका भी जिक्र करते है। पर यदि ध्यानपूर्वक देखा जाय तो जान पड़ेगा कि अनेक प्रकारके अभावों और परिस्थिति आदिके कारण लोगोंको उतना हताश नहीं होना पड़ता

जितना कि बहुतसे कामोंको एक साथ छेड़ देने और उन्हें अव्यवस्थित रीतिसे करनेके कारण होना पड़ता है। हमारे इस कथनसे बहुतसे लोग सहमत होंगे कि लोग अपनी योग्य मानसिक शक्तियोंका दुरुपयोग करके ही उन्हें नष्ट कर देते हैं और अपने आपको किसी योग्य नही रखते । जिस प्रकार वह सेनापति, जो अपने सैनिकोंको बहुत दूर तक इधर उधर छितरा देता है, कभी विजय नहीं प्राप्त कर सकता, उसी प्रकार वह मनुष्य भी जो कि अपना ध्यान बहुतसे विषयोंपर बेढंगी तरहसे बँटा देता है, कभी सफलता नहीं प्राप्त कर सकता। आदमीके मनकी तुलना आतशी शीशेसे दी जा सकती है। जिस प्रकार आतशी शीशेसे गरमी उत्पन्न करनेके लिए उसपर पड़नेवाली सब किरणोंको एक ही केन्द्रपर इकट्ठा करना पड़ता है उसीप्रकार मनुष्यको किसी कार्य्यकी पूर्तिके लिये अपनी वृत्तियों और शक्तियोंको एकाग्र करके उस कामपर लगानेकी आवश्यकता होती है । आकाशमें इधर उधर छितराये हुए बादलके टुकड़ोंसे कोई काम नही निकलता । छाया अथवा वर्षा उसी समय होती है जब कि सब बादल एकत्र हो जायँ।

ऊपर कही हुई सब बातोंका निचोड़ यही है कि जीवनमें एक सात्त्विक उद्देश्य निश्चित करके उसकी सिद्धिके लिये अध्यवसाय और सारी शक्तियोंसे उसमें लग जाना चाहिये और किसी प्रकारकी विघ्न बाधाओंसे घबराना न चाहिये। साथ ही किसी काममें इतना तन्मय हो जाना भी ठीक नही कि उससे स्वास्थ्य अथवा अन्य कार्य्यों या बातोंको हानि पहुँचे ।

साधारणतः प्रत्येक कार्य्यके होनेमें कुछ न कुछ समय लगता है । एक ही दिनमें न तो कोई बहुत बड़ा विद्वान् बन सकता है और न धन्ना सेठ । कहींसे अचानक बहुतसा रुपया पाकर जो लोग तुरन्त धनवान् बन जाते है उनकी बात छोड़ दीजिये । संसारमें बहुत अधिक

संख्या ऐसे ही लोगोंकी है जिन्हें प्रत्येक कार्य्यमें बहुत अधिक समय लगता है और लगना चाहिये। नेपोलियनने एक अवसरपर कहा था,— "एक ही आक्रमणमें एक सेनापति तो बहुत बड़ी विजय प्राप्त कर सकता है पर एक ही हल्लेमें कोई व्यापारी उतनी सम्पत्ति नहीं पा सकता।" इसके अतिरिक्त विद्या या द्रव्य आदि उपार्जित करनेमें अधिक समय लगना भी आवश्यक और युक्ति-युक्त है। विद्या तो किसीको एक कटोरेमे घोलकर पिलाई ही नहीं जा सकती। रहा धन, सो वह भी यदि किसीके पास इकट्ठा आ जाय तो न तो वह उस धनका उचित आदर और उपयोग ही कर सकेगा और न उसकी यथेष्ट रक्षा ही। क्योंकि यह एक निश्चित सिद्धान्त है कि जो चीज जितने परिश्रमसे मिलती है उसकी उतनी ही कदर भी होती है। बहुत ही सरलता-पूर्वक या बिना प्रयास मिली हुई चीज प्रायः नष्ट ही हो जाती है, उसका बना रहना बहुत ही कठिन, प्रायः असम्भव है।

अनादि कालसे बड़े बडे विचारवान् यही कहते आये हैं कि परिश्रम और धैर्य्यका कुछ न कुछ फल अवश्य होता है, यह दूसरी बात है कि वह फल आज हो या दस दिन बाद। परिश्रम करते समय मनुष्यको न तो कभी घबराना चाहिये और न निराश होना चाहिये। यदि आज कलके अधिकाश युवकोंकी भाँति भगीरथ थोड़ी सी तपस्या करके ही हताश हो जाते तो वे गंगाको इस लोकमे कदापि न ला सकते। बिना धैर्य्य-पूर्वक परिश्रमके इतने बड़े महाराष्ट्र साम्राज्यका स्थापित होना असम्भव था। यदि जस्टिस महादेव गोविन्द रानडे और ईश्वरचन्द्र विद्यासागर धनहीनताके कारण मार्गमें पडनेवाली अडचनोंको देखकर जहाँके तहाँ रह जाते तो आज कोई उनका नाम भी न जानता।

बहुत अधिक सहनशील और धीर होकर अपनी विचार-शक्ति भी बहुत कुछ बढाई जा सकती है। कुछ लोगोंका सिद्धान्त है कि परि-

श्रम करनेसे विचार-शक्ति जाती रहती है; पर यह बात ठीक नही है। विचार-शक्ति ही मनुष्यको परिश्रमपूर्वक कार्य्य करनेके लिये उत्तेजित करती है। विचार-शक्तिकी सहायतासे ही मनुष्य धैर्य्यपूर्वक परिश्रम करनेका वास्तविक महत्त्व और मूल्य समझता है। जो लोग अपनी शारीरिक और मानसिक शक्तियोंको बराबर बराबर नहीं चला सकते वे ही प्राय. भारी धोखा खाते है। विचार-शक्ति ही हमें यह बतलाती है कि हम अपने उद्देश्यपरसे अपना लक्ष्य न हटावें और जब हम अपना उद्देश्य पूरा करनेके लिये दृढ़ बने रहेगे तो हमें उसकी पूर्तिका कोई न कोई मार्ग भी मिल ही जायगा। जो मनुष्य इच्छा करता है वह या तो मार्ग ढूँढ़ निकालता है और या नया मार्ग बना लेता है। केवल अकर्मण्य ही अनेक प्रकारके बहाने और शिकायतें करते हैं। जिस मनुष्यकी शारीरिक और मानसिक स्थिति साधारणतः ठीक है वह यदि इच्छा करे तो अवश्य कोई न कोई मार्ग निकाल लेगा। ऐसे मनुष्य वे सब काम कर सकते है जो कि आजतक संसारमें किसी मनुष्यने किये है अथवा जिनका कार्य्य-रूपमे होना सम्भव है। जो लोग हृदयसे कोई काम करना चाहते है वे अपना रास्ता आप बनाते है, झाड़ झंखाड़से उसे साफ करते हैं और सारी रुकावटोंको जड़से खोदकर फेंक देते हैं। बड़े बड़े पहाड़ोंमें गुफाएँ बनाकर रेलवे ले जाना इसी अध्यवसाय और दृढ़ निश्चयका फल है, स्वेज और पनामाकी नहरें इसीका प्रसाद हैं और रामेश्वरके निकट समुद्रपर बना हुआ रेलका नया पुल इसीकी बदौलत है। यदि मनुष्यको अपने आप और अपने उद्देश्यकी साधुता और सत्यतापर पूरा पूरा विश्वास हो तो सफलता भी उसके लिये बहुतसे अंशोंमें अवश्यम्भावी है। ऐसा मनुष्य चाहे संसारको सन्तुष्ट न भी कर सके पर अपनी आत्माको अवश्य सन्तुष्ट कर लेता है। यदि हम मनुष्य-जातिके उत्कर्षका इतिहास देखें तो

समस्त बडे बडे कार्य्योंके मूलमें हमें अध्यवसाय और दृढ़ निश्चयके अतिरिक्त और कुछ भी दिखाई न देगा। बौद्ध, ईसाई और मुहम्मदी आदि बडे बड़े मत इन्हीं दोनोंके द्वारा प्रतिष्ठित हुए है। एक विद्वान् कहता है–"दुनिया मिट्टी नही बल्कि लोहा है और मनुष्यके हाथमें उसे अपने योग्य और अनुकूल बनानेके लिये हथौडा दिया गया है, आवश्यकता है उसे दृढ़तापूर्वक निरन्तर चलानेकी।"

एक और विद्वान् कहता है—"अपने कार्य्योंमें अनुरागपूर्वक प्रयास करनेसे ही मनुष्य बड़ा भारी ज्ञाता बन सकता है। निरन्तर अभ्याससे ही मनुष्य किसी कार्य्यमे दक्ष हो सकता है। इन सब-का कारण क्या है? स्पष्टत इसका यही कारण है कि हमारी प्रकृति ही ऐसी बनाई गई है कि हम बिना ऐसा किये किसी प्रका-रका ज्ञान, विद्या, कला, कौशल या और कोई ऐसी बात नही सीख सकते जो हमें कोई कार्य्य करनेके योग्य बना सके। किसी कामको करनेका ढंग जान लेना ही यथेष्ट नही है। उसे पूरा करनेकी वास्तविक शक्तिका अर्थ यह है कि वह विद्या या कला हमारी रग रगमें पैठ जाय और मार्गमें पडनेवाली अड़चनोंकी रत्ती भर भी परवा न करके उसके साधारण अंगोको हम उतनी ही जल्दी और अनजानमें पूरा कर डालें जितनी जल्दी और अनजानमें हम रास्तेमे फिसलनेके समय गिरनेसे बचनेके लिये किसी सहारेपर हाथ डालते हैं।"

कार्य्य-साधनमे दूसरी बडी आवश्यकता आत्मसंयम या आत्म-निग्रहकी होती है। अपने मिजाजको काबूमे रखना, बहुत जल्दी प्रसन्न या अप्रसन्न न हो जाना, प्रत्येक विषयपर शान्त होकर न्यायसंगत विचार करना और वासनाओको अधिकारमें रखना, आदि बातें इसकि अन्तर्गत हैं। राबर्ट एन्सवर्थ नामक कोशकारकी स्त्रीने एक बार बड़े क्रोधमे आकर जब अपने पतिकी एक बडी हस्त-लिखित प्रति आगमें

झोंक दी तो एनस्वर्थ शान्तिपूर्वक कलम दवात लेकर उसे फिरसे लिखने बैठ गया। कारलाइलके साथ भी एक बार ऐसा ही हुआ था। उसने अपनी एक पुस्तककी हस्त-लिखित प्रति अपने एक मित्रको पढ़नेके लिये दी थी; उस मित्रके नौकरने उसे रद्दी कागजोंका बंडल समझकर उससे आग जला डाली ! यद्यपि मूल ग्रन्थ बड़े शौक और परिश्रमसे लिखे जाते हैं और किसी ग्रन्थको केवल स्मरण-शक्तिकी सहायतासे दोबारा लिखना बहुत ही नागवार गुज़रता है पर तौ भी कारलाइलने अपने मित्रसे कुछ भी न कहा और पुनः वह ग्रन्थ लिख डाला। एक मनुष्यने भीड़में अपना पैर कुचला जानेके कारण उस कुचलनेवालेको जोरसे एक थप्पड़ मारा। थप्पड़ खानेवालेने बहुत ही नम्रतापूर्वक कहा—" महाशय, आपको यह जानकर दुःख होगा कि मै अन्धा हूँ। "

आत्म-संयममें कभी जल्दवाजी नही होती। उसके सब काम ठीक समयपर होते हैं। इस सम्बन्धमें धैर्य्यको भी उसका एक अंग समझना चाहिये। बहुतसे लोग उतावलेपनके कारण फलोंको पकनेसे पहले ही तोड़ लेते है; पर आत्मसंयम उन्हें ऐसा करनेसे रोक सकता और रोकता है। वह ठीक समयपर मनुष्यसे काम कराता है और यदि एक बार वह काम ठीक न उतरे तो पुनः उससे शांतिपूर्वक वही काम कराता है। संसारमें कठिनतासे कोई ऐसा महान् पुरुष मिलेगा जिसे पहले प्रयत्नमें विफलता न हुई हो। विफल-मनोरथ होनेमें किसी प्रकारकी लज्जा नहीं है, वास्तविक लज्जा उसके लिये फिरसे प्रयत्न न करनेमें ही है। हताश हो जानेवाला मनुष्य कभी कोई काम नही कर सकता। आत्मसंयम मनुष्यको कभी हताश नहीं होने देता, बल्कि उसे काम करनेकी और अधिक शक्ति प्रदान करता है। जिस समय हमारे ऊपर चारों ओरसे विपत्तियोंकी बौछार होने लगती है उस समय आत्मसंयम एक मजबूत ढालका काम देता है। जीवन-कालमें अनेक प्रकारके

संकटों, कठिनाइयों और बाधाओंका आना स्वाभाविक और अनिवार्य्य है; पर यदि हम वीरता, धैर्य्य और साहसपूर्वक उनका सामना करे तो उनसे हमें बहुत ही थोडी हानि पहुँचेगी । दु:ख उस समय कभी हमारे सामने नही ठहर सकता जब कि हम दृढतापूर्वक उसके सामने डटे रहें । कायरोंको ही अपना पीछा करनेवालेके पैरोंकी आहट सुनाई देती है, वीरोंको नही । यद्यपि दरिद्रता या इसी प्रकारके किसी और कष्ट-का वास्तविक मूल्य या उपयोग समझना सहज नहीं है, पर इतना अवश्य समझ लेना चाहिये कि बिना तपे सोनेका रंग नही खिलता । जबतक हमें प्रमाणित करनेका कोई अवसर न मिले तबतक हम यह कैसे कह या समझ सकते है कि हममें आत्म-निग्रह है । अनुभव हमें यही बतलाता है कि बिना परिश्रमके जीवनसे किसी प्रकारका लाभ नही उठाया जा सकता । जबतक जमीन अच्छी तरह जोती बोई न जाय तबतक उसमे अच्छी फसल नही हो सकती । बिना कष्ट सहे मनुष्यमें शक्ति नही आती । कष्ट ही एक ऐसी चीज है जो हमारी शक्तियोंको मन्द नही होने देता और हमसे बराबर काम कराता रहता है । दृढ़निश्चयसे ही कठिनाइयॉ दूर होती है और कठिन परिश्रमसे मार्गकी रुकावटें हटती है । ये सब चीजे हमारे मनुष्यत्त्व और आत्मबलकी परीक्षा करती है और हमें आत्म-संयमी बनाती है ।

परिस्थिति और साधनोंकी शिकायत करना भी बड़ी भारी भूल है । जिस मनुष्यमें कुछ भी वास्तविक योग्यता होती है वह प्रत्येक मिलने-वाली चीजसे ही अपना कुछ न कुछ काम निकाल लेता है और उसे अपने लिये उपयोगी बना लेता है । आजसे हजार बरस पहले लोग बहुत साधारण नावोंकी सहायतासे भी बडे बडे समुद्र पार कर ही लेते थे और अब भी सैकडों नये नये वैज्ञानिक आविष्कार हो जाने और बड़े

बड़े जहाज बन जानेपर भी पार ही कर लेते हैं। आदमी काम करने-वाला होना चाहिये, फिर उसे चाहे जैसे साधन मिलें उनसे वह काम निकाल ही लेगा। यदि हमें विज्ञानका शौक हो और हम शीशेकी बहुमूल्य नलियाँ और बड़ी बड़ी बोतलें खरीदनेमें असमर्थ हों तो हमें नरकट या हुक्केकी निगाली और मिट्टीकी नाँदसे ही काम चला लेना चाहिये। अच्छे उपकरण अवश्य अधिक उपयोगी होते हैं, पर उनके अभावमें हमें एकदम हाथपर हाथ रखकर बैठ न जाना चाहिये। पहले हमे जितनी सामग्री मिल सकती हो उतनीसे ही काम चलाना चाहिये। जब हम उन सबसे लाभ उठा लेंगे तो हमें अनायास ही कुछ और अधिक सामग्री भी मिल ही जायगी। एक विद्यार्थीने एक प्रसिद्ध चित्र-कारसे पूछा—"महाशय, आप रग किस चीजसे मिलाते हैं?" उत्तर मिला—"बुद्धिसे," और वास्तवमें यही मूल सिद्धान्त है। बढ़िया बढ़िया सामानोंके मिल जानेपर भी बिना बुद्धिके कोई काम नही निकल सकता।

आत्म-निर्भरता भी बडा भारी गुण है। प्रसिद्ध विद्वान् बेकन कहता है—"जान पड़ता है कि लोग धन और बलका वास्तविक अर्थ नही समझते। धनका महत्त्व तो वे आवश्यकतासे अधिक और बलका आव-श्यकतासे कम समझते है। आत्म-निर्भरता और आत्म-निग्रह दोनों ही मनुष्यको अपनी टकीसे पानी पीना और अपनी रोटी खाना सिखलाते है। * अपनी जीविका निर्वाह करनेके लिये स्वयं सच्चा परिश्रम करनेकी शिक्षा देते है और मनुष्यको जितनी अच्छी चीजें मिली है उन सबका सदुपयोग कराते है।" वास्तविक धनवान वही है

---

* एक कवि कहता है—

"अपनी रूखी खाइ के, ठढा पानी पीव।
देख पराई चोपड़ी, मत ललचावे जीव॥"

जिसे केवल अपनी योग्यता और बाहुबलका भरोसा हो । ऐसा मनुष्य अवसर पड़नेपर सदा प्रस्तुत, शान्त और कर्त्तव्य-परायण रहता है और उसे किसी बातकी कमी नहीं होती । पर जो मनुष्य दूसरोंके भरोसे चलता है वह अवसर पड़नेपर भयभीत और अकर्म्मण्य हो जाता है । मनुष्यके लिये वास्तविक प्रसन्नता उसी समय होती है जब कि वह बिना किसी पथदर्शककी सहायताके अपने मार्गमें चल पड़ता अथवा अपने काममें भिड़ जाता है । जो मनुष्य आप अपने पैरोंपर खड़ा होना जानता है, उसे संसारमें और किसी चीजकी आवश्यकता नहीं रह जाती ।

आत्म-निर्भरता ही मनुष्यका सर्वस्व है । अँगरेजीकी एक कहावत-का अभिप्राय है—" जो लोग अपनी सहायता आप करते हैं उनकी सहायता ईश्वर भी करता है " । सारी कठिनाइयाँ दूर करनेका यह सबसे अच्छा मूलमन्त्र है । जो लोग स्वय कोई कर्तव्य या उद्योग न करके केवल ईश्वरसे प्रार्थनाएँ किया करते हैं उनपर ईश्वर भी दया करनेकी कोई आवश्यकता नहीं समझता । गोसाई तुलसीदासजीने कहा है—" कादर मन कर एक अधारा । दैव दैव आलसी पुकारा " । जो लोग अकर्म्मण्य होते है, जिन्हें परिश्रम करनेमें भय या लज्जा है, अथवा जो ईश्वरीय कृपाके अपात्र होते है वे ही हाथपर हाथ रखकर ईश्वरीय कृपाके भिक्षुक भी बनते हैं । स्वयं कमर कसकर काममें लग जाओ और तब देखो कि ईश्वर भी बिना तुम्हारी प्रार्थनाके आप ही आप तुम्हारी कितनी सहायता करता और तुम्हारे मार्गकी कितनी कठिनाइयाँ हटाता है । अपने अन्तःकरणसे मिलनेवाली सहायता मनुष्यको सबल बनाती है और दूसरोंसे मिलनेवाली सहायता दुर्बलता उत्पन्न करती है । जिस मनुष्यमें आत्मनिर्भरता है वही अपनी रक्षाके सारे उपाय कर सकता है । दूसरोंकी सहायतापर निर्भर रहनेवालेकी स्थिति बड़ी ही अर-

क्षित होती है। नारियल या घड़ेकी सहायतासे आदमी कभी तैरना नहीं सीख सकता, तैरना वही सीखेगा जो साहस करके पानीमें कूद पड़ेगा और हाथ पैर मारेगा।

जिस समय अमरसिंह राठौर जोधपुरसे निकाल दिये गये उस समय क्या वे एकदम निराश और किं कर्तव्यविमूढ़ होकर बैठ गये थे? नहीं, उन्होंने उत्साहपूर्वक कहा था—"हमारा राज्य तो यह खड्ग है। इसकी दोनों धारें राज्यकी सीमा, इसका सिरा सिंहासन और इसकी मूठ हमारा खजाना है। इसकी सहायतासे एक मारवाड़ क्या सारी पृथिवीका राज्य किया जा सकता है।" यद्यपि अमरसिंह अपनी अभिलाषा पूरी न कर सके थे और इससे पहले ही वीरगति पा चुके थे तथापि शाहजहानेके दरबारमें पहुँचकर उन्होंने जो हलचल मचाई थी और जिस प्रकार अपने शत्रुओंके दाँत खट्टे किये थे, उससे मानना पड़ता है कि वे बड़े ही दृढ़निश्चयी, वीर, साहसी और कर्मशील थे।

उन्नति और सफलताको कोई तो भाग्याधीन बतलाता है और कोई उन्हें चतुराई और धूर्त्ततापर अवलम्बित करता है। कोई बड़े बड़े धनवानोंकी सहायताको सबसे बड़ा साधन समझता है और कोई किसी दैवी शक्तिको। जिसकी समझमें जो आता है वह वही बतलाता है। पर जो लोग संसारके बहुतसे लोगोंके उन्नति-क्रमपर खूब विचार करते हैं वे शीघ्र ही समझ लेते हैं कि इन सब कथनोंमें कोई विशेष सार नही है। उन्नति और सफलता प्राप्त करनेके लिये दूसरोंका मुँह ताकने और प्रतिकूल परिस्थितिके कारण हताश होकर बैठनेसे कभी काम नहीं चलता; काम निकलता है केवल सब प्रकारकी कठिनाइयोंको तुच्छ समझने और अपने निश्चयपर दृढ़ रहकर प्रयत्न करते रहनेसे। जो लोग वास्तवमें 'मनुष्य' कहे जाने योग्य होते हैं वे दूसरोंकी सहायताकी जरा भी परवा नहीं करते। दूसरोंकी सहायताकी अपेक्षा

करना ही अपनी अयोग्यता और असमर्थता सिद्ध करना है। इसके सिवा मनुष्यकी सारी शक्तियोंके लिये वह बहुत घातक है। योग्यता और आवश्यकता दोनों पास ही पास रहती हैं। यदि हममें योग्यता नहीं है तो हमारी आवश्यकताएँ कभी पूरी नही हो सकती।

कठिनाइयाँ झेलकर सशक्त बनना ही जीवनका रहस्य जान पड़ता है। जो मनुष्य कठिन परिश्रम करके जगलों और पहाड़ोंका चक्कर लगाता हुआ खून बहते हुए पैरोंसे घर आता है उसीके साथ सबकी और साथ ही ईश्वरकी भी सहानुभूति होती है। पर गद्दी लगाकर चुपचाप लेटे रहनेवालेके साथ किसीकी कभी सहानुभूति नही होती। कर्त्तव्य-पथ बडा ही बीहड़ और काँटोसे भरा हुआ है। जो उसपर चलनेमें समर्थ होता है वही उन्नत, सफल और सुखी कहलाता है। विपत्तियाँ, झंझटें और विफलताएँ आदि ही हमारी शक्तियोंको जागृत और उन्नतिशील बनाती हैं, हमे और अधिक परिश्रम करनेकी सामर्थ्य देती है और हममें आत्म-निर्भरताका पवित्र और उच्च गुण उत्पन्न करती हैं। उनसे हमें कभी घबराना न चाहिये। हमें सदा यही समझना चाहिये कि प्रत्येक मनुष्यका ससारमें कुछ न कुछ निश्चित उद्देश्य और कर्त्तव्य है और वह उद्देश्य और कर्त्तव्य अपने और समस्त मानवजातिके हितके लिये कोई काम करना है। इसकी पूर्त्तिके लिये हमें अपने विचारों और कार्य्योंमें स्वतंत्र बननेका अभ्यास करना चाहिये। संसारके सब मनुष्योंमें परस्पर एक प्रकारका सम्बन्ध है और उस सम्बन्धके कारण प्रत्येक मनुष्यके कार्य्योंका संसारके अन्य मनुष्योंपर किसी न किसी रूपमें अवश्य प्रभाव पड़ता है। हमारे कार्य्योंका प्रभाव हमारे संगी साथियो और हमें जाननेवालोंपर पड़ता है और आगे चलकर उन लोगोंका प्रभाव उनसे संसर्ग रखनेवालोंपर पड़ता है। इस प्रकार यह क्रम बराबर बढ़ता जाता है और समस्त संसार आच्छादित कर लेता है। हमारे कार्य्य और आचरण आदि

एक ऐसा स्वरूप धारण कर लेते हैं जो किसी न किसी रूपमें स्थायी और प्रभावशाली हो जाता है। यही विचार हमें उच्च और आदर्श जीवन व्यतीत करनेकी आवश्यकता बतलाता और हमें उसके लिये उत्तेजित करता है। संसारके अन्य मनुष्योंके प्रति हमारा जो कर्त्तव्य और उत्तरदायित्त्व है उससे हम किसी प्रकार बच या भाग नहीं सकते। यह ठीक है कि हममेंसे प्रत्येक मनुष्य न तो वाल्मीकि या विश्वामित्रके समान ऋषि और महात्मा हो सकता है और न महाराणा प्रताप या मेजिनीके समान देश-सेवक। पर इसमें सन्देह नहीं कि प्रत्येक मनुष्यमें मानव-जातिका कुछ न कुछ कल्याण करके उसकी प्रसन्नता और सुख बढ़ाने और उसे पवित्र और उत्तमतर बनानेकी शक्ति अवश्य है। हम अपने कार्य्योंसे लोगोंके सामने सत्यता, कर्त्तव्यपरायणता, सहनशीलता और स्वतन्त्रता आदिके अच्छे आदर्श उपस्थित कर सकते हैं जिनसे संसारका कल्याण होनेमे थोड़ी बहुत सहायता अवश्य मिल सकती है। यह सिद्धान्त सदा सबके ध्यान रखने योग्य है।

एक विद्वान् कहता है—“ संसारके सभी कार्य्योंमें सफलता प्राप्त करनेके लिये साधारणतः विचारशील, परिश्रमी और मितव्ययी होनेकी आवश्यकता होती है। समय या धनका किसी प्रकारका दुरुपयोग या अपव्यय करना अपने आपको फल-सिद्धिसे दूर करना है। जो लोग आरम्भसे ही समय और धनका महत्त्व समझने लगते है उन्हें आगामी जीवनमें कभी कोई बड़ी कठिनता हो ही नहीं सकती।” अगर सच पूछिये तो आजकल अधिकाश संसारपर अपव्ययका ही सिक्का जमा हुआ है। यह अपव्यय धनका भी होता है और समयका भी। यही नहीं बहुत से लोग अपनी योग्यता, गुणों और शक्तियोंका भी दुरुपयोग अथवा अपव्यय करते हुए देखे जाते हैं। यदि यह कहा जाय कि संसारकी आधी उन्नतिका मूल बाधक किसी न किसी प्रकारका

अपव्यय ही है तो कुछ अत्युक्ति न होगी। अन्य देशोंकी अपेक्षा भारतके पीछे यह रोग और भी बुरी तरहसे लगा हुआ है। यद्यपि अनेक सभ्य देशोंके विद्वान् भी अपने देशवासियोंके इस दुर्गुणका रोना रोते हैं पर उन देशोंके लिये यह दुर्गुण उतना हानिकारक नहीं है जितना इस देश-के लिये। क्योंकि उनका देश शिक्षित है, सभ्य है, सम्पन्न है और अनेक प्रकारकी विद्याओं और कलाओंका भाण्डार है। पर भारत सरीखे दरिद्र, मूर्ख और अधोगत देशके लिये तो उसे महाविष ही समझना चाहिये। अन्यान्य बातोंके साथ प्रत्येक वस्तुके मित और सद्व्ययको भी सफलता और फल प्राप्तिका प्रधान और आवश्यक अंग समझना चाहिये। यदि अध्यवसाय और परिश्रमके साथ हम मितव्ययको भी मिला दें तो सोना और सुगन्धवाली कहावत चरितार्थ हो जाय और हमारे पूर्ण सफल-मनोरथ होनेमे जरा भी सन्देह न रह जाय।

एक बड़े विद्वान्ने एक स्थानपर कुछ उत्तम सिद्धान्तोंका वर्णन किया है जिनका सारांश यहाँ पर दे देना उपयुक्त जान पड़ता है। वह कहता है—"जो लोग वास्तवमें कुछ काम करना चाहते हों उन्हें बहुतसे परामर्शों और उपदेशोंपर कभी ध्यान न देना चाहिये। अपनी योग्यता और स्थितिका विचार करके स्वयं अपना कर्त्तव्य और सिद्धान्त निश्चित करना चाहिये। बहुत ही छोटी छोटी बातोंका भी उतना ही ध्यान रखना चाहिये जितना कि बड़े बड़े विषयोंका रक्खा जाता है। धनको सर्वस्व न समझकर केवल उद्देश्य-सिद्धिका साधन समझना चाहिये। कभी स्वार्थी न बनना चाहिये। स्वार्थी होना केवल बड़ा भारी दुर्गुण ही नहीं बल्कि अनेक दूसरे दुर्गुणोंकी खानि भी है। वह बुद्धि और विचारको नष्ट कर देता है, सुन्दर वृत्तियों और गुणोंका सत्यानाश कर देता है और मनुष्यको एकदम अन्धा बना देता है"। जिस मनुष्यमें स्वार्थकी जितनी ही अधिक मात्रा हो उसे उतना ही भयानक

पापी समझना चाहिये। स्वार्थी मनुष्य एकदम विवेकहीन होता है और अपने लाभके लिये संसारका बड़ेसे बड़ा अनिष्ट करनेके लिये तैयार रहता है। ऐसे आदमियोंका समाजमें भी कभी कोई आदर नहीं होता। प्रायः स्वार्थी मनुष्य बहुत ही नीच, घृणित और तुच्छ समझा जाता है। वह दूसरोंके लिये तो अनिष्टकर होता ही है, साथ ही उसका हृदय भी कभी शान्त और सुखी नहीं होता। “पर जो मनुष्य दूसरोंका ध्यान रखता है, उसके प्रसन्न और सुखी होनेमें अधिक देर नहीं लगती। परोपकार एक ऐसा गुण है जो अपने कर्ताको ही अधिक लाभ पहुँचाता है, औरोंको कम। इस प्रकार दूसरोंका उपकार करना मानों प्रकारान्तरसे स्वयं अपना हित करना है। यदि हमारे साथ कोई अनुचित व्यवहार करे तो हमें उचित है कि हम उसके साथ सभ्यता, दया और सत्यता-का व्यवहार करें। इस तरह हम अनेक प्रकारके गुणोंकी वृद्धि करनेके साथ ही साथ अनेक तुच्छ वृत्तिवाले लोगोंको परास्त करके उन्हें अपना बना लेंगे।”

यह एक निश्चित सिद्धान्त है कि किसी प्रकारका कर्म्म वृथा नहीं जाता, उसका कोई न कोई फल अवश्य होता है। ऐसी दशामें हम क्यों न ऐसे कार्य्य करें जिनसे संसारके दुर्गणों और दु.खोंका नाश तथा सद्गुणों और सुखोंकी वृद्धि हो? यदि कोई नीच अपनी नीचता पर अड़ा रहे तो हमें उसीके साथ उस समयतक बराबर शिष्टता, कोमल-ता और दयाका व्यवहार करते रहना चाहिये जबतक कि वह अपना दोष त्यागकर सत्पथ पर न आ जाय। सच्चे महानुभावोंके यही लक्षण हैं।

उत्तम परिणाम प्राप्त करनेके लिये हमें अपनी मानसिक शक्तियोंका पूरा पूरा उपयोग करना चाहिये। प्रत्येक काम खूब सोच समझकर और उसका ऊँच नीच देखकर करना चाहिये। किसी प्रकारका पक्षपात

या उतावलापन न करना चाहिये । जहाँतक हो सके अपनी जानकारी बढ़ाते रहना चाहिये । प्रत्येक वस्तुसे कुछ लाभ उठाना चाहिये और प्रत्येक घटनासे कुछ शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये । एक बार हमें जो ज्ञान या शिक्षा प्राप्त हो उसे कभी भूलना न चाहिये और अवसर पडनेपर बराबर उसका सदुपयोग करना चाहिये । यदि हम प्रतिदिन एक ज्ञान और एक शिक्षा भी संग्रह और ग्रहण करे तो हमारा भाण्डार अतुल और अनुपम हो सकता है । हमें कभी कृतघ्न न होना चाहिये । जो लोग दूसरोका किया हुआ उपकार नही मानते, लोग बहुत शीघ्र उनके साथ उपकार करना छोड देते है ।

अब हम फिर अपने वक्तव्यकी ओर झुकते है । जीवन-यात्रामें उपयुक्त होनेवाले अनेक गुणो और अभ्यासोंका कुछ कुछ वर्णन ऊपर किया जा चुका है । पर एक सबसे आवश्यक गुणके विषयमें अभीतक कुछ भी नही कहा गया, और वह गुण-कुशलता, पटुता या कार्य्य करनेकी वास्तविक योग्यता है । इस गुण की सभी अवसरोंपर आवश्यकता पड़ती है । बहुतसे लोग शुद्ध-चरित्र और विचारवान् होकर भी इसी गुणके अभावके कारण अच्छे अच्छे अवसर नष्ट कर देते है, और जिन लोगोंमे यह गुण होता है वे अपनी साधारण बुद्धि और शक्तिसे भी बाजी मार ले जाते है । मनुष्य विचार द्वारा अपना कर्त्तव्य निश्चय करता है, पर यदि उसमें कार्य्य करनेकी यह शक्ति, यह प्रतिभा न हो तो स्वयं वह और उसके विचार आदि व्यर्थ है । दृढता, फुर्तीलापन, तत्परता, मृदुल स्वभाव आदि कई बातें इस गुणके अन्तर्गत है । इसकी सहायतासे मनुष्य अनेक प्रकारके अपराधों और बुरी प्रवृत्तियोंसे बचा रहता है । प्रत्येक अवसरपर उसीके अनुकूल शुभ कार्य्य करना और प्रत्येक कार्य उपयुक्त और अनुकूल अवसरपर करना ही इसका फल है । इसीको हम अनुभव-जन्य

दूरदर्शिता भी कह सकते हैं। इसकी सहायतासे प्रत्येक त्रुटि या आवश्यकताका तुरन्त पता लग जाता है और उसकी पूर्तिका उपाय भी तत्काल निकल आता है। वह किसी सुअवसरको व्यर्थ नहीं जाने देता।

कुछ लोग प्रतिभाको पटुतासे ऊँचा आसन देते है। इसमें सन्देह नही कि प्रतिभा एक उच्च और प्रशंसनीय गुण है, पर केवल इसी कारण पटुताको तुच्छ न समझना चाहिये। कभी कभी तो प्रतिभासे निकलनेवाले कामोंको पटुता ही मनुष्यके लिये उपयोगी बनाती है। इसके अतिरिक्त प्रतिभा एक ऐसा गुण है जो सब लोगोंमें नही हो सकता; पर पटुता बहुतसे अंशोंमें अनुभव, दूरदर्शिता आत्मनिग्रह आदिकी सहायतासे प्राप्त की जा सकती है। यदि यह कहा जाय कि प्रतिभाकी अपेक्षा पटुतासे जगतका अधिक कल्याण हुआ है तो कुछ अत्युक्ति न होगी। वास्तवमें नित्य प्रतिके सांसारिक कार्य्योमें पटुतासे ही बहुत अधिक सहायता मिलती है। यद्यपि हमारा यह अभिप्राय नहीं है कि धन और प्रतिष्ठा प्राप्त करना ही मानव-जीवनका एक मात्र उद्देश्य होना चाहिये तथापि इसमें सन्देह नही कि विचारशीलोंकी अपेक्षा कर्मशील अधिक धन और प्रतिष्ठा प्राप्त करते हैं।

सफलता प्राप्त करनेके लिये सबसे आवश्यक यह है कि मनुष्य अपने आपको परिस्थितिके अनुकूल बनावे अर्थात् परिस्थिति चाहे जैसी हो, उससे लाभ उठावे—,लोगोंके साथ सद्व्यवहार रक्खे, समयकी आवश्यकताएँ जाने और यथासमय लोगोंको उपयुक्त उपदेश और सम्मतियाँ दे। मनुष्यके लिये केवल उचित कार्य्य करना ही पर्य्याप्त नहीं है, वास्तवमें उचित समय और स्थानपर ही उचित कार्य्य करनेकी आवश्यकता होती है। बहुत से लोग इतने जल्दबाज होते है कि वे पहला कदम उठानेसे पहले ही दूसरा कदम उठाना चाहते हैं और मनुष्यको चारों ओरसे घेरे रहनेवाली अनेक अनिवार्य्य

आवश्यकताओंका अस्तित्त्व स्वीकार न करके बीचका रास्ता बिना चले ही उद्दिष्ट स्थानतक चटपट पहुँच जाना चाहते हैं और बहुधा यही उनकी विफलताओंका कारण होता है । विचारशक्तिके अभावके कारण उतनी विफलताएँ नही होतीं जितनी पटुताके अभावके कारण हुआ करती हैं ।

पटुता ही एक ऐसा गुण है जिसकी आवश्यकता छोटे बडे, घरू और सार्वजानिक सभी कार्य्योंमें होती है। जिस मनुष्यमें पटुता नहीं होती वह अपने उतावलेपन, भद्दे व्यवहारों और मूर्खतापूर्ण बातोंसे सबको कुछ न कुछ हानि पहुँचाता अथवा अप्रसन्न कर देता है । उससे संसर्ग रखनेवाले सभी लोग किसी न किसी रूपमे उससे दुःखित होते हैं । ऐसे ही आदमियोंमेंसे किसी एकने एक बार थिएटरमें लार्ड नार्थसे कहा था–" वह सामनेवाली औरत कितनी भद्दी है । " उत्तर मिला " हाँ, वह मेरी स्त्री है । " उस मूर्खने कुछ लज्जित होकर फिर कहा " वह नहीं साहब, उसकी बगलवाली । " लार्डने कहा–" वह मेरी बहन है " । ' संसारदर्पण ' में कलक्टर साहबके निमन्त्रणका आदाब अल्काबसे लदा हुआ उत्तर भेजनेवाले और निश्चित समयसे ढाई घटे पहले पहुँचनेवाले सैयद् काजिमहुसैन खॉ बहादुर इसी श्रेणीके थे । वहाँ पहुँचकर खानेके कमरेमे कलक्टरकी मेमकी मृत बहिनकी निशानी-वाला शीशेका बना हुआ नकली फूलोंका गुलदान तोड़नेवाले मौलवी मुकर्रमहुसैन साहब तहसीलदारमें भी इसी गुणका अभाव था । और कलक्टर साहबके आनेपर सैयद् साहब और मौलवी साहबके परस्पर झगड़कर एक दूसरेको दोषी बनानेने तो मानो उसकी हद् ही कर दी थी । कार्य्यपटुता या समझदारीके अभावके कारण कभी कभी बड़े विचारशील भी धोखा खाते और मुहँके बल गिरते है । बहुत ही साधारण समझके लोग जो काम बड़ी सरलतासे कर लेते हैं वही बड़े बड़े

विचारशीलोंसे नहीं हो सकते। कैसे आश्चर्य्यकी बात है कि हरिश्चन्द्र सरीखा नररत्न अपनी इतनी बड़ी सम्पत्ति नष्ट कर दे और मिरज़ा असद्-उल्ला खाँ गालिबको जेल जाना पड़े! पर थोड़ेसे विचारसे ही यह आश्चर्य्य दूर हो जाता है। बात यह है कि गूढ़ विचार करनेकी शक्ति और घर गृहस्थीके बहुत ही साधारण काम करनेकी योग्यतामें किसी प्रकार-का सम्बन्ध नहीं है। आकाशके तारोंपर दृष्टि गड़ानेवाला बड़ा भारी दार्शनिक जमीनपरकी छोटी सी गड़हीमें फिसल सकता है और किसी दीवारके छेद्में हाथीकी पोंछ जड़ी हुई देखकर घबरा और सोच सकता है कि इतने छोटे छेद्में हाथी कैसे चला गया? न्यायशास्त्रके प्रसिद्ध आचार्य्य गोतम एक बार अपने विचारोंमें मग्न चले जाते थे। चलते चलते वे एक बड़े गड्ढेमें गिर गये। आगेसे स्वयं देख भालकर चलने-की तो आवश्यकता उन्होंने नही समझी, पर हॉ, ईश्वरसे अपने पैरोंके लिये भी नेत्र अवश्य मॉग लिये, और तभीसे उनका नाम अक्षपाद् पड़ गया!

अनेक विषयोंके पूर्ण ज्ञाता और विचारशील पण्डितकी अपेक्षा एक साधारण बुद्धिमान् बड़ी योग्यतासे सारे सासारिक काम कर लेता है। इसी लिये विचार या विद्याकी अपेक्षा बुद्धिबल अधिक श्रेष्ठ माना गया है। इसी बुद्धिबलके अभावके कारण राजपुत्रको अपने पिताके सामने परीक्षाके समय मुट्ठीमें दबाई हुई चीजको जो कि वास्तवमें ॲगूठी थी, चक्कीका पाट कहना पड़ा था। नहीं तो उसके ज्योतिष-विद्याके पूर्ण पण्डित होनेमें किसी प्रकारका सन्देह नहीं था और उसी पाण्डित्यके बलसे उसने पहले ही कह दिया था कि हाथमें दबाई हुई चीज गोलाकार है और उसमें पत्थर जड़ा हुआ है। प्रतिभा विचारोंका केवल संग्रह करती है, उनका यथेष्ट उपयोग करना पटुताका काम है। जो काम प्रतिभा बिना किये छोड़ देती है उसे प्राय: पटुता पूरा

कर देती है । विचारशील बालकी खाल ही निकालते रह जाते है और कार्य्यपटु अथवा कर्म्मशील सारे कार्य्य समाप्त करके रख देते है। वह कोरी विचारशीलता ही थी जिसने मूर्ख पण्डितके हृदयमें "घृताधारे पात्रं वा पात्राधारे घृतम् ।" का संशय उत्पन्न कराकर उसका सारा घी जमीनपर गिरवा दिया था । यद्यपि विचारशीलता और पटुता दोनों ही मानसिक शक्तिका विकाश हैं और दोनो ही अपने अपने कामके लिये बहुत उपयोगी है, तथापि कर्म्म-संसारमें सबसे अधिक काम अन्तिमसे ही निकलता है । जो लोग हाथमे लिये हुए कार्य्यके अंग प्रत्यगसे भली भाँति परिचित होते हैं, जो सब कठिनाइयोंका पहलेसे ही अनुमान करके उनका सामना करनेके लिये तैयार हो जाते है और जो अपने बुद्धिबलसे प्रत्येक सुअवसर ढूंढ़ निकालते है वे ही सांसारिक कार्य्योंमें सफलीभूत हो सकते है ।

बहुतसे लोग ऐसे होते है जो न तो अपने विचारोंको स्थिर रख सकते है और न अपने कार्य्योंके सम्बन्धमे किसी प्रकारका निर्णय कर सकते है । ऐसे लोग स्वयं तो सदा दुखी रहते ही है और दूसरोंको अपने हँसी उडानेका अवसर भी देते हैं । जिन लोगोंको अपने आपपर विश्वास नही होता और जिनमें मानसिक दुर्बलता अधिक होती है वे कभी किसी बात पर दृढ नही रहते । लेखक एक ऐसे सज्जनको जानता है जिनमे कार्य्यपटुता तो बहुत अधिक है और जिन्होंने कई तरहके काम आरम्भ किये और कुछ समयतक अच्छी तरह चलाये हैं, बहुत कुछ साहित्य सेवा की है और कई व्यापार किये है, पर उनकी अस्थिरता और जल्दी जल्दी अपने निर्णय बदलते रहनेके कारण उन्हे पूरी सफलता किसी काममें प्राप्त नही हुई । ऐसे लोगोंको भी बहुतसे अशोंमे अकर्म्मण्योंमें ही गिनना चाहिये । लखनऊके एक प्रसिद्ध नवाबने जो बडे ही अस्थिरचित्त थे, एक बार एक परगनेका शासन करनेके लिये

एक कर्म्मचारी नियुक्त करके भेजा। ज्योंही वह कर्म्मचारी उस परगनेमें पहुँचा त्योंही उसके पास वापस लौट आनेका परवाना गया और उसके स्थानपर काम करनेके लिये दूसरा आदमी आया। इस दूसरे आदमी-को आते देर नही हुई थी कि वह भी वापस बुला लिया गया और उसके स्थानपर तीसरा आदमी आया। तीसरे आदमीकी भी वही दशा हुई। जब चौथा आदमी नवाब साहबकी आज्ञा पाकर उस परगनेकी ओर चलने लगा तो उसे नवाब साहबके विचारोंकी अस्थिरताका ध्यान आया। वह किसी कदर मस-खरा था इसलिये घोड़ेपर दुमकी तरफ मुहँ करके सवार हुआ और नगरसे बाहर निकलकर परगनेकी ओर चलने लगा। जब वह कुछ दूर चला गया तो नवाब साहबने महलकी छतपरसे उसे घोड़ेकी दुमकी तरफ मुहँ करके बैठे हुए देखा। इसपर उन्हें बहुत कुतूहल हुआ और उन्होंने एक सवार भेजकर उसे बुलवाया और उससे घोड़ेपर उलटे सवार होनेका कारण पूछा। उसने उत्तर दिया।—" हुजूर, मुझसे पहले तीन आदमी वहाँ काम करनेके लिये भेजे गये और वहां पहुँचते ही वापस बुला लिये गये। इस लिये मुझे भी डर था कि मुझे वापस बुलानेका परवाना आता होगा और उसी परवानेके आसरे मैं घोडेपर महलकी तरफ मुहँ करके बैठा था। " नवाब साहब बहुत लज्जित हुए और आगे फिर कभी उन्होंने अपना निश्चय बदलनेमें इतनी शीघ्रता नही की।

बड़ी बड़ी कठिनाइयाँ आ पड़नेके समय यह बात बहुत आवश्यक है कि मनुष्य तुरन्त अपना सिद्धान्त और कर्त्तव्य निश्चय कर ले। जो लोग ऐसा कर सकते है उनसे कठिन अवसरोंपर बड़ा काम निक-लता है। मान लीजिये कि दस पाँच आदमी कही साथ जा रहे हैं। मार्गमें कोई बड़ी भारी दुर्घटना हो गई। उस समय और सब लोग तो

घबराकर ' किं कर्तव्यविमूढ़ ' हो जायँगे, पर कर्तव्य और उपाय आदि उसीको सूझेंगे जो स्थिर और व्यवस्थितचित्त होगा । उस समय ऐसे मनुष्यके द्वारा जो काम निकलेगा उसके लिये सब लोग उसकी प्रशंसा करेंगे और सदा उसके कृतज्ञ रहेंगे । ऐसे ही मनुष्य जहाज डूबनेके समय बिना किसी प्रकार व्याकुल हुए जहाँतक हो सकेगा नावोंद्वारा लोगोंकी रक्षाका प्रबन्ध करेंगे और उन्हें किनारे या दूसरे जहाजतक पहुँचाकर उनके प्राण बचावेंगे । ऐसे ही लोग सैनिकोंकी घबराहट दूर करके उन्हें फिरसे युद्ध-स्थलमें एकत्र करेंगे और लड़कर अन्तमें विजय प्राप्त करेंगे । और ऐसे ही मनुष्य किसीको साँप काट लेने या किसीके जल जानेपर तुरन्त ऐसे उपाय करेगे जिनसे उस मनुष्यकी पीड़ा तुरन्त कम हो और जान बच जाय ।

यह बात अस्वीकार नहीं की जा सकती कि स्थिर और व्यवस्थित-चित्त होना बहुतसे अंशोंमें शारीरिक शक्तिपर निर्भर करता है । यद्यपि यह स्वय एक नैतिक शक्ति है तथापि शारीरिक बलसे भी इसका बहुत कुछ सम्बन्ध है । यही बात और भी अनेक नैतिक अथवा मानसिक गुणोंके विषयमें कही जा सकती है । बात यह है कि मनपर शरीरका बहुत कुछ प्रभाव पड़ता है । कभी कभी ऐसी दुर्घटनाएँ हो जाती हैं जो बडे दृढ-चित्त लोगोंको भी विचालित कर देती हैं । प्रत्येक मनुष्य-में स्थिरता और व्यवस्थासम्बन्धी गुणका कुछ न कुछ बीज अवश्य होता है और यदि हम प्रयत्न करें तो वह बीज अकुरित होकर शुभ फल-दायक भी हो सकता है । दुर्बल मनुष्य भी यादि किसी प्रकारका उतावलापन न करके ईश्वर और अपनी शक्तिपर दृढ़ विश्वास रक्खे तो वह बहुत कम विचालित होगा । स्थिर-चित्त और अविचल बने रहने-का अभ्यास उसी नैतिक और मानसिक शिक्षाका एक अंग है जो मनुष्यको वास्तवमें ' मनुष्य ' बनाती है । यादि इस शिक्षामें हमें कहीं

कहीं विफलता भी हो तो हमें घबराना न चाहिये। जिस समय हमारे दृढ़तापूर्वक डटे रहनेकी आवश्यकता हो उस समय हमें विचलित न होना चाहिये और जल्दीसे यह न समझ लेना चाहिये कि हममें यथेष्ट आत्म-बल नहीं है । उस समय हमें कुछ न कुछ अवश्य निर्णय कर लेना चाहिये। एक दम कुछ न निश्चय करनेकी अपेक्षा किसी प्रकारका भ्रमपूर्ण निश्चय कर लेना भी उत्तम ही है। जो लोग स्वयं किसी प्रकारका निश्चय नहीं कर सकते वे सदा उत्तम अवसर ढूँढ़ने और दूसरे लोगोंसे सम्मतियाँ लेनेमें ही अपना सारा जीवन गँवा देते है। पर जो लोग दृढ़-निश्चयी होते हैं वे किसी कामको केवल असम्भव समझकर नही छोड़ देते, बल्कि जहाँतक हो सकता है उसे पूरा करके छोड़ते हैं। एक विज्ञ कहता है-" तुम जो कुछ बनना चाहते हो, वही बन जाते हो, क्योंकि हमारी इच्छा-शक्तिका ईश्वरके साथ इतना घनिष्ठ सम्बन्ध है कि सच्चे हृदय और शुद्ध विचारसे हम जो कुछ बनना चाहते हैं वही बन जाते है। " सच तो यह है कि बिना इस दृढताके हमारा जीवन बिलकुल निकम्मा और व्यर्थ है। दृढ़ताका एक और गुण यह है कि वह मनुष्यको विचारवान् और न्यायशील बनाती है और उसके द्वारा कभी कोई अन्याय या अनुचित कार्य्य नहीं होने देती।

किसी आकस्मिक दुर्घटनापर विचार करके अपना भविष्य कर्तव्य निश्चय करनेके लिये उपस्थित बुद्धिकी आवश्यकता होती है। जो लोग उपस्थित-बुद्धि होते हैं वे प्रायः बड़ी बड़ी कठिनाइयाँ बहुत ही सहजमें दूर कर लेते हैं। जिस समय अलाउद्दीन चित्तौरसे भीमसिंहको पकड़ ले गया था उस समय पद्मिनीकी उपस्थित बुद्धिने ही बहुत ही सहजमें उसके पतिको शत्रुओंके हाथसे छुड़ाया था। औरंगजेबका निमन्त्रण पाकर जब शिवाजी दिल्ली गये और वहाँ जाकर शत्रुओं-

के जालमें फँस गये तो वहाँ भी उपस्थित-बुद्धिके कारण ही शिवाजी और सम्भाजी अपना छुटकारा कर सके थे। जिस समय महारानी अहिल्याबाईके पति और श्वसुरका देहान्त हो गया तो उस समय होलकरोंके विशाल राज्यका सारा बोझ महारानी पर ही आ पडा था। पर वे इससे जरा भी न घबराईं और उन्होंने तुरन्त अपना भविष्य कर्तव्य निश्चय कर लिया। उनके दीवान गंगाधरपन्तने बहुतेरा चाहा कि वे एक दत्तक और कुछ वार्षिक व्यय लेकर इन सब झगड़ोंसे अलग होजायँ और मुझे मनमानी करनेका अवसर मिले, पर अहिल्याबाईने उसकी दाल न गलने दी। यहीं नहीं, बल्कि जब इससे चिढ़कर गंगाधरने राघोबा पेशवाको भड़काकर उससे महारानीके राज्य पर चढ़ाई करवा दी तो उस समय भी महारानीने अपनी उपस्थित-बुद्धिके प्रभावसे ही राघोबाको जहाँका तहाँ चुपचाप बैठा दिया और अपने राज्यको युद्धके अनेक दुष्परिणामोसे बचा लिया।

अभी हालमें एक वकील साहबकी विलक्षण उपस्थित बुद्धिका विवरण समाचारपत्रोंमें छपा था। वकील साहब दूसरे दरजेकी गाडीमें बैठे हुए आ रहे थे। उसी डब्बेमें एक मेम साहब भी थी जो वकील साहबके पासके रुपये झटकना चाहती थी। मेमने वकीलसे कहा कि तुम अपने सब रुपये मुझे दे दो, नहीं तो मै चेतावनीकी जजीर खींचकर रेल रुकवाऊँगी और तुम पर कुत्सित व्यवहार करनेका अभियोग लगाऊँगी। वकीलको चुप देखकर उसने दो बार वही बात कही और जब वकील साहबने उस पर कुछ ध्यान न दिया तो वह जजीर खीचनेके लिये आगे बढ़ी। वकील साहबने देखा कि या तो रुपये देने पड़ेंगे और या मुकदमेमें फँसना पडेगा। उसी समय उनकी उपस्थित-बुद्धि काम कर गई और उन्होंने मेम साहबसे कहा—"मै बहरा हूँ। आप जो कुछ कहती हों, वह कार्डपर लिखकर मुझे भी बतला दें तो कदाचित्

मै आपकी कुछ सहायता कर सकूँ । मेम साहब जालमें आ गई और उन्होंने अपना मतलब लिखकर वकील साहबको दे दिया । बस फिर क्या था, वकील साहबने उसी कागजके सहारे मेम साहब पर मुकद्मा चला दिया ।

इस बातकी सत्यतामें तनिक भी सन्देह नहीं किया जा सकता कि उपस्थित-बुद्धि और दृढनिश्चयी न होनेके कारण ही बहुतसे युवक अपना कर्त्तव्य पालन करनेमें असमर्थ होते हैं और कभी सफलता प्राप्त नहीं कर सकते । केवल मूर्ख ही नही बल्कि अच्छे अच्छे विद्वान् भी स्थिर-चित्त और दृढ़निश्चयी न होनेके कारण किसी प्रकारकी सफलता नहीं प्राप्त कर सकते । वे अपने सामने सैकड़ों मार्ग देखते हैं पर उनमेंसे अपने लिये एक भी नहीं चुन सकते । वे सदा उनके गुणों और दोषों-की ही मीमासा करते रह जाते है और कभी कार्य्य-क्षेत्रमें नहीं उतरते । ऐसे लोगोंको उस गोताखोरसे शिक्षा लेनी चाहिये जो बहुत ही दरिद्रा-वस्थामें गहरा गोता लगाता है और कुछ देर बाद अनेक विपत्तियोंसे बचता हुआ बड़े बडे बहुमूल्य मोती लेकर ऊपर निकलता है ।

इस अवसर पर उत्तम अभ्यासोंके सम्बन्धमें भी कुछ कह देना आवश्यक और उपयुक्त जान पडता है । बात यह है कि हम अपनी जिस इच्छाको जान-बूझकर अथवा बिना जाने-बूझे प्रबल होने देते है और जिसे हम यथासाध्य पूरा करके ही छोडते हैं वही धीरे धीरे समय पाकर हमारे हृदय पर पूरा अधिकार कर लेती है । हमारे उस इच्छाके अधिकृत हो जानेका ही नाम अभ्यास है । आदत, स्वभाव, टेव, बान आदि सब इसीके पर्य्याय है । जब यह इच्छा बहुत ही दृढ़ और बलवती होकर अभ्यासका रूप धारण कर लेती है उस समय वह ऐसी भयानक प्रभावशालिनी हो जाती है कि हम उसके सामने आँख उठाकर देखनेका भी साहस नही कर सकते । उस समय

हम पूरी तरहसे उसके वशमें हो जाते है, उसका जादू हम पर सदा चलता रहता है। किसी कविका यह कहना बहुत ही ठीक है,–

"नीम न मीठी होय सिंचै गुडघीसे।
जाकर जौन स्वभाव छुटै नहिं जीसे॥"

जिसप्रकार किसी कलके पहियेके लगातार जोरसे घूमते रहनेके कारण उस कलमें इतनी शक्ति आ जाती है कि वह लोहेके बड़ेसे बड़े टुकड़ोंको देखते देखते पतली चद्दर बना देती है उसीप्रकार हम जिस इच्छाके वशमें सदा रहते हैं वह इच्छा अभ्यासरूपमे परिणत होकर इतनी बलवती होजाती है कि वह कभी रोकेसे नहीं रुकती और सभी मिलनेवाले साधनोंको अपने अनुकूल बना लेती है। इस स्थल पर यह समझानेकी कोई विशेष आवश्यकता नही जान पड़ती कि उत्तम अभ्यास विपत्तियोंसे हमारी कहाँतक रक्षा कर सकेंगे, और नीच अभ्यास हमें अपने जालमें फँसाकर कहाँ तक नीचे ले जायँगे। मानवजीवनमें, जैसा कि पहले कहा जा चुका है, अनेक प्रकारकी कठिनाइयों और विपत्तियोंका होना अनिवार्य्य है। पर उत्तम अभ्यास हमें उनके दुष्ट प्रभावसे सहजहीमें बचा सकते और हमारी बहुत कुछ सहायता कर सकते है। जितने उत्तम अभ्यास हैं वे सब हमारे जीवन-मार्गकी कठिनाइयाँ दूर करनेमें पूरी पूरी सहायता देते हैं, हमारे लिये आगेका रास्ता साफ करते हैं और संकटके समय हमें धीर और साहसी बनाकर सब आपत्तियाँ दूर करनेकी शक्ति प्रदान करते हैं। इस अवसर पर हमारा यह अभिप्राय नही है कि हम अपनी आदतके पूरे पूरे गुलाम बन जायँ, नही बल्कि स्वयं हमें अपनी सारी आदतों पर पूरा पूरा अधिकार रखना चाहिये।

सच बोलना, नम्र रहना, साहस न छोड़ना, उपयुक्त अवसर और समय पर काम करना, प्रत्येक विषयके गुण दोष पर अच्छी तरह विचार करना, मितव्ययी होना, बराबर परिश्रम करते रहना, सहनशील होना,

सबके साथ सुजनताका और उत्तम व्यवहार करना, लक्ष्यभ्रष्ट न होना, दृढ़निश्चयी होना आदि आदि अनेक बातें ऐसी हैं जिनका पूरापूरा अभ्यास यदि किसी मनुष्यको हो जाय तो संसारमें शायद ही कोई ऐसी शक्ति बच रहेगी जो उसे विफल-मनोरथ करनेमें समर्थ हो सकेगी। येही अभ्यास हमारे जीवनचक्रके प्रधान सचालक हैं। इन्हीं पर हमारा सर्वस्व निर्भर करता है। पर यह बात भूल न जानी चाहिये कि एक दो दिनमें किसी बातका अभ्यास नही डाला जा सकता। विशेषतः उत्तम अभ्यास डालनेके लिये तो और भी अधिक समय तक दृढ़तापूर्वक और निरन्तर प्रयत्न करते रहनेकी आवश्यकता होती है। एक बात और है। किसी बातका अभ्यास डालनेके लिये सबसे अच्छा अवसर हमारे जीवनका आरम्भिक काल ही है, मध्य या अन्तिम काल नही। लोग कहते हैं–" बूढ़ा तोता राम-नाम नही पढ़ सकता, " और यदि यह बात मान भी ली जाय कि बूढ़ा तोता राम-नाम पढ सकता है तो भी उसके पढनेका उतना उत्तम और उतना अधिक फल नहीं हो सकता जितना कि किसी बच्चे तोतेके पढ़नेका। इस लिये उत्तम अभ्यास डालनेमें जहॉ तक शीघ्र हो सके हमें उसके लिए प्रयत्न-शील हो जाना चाहिये।

सफलता प्राप्त करनेमें सर्व-प्रिय होनेसे भी बहुत बड़ी सहायता मिलती है। जिस मनुष्यके साथ सब लोगोकी सहानुभूति हो उसके बड़े बड़े काम सहजमें ही हो जाते है। हमें जिस क्षेत्र या संसारमें काम करना है उस क्षेत्र या संसारके सब लोगोंके साथ हमारा पूर्ण सहृदयता और सुजनताका सम्बन्ध होना चाहिये। मधुर भाषण, सात्त्विक व्यवहार और समय समय पर लोगोंकी थोड़ी थोड़ी सहायता या उपकार कर देनेमें हमारा कुछ खर्च नहीं होता, परन्तु समय पड़ने पर उनसे हमारा बहुत बड़ा काम निकलता और लाभ होता है। अन्यान्य

त्रुटियोंके होते हुए भी इससे हमारा बड़ा उपकार होता है। धन, विद्या बुद्धि और बल आदिका काम तो मुख्य मुख्य अवसरों पर ही होता है पर सुजनताकी आवश्यकता प्रत्येक समय रहती है। यदि हम मधुर-भाषी हों तो हम जिससे जो प्रार्थना करेंगे उसे वह तुरन्त स्वीकार कर लेगा। हमारे सद्व्यवहारोंका इतना उत्तम परिणाम निकलता है कि स्वामी–सेवक, पिता–पुत्र, भाई–बहिन, और मित्र–मित्रका सम्बन्ध परम सात्विक, शुभ और प्रशंसनीय हो जाता है। पर हमारे सब व्यवहार शुद्ध होने चाहिये, उनमें छल कपट या बनावट नाम मात्रको भी न होनी चाहिये। कुछ दुष्ट प्रकृतिके लोग अपने दिखौआ सद्व्यवहारोंकी आड़में ही बडे बड़े कुकर्म्म करते है। ऐसे नीचोंके विषयमे इस अवसर पर कुछ अधिक कहनेकी न तो कोई आवश्यकता ही है और न यथेष्ट स्थान ही।

आर्थिक लाभकी इच्छा रखनेवालोंके लिये मितव्ययी होना परम आवश्यक है। जो मनुष्य मितव्ययी होता है वही वास्तवमें उदार, परो-पकारी और बड़ा दानी भी हो सकता है। फिजूलखर्च तो हमेशा खुद ही तबाह रहता है, वह दूसरोकी क्या मदद करेगा? दानी और परोपकारी होना तो दूर है, वह उलटे अनेक पापोका भागी और अनेक कुकर्म्मोंका उत्तरदाता हो जाता है। अमितव्ययी होना भी उतना ही बड़ा पाप है जितना कि कंजूस और मक्खीचूस होना। लोग किफायतसे रहने-वालोंकी हँसी तो जरूर उडाते हैं पर वे कभी यह नहीं सोचते कि अव-सर पड़ने पर दीन दुखियोंकी सहायता करनेमें जितने अधिक समर्थ मितव्ययी होते है, उतने अमितव्ययी नहीं। अमितव्ययीको तो स्वयं दूसरोंकी सहायता अपेक्षित होती है। पर मितव्ययी होनेका यह अर्थ नहीं है कि हम एक मात्र धनको ही सर्वस्व समझने लग जायें, उसके लिये अनेक प्रकारके कुकर्म्म करे, अगणित मानसिक और शारीरिक

कष्ट उठावें और धनको सन्दूकमें बन्द करके उसका परोपकारगुण नष्ट करें। जो धनवान् अपने धनका सदुपयोग करना जानते हैं, वे बड़े बड़े महात्माओं, विद्वानों और राजनीतिज्ञोंसे संसारका उपकार करनेमें किसी तरह कम नही कहे जा सकते।

व्यापारियों और शारीरिक परिश्रम करके धन संग्रह करनेवालोंको सैर तमाशे और चैन करनेका ध्यान भी छोड देना चाहिये। जो लोग दूकानदार बनना चाहते हों उन्हें इस बातका अवश्य ध्यान रखना चाहिये कि शौकीनी और दूकानदारीका बड़ा भारी वैर है और दूकान वही चला सकता है जो सब तरहसे अपना पित्ता मारकर सारा दिन दूकान पर बैठ सके। जो दूकानदार यह समझकर कि आजकल बाजार मन्दा है, अपनी दूकान बन्द करके सैर तमाशोंमें चला जाता है, जो जरासे आलसके कारण या थोडीसी बूँदबाँदी देखकर ही अपनी दूकान नही खोलता वह कदापि उन्नति नही कर सकता। आजकल चढ़ा-ऊपरीका ही जमाना है, हर एक रोजगार और पेशेमें लोग बढ़ते जा रहे है। ऐसी दशामें जो मनुष्य और लोगोंसे सब बातोंमें जहाँतक अधिक बढ़ा चढ़ा रहेगा वही उतना अधिक सफलमनोरथ भी होगा। जिन लोगोंने आजसे कुछ वर्ष पूर्व ही व्यापारमें अच्छा नाम और धन उपार्जित किया था उन्हें भी इस समय पहलेकी तरह अपना कारोबार चलानेमें कुछ कठिनाई हो रही है, बिलकुल नये व्यापारियोंके लिये इस कठिनताका बहुत अधिक बढ़ जाना तो बहुत ही स्वाभाविक है। बिना यथेष्ट अध्यवसाय और आत्मनिग्रहके फलप्राप्तिकी आशा रखना दुराशा मात्र है।

चौथा अध्याय।
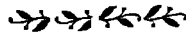
भाग्य और कठिनाइयाँ।

भिन्न भिन्न धर्म्मावलम्बियोंके मतसे भाग्यकी व्याख्या—हिन्दुओंके भाग्यका विस्तार और महत्त्व—भाग्यका सफलताके साथ सम्बन्ध—भाग्य सापेक्ष है—भाग्य और दैव—दैव-वादियोंकी भूल—क्या भाग्यकी कल्पना एकदम निरर्थक है? भाग्यसम्बन्धी भ्रमात्मक धारणा—भाग्यका मनुष्यमात्रके साथ सम्बन्ध—इस सम्बन्धका स्वरूप—कर्म्मका अवश्यम्भावी फल—संचित, प्रारब्ध, क्रियमाण और भावी—सबकी दोहरी व्याख्या—प्रकृति और भाग्य—संसारके अधिकांश व्यापारोंका वास्तविक दुर्भाग्य—देश, काल और समाज आदिका भाग्यसे सम्बन्ध—उद्योगकी प्रधानता—शक्तिवृद्धिके उदाहरण—समयकी दुहाई देना बिलकुल व्यर्थ है—वास्तवमें समय क्या है—चढ़ाऊपरी और लाग डाँट—बढ़नेवाली कठिनाइयोंका स्वरूप—नौकरी और व्यापारकी कठिनाइयाँ—कठिनाइयोंका उत्तरोत्तर बढ़ना अनिवार्य्य है—कठिनाइयोंको तुच्छ समझनेसे ही सफलता हो सकती है।

हमें विश्वास है कि हमारे पाठक इस समय तक यह बात भलीभाँति समझ गये होंगे कि जो लोग अपनी रुचिके अनुकूल कोई उत्तम कार्य्य हाथमें लेते है और उसकी कठिनाइयोंकी कुछ भी परवा न करके अपनी सारी शक्तियोंसे उसीमें निरन्तर लगे रहते हैं उन्हें अपने प्रयत्नके अनुसार फल अवश्य मिलता है। यदि वह मनुष्य ईमानदार हो, किफायती हो, मिलनसार हो और किसीकी अशुभ कामना न करता

हो तो उसकी सफलताका मार्ग तो सरल हो ही जाता है, साथ ही अन्य अनेक दृष्टियोंसे भी उसका अस्तित्व समाजके लिये हितकर होता है। यद्यपि बहुतसे अंशोंमें सफलताके स्थूल मूल सिद्धान्त यही हैं तथापि बहुतसे लोग इसे स्वीकार नही करते और अनेक प्रकारकी आपत्तियाँ करते है। इन आपत्ति करनेवाले लोगोंके सम्बन्धमें सबसे पहले यह बात अवश्य समझ रखनी चाहिये कि उनमें अभी तक सफलता प्राप्त करनेकी योग्यता नही आई है। जो मनुष्य वास्तवमें कर्म्मण्य होता है उसे अपने कामोंसे इतनी छुट्टी ही नही मिलती कि वह इस प्रकारकी आपत्तियाँ करता फिरे। रहे आपत्तियाँ करनेवाले लोग; और यह पुस्तक प्रायः ऐसे ही लोगोंके लाभके लिये लिखी भी गई है। ऐसी अवस्थामें नित्यप्रति होनेवाली आपत्तियोंपर भी थोड़ा बहुत विचार करना आवश्यक प्रतीत होता है।

इन आपत्ति करनेवालोंको हम, सुभीतेके लिये दो भागोंमें बाटेंगे। एक तो वे जो सब बातोंमें भाग्यको ही प्रधान मानते है और "भाग्य फलति सर्वत्र न च विद्या न पौरुषम्" ही जिनका मूल सिद्धान्त है। यद्यपि इस प्रकारके भाग्यवादी सभी देशोंमें होते हैं तथापि भारतवर्ष उनका प्रधान अड्डा है। भारतवासियोंका तत्सम्बन्धी संस्कार बहुत ही पुराना· प्रबल और पुष्ट है और उसके विषयमें जबान हिलानेका जल्दी किसीको साहस ही नही होता। हम लोग तो 'दाने दाने पर मोहर' माननेवाले हैं; हमें पौरुष और उद्योगसे क्या काम ? जो हमारे भाग्यमें बदा है वह हमें किसी न किसी प्रकार अवश्य मिलेगा और जो हमारी किस्मतमें नहीं है उसके लिये लाख सिर पटकनेसे भी कुछ न होगा। दूसरा दल ऐसे लोगोंका है जो भाग्य वाग्य तो कुछ भी नहीं मानते, पर जमानेकी उन्हें बड़ी भारी शिकायत है। ससार दिन पर दिन कठिन होता जाता है, वह अब साधारण लोगोंके निर्वाहके योग्य नही रह गया, कठिनाइयाँ और

झंझटें दिन पर दिन बढ़ती है, आज कलके जमानेमें कुछ कर दिखला-ना हँसी खेल नहीं है, इत्यादि धारणाएँ उनमें ऐसी दृढ हो गई हैं कि उन्हें हाथ पैर हिलाने ही नही देती। इस प्रकरणमें केवल इसी बात पर विचार किया जायगा कि इन दोनों पक्षोंका कथन कहाँ तक ठीक है और हमारे नित्यप्रतिके व्यवहारोंमें उनका कहाँतक उपयोग हो सकता है। अच्छा, पहले भाग्यवादियोंको ही लीजिये।

भाग्यके वास्तविक स्वरूप पर विचार करनेसे पहले भिन्न भिन्न धर्म्मानुयायियोंके मतसे उसकी व्याख्या कर देना आवश्यक जान पड़ता है। सर्व साधारणका विश्वास है कि मनुष्यको संसारमें जितने सुख दुख मिलते हैं अथवा उसके द्वारा जो अच्छे या बुरे काम होते है उन पर मनुष्यका कोई अधिकार नहीं होता, उन सबकी योजना पहले-से ही हुई रहती हैं। केवल यही नहीं, बल्कि प्रत्येक सुख दुःख और अच्छे बुरे कार्य्योंके समय और स्थान आदिका भी पहलेसे ही निर्णय हो जाता है। इस लिये यदि किसी मनुष्यको अपने व्यापारमें कुछ आर्थिक हानि उठानी पडे, किसीकी गौ या भैस खरीदनेके दस ही पाँच दिन बाद मर जाय, किसीको कहीसे पड़ा या गड़ा हुआ धन मिल जाय, तो वह केवल अपने अपने भाग्यका फल समझा जाता है। यहाँ तक कि भूख-प्यास या रास्ता चलनेमे ठोकर भी भाग्यके ही कारण लगती है और ताश या शतरंजमे हार जीत भी उसीके कारण होती है। यह तो हुई सर्व साधारणकी बात, अब भिन्न भिन्न धर्म्मवालोंको लीजिये। हिन्दुओ और बौद्धोंका यह विश्वास है कि मनुष्यके सुख दुःख आदि उसके पूर्वजन्मके अच्छे या बुरे कृत्योंपर निर्भर करते हैं। सृष्टि अनन्त कालसे है और उसमें अबतक प्रत्येक प्राणीके असंख्य जन्म हो चुके हैं। एक जन्म-में मनुष्य जो कुछ करता है उसका फल वह एक या अधिक जन्मोंमें

भोगता है और उन्हीं किये हुए कर्म्मोंका फल भोगनेके लिये उसे बार बार जन्म लेना पड़ता है । क्रिस्तान, मुसलमान और यहूदी आदि यद्यपि पुनर्जन्म नहीं मानते और उनका विश्वास है कि मरनेके उपरान्त सब जीवात्माएँ एक निश्चित काल—प्रलय, सृष्टिके अन्त या हश्र आदि—तक ज्योंकी त्यों पड़ी रहती हैं और उनका न्याय वह समय आनेपर ईश्वर द्वारा होगा, तथापि उनका यह विश्वास है कि परमेश्वर ही सब प्राणियोंके सुखदुःखादिका पहलेसे निश्चय कर देता है। क्रिस्तानों, मुसलमानों और यहूदियों आदिका यह भी विश्वास है कि भाग्य-चक्र केवल मनुष्योंके साथ है; बौद्धलोग मनुष्यों, पशुओं और पक्षियों तकको भाग्य-सूत्रसे बँधा हुआ मानते है और हिन्दुओंके मतसे मनुष्य पशु, पक्षी और जड़ पदार्थ सभीके साथ भाग्य लगा हुआ है। सबोंके मतसे भाग्य पर मनुष्यका कोई अधिकार नहीं है, मनुष्य केवल मट्टीका पुतला है, उसे या तो पूर्वजन्मके कृत्योके अनुसार या ईश्वरकी योजनाके अनुसार संसारमें सब काम करने पड़ते हैं। मुसलमानों और ईसाइयोंके भाग्यकी अपेक्षा बौद्धोंके भाग्यकी और बौद्धोंके भाग्यकी अपेक्षा हिन्दुओंके भाग्यकी प्रबलता और महत्ता अधिक है।

अब प्रश्न यह है कि इन सब बातोंमें सत्यता कहाँ तक है ? क्या मनुष्यके सब कार्य्य पूर्णरूपसे भाग्य पर ही अवलम्बित हैं ? अथवा उनका भाग्यसे आंशिक सम्बन्ध है ? अथवा भाग्य कोई चीज ही नहीं है ? पर सब प्रश्नोंका उत्तर देनेसे पहले सौभाग्य और दुर्भाग्य पर भी थोड़ासा विचार कर लेना आवश्यक है। सम्पत्ति, अधिकार, रूप, बल और बुद्धि मनुष्यके लिये सुखप्रद हैं और इन्हींको लोग सौभाग्यके चिह्न समझते हैं। इसके विरुद्ध, दरिद्रता, पराधीनता, कुरूपता, निर्बलता और मूर्खता आदि बातें दुर्भाग्य-सूचक मानी जाती है। यदि कभी कोई मनुष्य अपने प्रयत्न आदिके कारण भी

धनवान्, बलवान या बुद्धिमान् हो जाय तो वह भाग्यवान् ही समझा जाता है। पर विचारनेकी बात यह है कि यदि किसी मनुष्यने गेहूँ बोए और उसके खेतमें गेहूँ ही उगे तो उसमें भाग्यका क्या निहोरा है ? हाँ, यदि गेहूँके बदले मोतीके दाने लगें तो अवश्य ही उसका सौभाग्य है और यदि छोटी छोटी कंकड़ियाँ लगें तो अवश्य ही बोनेवालेका दुर्भाग्य है। यदि कोई राजकुमार अपने पिताकी गद्दी पर बैठे (यह बात दूसरी है कि राजकुमार होना भी भाग्याधीन ही है) तो उसमें उसकी भाग्य-शालिता काहेकी ? वह तो उसके लिये स्वाभाविक ही है। हाँ, यदि किसी चरवाहेके लड़केको भेड़ बकरियाँ चराते समय कोई राजा खेत पर अपने साथ ले जाकर अपना दत्तक बना ले और सारा राज्य उसे दे दे तो वह अवश्य परम भाग्यवान् है।

किसी राजाके निःसन्तान मर जानेपर उसका उत्तराधिकारी बनानेके लिये उसका बहुत ही निकटस्थ सम्बन्धी और साथ ही योग्यता आदिके विचारसे उपयुक्त पात्र ढूँढा जाता है । ऐसी दशामें भाग्यका क्या सम्बन्ध ? हाँ, यदि किस्से कहानियोंकी तरह यह निश्चय किया जाय कि प्रात काल नगरका द्वार खोलनेके समय जो मनुष्य सबसे पहले नगरमें प्रवेश करता हुआ मिलेगा उसीको राज्य दिया जायगा तो अवश्य ही राज्य पानेवाला सौभाग्यशाली समझा जायगा । एक बार लन्दनमें एक बहुत ही दरिद्री और अपने आपको परम अभागा समझनेवाले युवकने ट्रामवेसे गिरी हुई एक बुढियाको उठवाकर अस्पताल पहुँचवा दिया था और उसे अपना नाम व पता भी बतला दिया था। इस घटनाके दो वर्ष बाद उसे सूचना मिली कि वह बुढिया मर गई और उसे अपनी कई लाख पाउंडकी सम्पत्ति दे गई। अब यह सम्पत्ति उसे भाग्यवश मिली अथवा मनुष्यकी स्वाभाविक सहृदयता और सहा-नुभूतिके कारण? यदि यह कहा जाय कि भाग्यहीने उससे उस

बुढ़ियाको उठवाकर अस्पताल तक पहुँचवाया तब तो सारा बखेड़ा ही तै हो जाता है । पर वास्तवमें यह कोई बात नहीं है; और इस सबन्धमें अधिक बातें आगे चलकर कही जायँगी । यहाँ यही मानना होगा कि उस मनुष्यको अपने परिश्रमका पुरस्कार मिला । यदि वह उस बुढ़ियाको किसी पुलिसवालेके हवाले कर देता जैसा कि अक्सर ऐसे अवसरों पर लोग कर सकते अथवा करते है, तो उसे क्या मिलता ? भाग्यकी वास्तविक परीक्षा तो उस समय होती जब कि वह बुढ़िया अपने हाथमें एक डाइरेक्टरी लेकर बैठ जाती और यह निश्चय कर लेती कि इसका कहींसे कोई पृष्ठ खोलते ही जिस मनुष्यके नाम पर मेरी नजर सबसे पहले पड़ेगी उसीको मैं अपनी सारी सम्पत्ति दूँगी ।

भाग्य-सन्बन्धी प्रश्नका एक और अंग है। अपनी अपनी परिस्थिति-के अनुसार ही सौभाग्य और दुर्भाग्य माना जाता है । यदि एक एक पैसा माँगनेवाले भिखमंगेको कहीसे एक रुपया मिल जाय तो वह अपने आपको बड़ा भाग्यशाली समझता है । पर वही रुपया यदि किसी राजा महाराजाको नजर किया जाय तो उस पर उसकी आँख ही नहीं ठहरती । बल्कि बहुत सम्भव है कि एक रूपया नजर करनेके कारण वह अपना अपमान समझे और नजर करनेवालेसे रुष्ट हो जाय । जो चीज पाकर एक मनुष्य अपने आपको धन्य समझता है वही दूसरेके लिये बहुत ही तुच्छ है। इससे यही सिद्ध होता है कि भाग्य सापेक्षिक है। भाग्यका मूल्य और महत्त्व उसी समय है जब कि या तो वह मान लिया जाय और या उसकी तुलना किसी दूसरेके भाग्यसे की जाय । यदि दिनकी तुलना बरससे की जाय तो दिन कुछ भी नहीं है और यदि पल या क्षणसे तुलना की जाय तो वह बहुत भारी रहेगा । स्वय उसकी अधिकता या अल्पता वास्तवमें कोई चीज नही है, वह केवल सापेक्षिक है। इसी प्रकार दुर्भाग्य या सौभाग्यका भी कोई वास्तविक अर्थ

नहीं हो सकता, क्योंकि उसका कोई स्वतन्त्र अस्तित्त्व नहीं है। यह युक्ति चाहे बहुत अधिक प्रबल न हो पर तो भी इसमें कुछ सार अवश्य है। संसारमें जितने काम होते है उनका कारण बिना जाने या खोजे ही, सबकी बाग केवल भाग्यके हाथमें थमा देना और अपनी उचित और अनुचित सभी इच्छाओंकी पूर्त्तिको ही सौभाग्य समझ लेना मूर्खताके सिवा और कुछ नहीं होसकता।

भाग्यका दूसरा नाम दैव है और दैवका अर्थ ईश्वर है। कुछ लोग भाग्यसे ईश्वरका अभिप्राय लेते हैं और अपने सब कामोंको ईश्वरीय प्रेरणाका फल समझते है। इसे मनुष्यकी मूर्खताका एक प्रबल प्रमाण ही समझना चाहिये। जो ईश्वर परम न्यायशाली, सत्यता और सात्त्विकताकी पूर्ण खानि और समस्त गुणोंका आधार समझा जाता है, उसीको अपने सारे दुराचारो और कुकर्म्मोंका विधायक और प्रेरक समझना या बतलाना अपने दुष्कृत्योंके समर्थनके प्रयत्नके अतिरिक्त और कुछ नहीं हो सकता। यदि सचमुच ही ऐसा कोई ईश्वर हो जो अपने सिरजेहुए प्राणियोंको परम निन्दनीय और नीच कामोंमें प्रवृत करता हो तो स्वयं वह ईश्वर उन प्राणियोंसे कही अधिक पापका भागी है और प्राणियोंके बदले वही घोरतम नरकोका अधिकारी है। ऐसा ईश्वर न कभी हो सकता है और न है। ईश्वरने यदि हमें केवल अनेक प्रकारकी शक्तियाँ ही दी होतीं और हमें विवेक-शून्य बनाया होता तो अवश्य उक्त कथनकी थोड़ी बहुत पुष्टि हो सकती थी। पर जब मनुष्यमें विवेक है, वह भला बुरा परख सकता है, इच्छा करने पर बहुतसे अंशोंमें अच्छे और बुरे सभी प्रकारके कृत्य कर सकता है, तो उसका यह बहाना नही सुना जा सकता।

संसारमें कुछ लोग ऐसे भी हैं जो भाग्यका अस्तित्त्व क्षणभर माननेके लिये भी तैयार नहीं हैं। उनका कथन है कि कर्म्मठ मनुष्य प्रयत्न

करने पर सब कुछ कर सकता है। संसारकी कोई शक्ति उसे सफल-मनोरथ होनेसे नहीं रोक सकती। इस मतके एक विद्वान्ने तो यहाँ तक कहा है कि सुअवसरोंके सदुपयोगका नाम ही मूर्खोंने 'सौभाग्य' रख दिया है। उसके कथनानुसार—"जब कोई मनुष्य अपने दुर्भाग्य-का रोना रोता हो तो समझना चाहिये कि अवश्य ही उसमें व्यवस्था, दृढ निश्चय, अध्यवसाय और मनोबल आदिकी बड़ी भारी कमी है। जो लोग केवल सौभाग्य और दुर्भाग्यकी ही चर्चा करते हैं और अपनी भूलों तथा दोषोंको भाग्यके सिर मढ़ते है उनसे हमे जरा भी आशा न रखनी चाहिये। कविके कथनानुसार प्रत्येक मनुष्यके जीवनमें प्राय: लहरें उठा करती है, पर उन लहरोंसे लाभ उठाकर सौभाग्य–शिखर तक पहुँचना मनुष्यका ही काम है। हम यह तो नही कह सकते कि परिस्थिति और साधनोंका सासारिक कार्य्यों पर कहाँतक प्रभाव होता है, तथापि इसमे सन्देह नही कि किसी दृढ मनुष्यको उनके कारण कदाचित् ही दबना पड़ता है। केवल दुर्बल, अकर्मण्य और अविचारी ही उनसे परास्त हो सकते है।"

किसी अँगरेजी नाटकके एक पात्रने एक अवसर पर कहा है—"मैं छोटे मोटे कारणोंसे निराश नहीं हुआ हूँ। मैने सब पापड़ बेले हे पर अन्तमे मुझे विफल मनोरथ ही होना पड़ा है। मनुष्य जितने प्रकारके काम कर सकता है, वह सब मैंने किये है, पर फलसिद्धि किसीमें नहीं हुई। + + + + + + + + + मैंने पुस्तकें बेचनेका काम आरम्भ किया तो लोगोंने पढ़ना छोड़ दिया। अगर मै कसाईका काम करूँ तो मुझे निश्चय है कि लोग मांस खाना छोड़ देंगे।" इस कथनकी हँसी उडानेके लिये उक्त विद्वान्ने लार्ड लिटनके 'मनी' (Money) नामक नाटकका वह पात्र सामने ला खड़ा किया है। जिसने एक अवसर पर कहा था—"यदि मैं टोपियाँ बनानेका काम

शुरू करूँ तो दुनियामें सब लड़के बिना सिरके ही पैदा होने लग जायँ।" उसकी समझमे किसी मनुष्यको बहुतसे कामोंमें भूल, मूर्खता, उपयुक्त काममें हाथ न लगाने, निरन्तर परिश्रम न करने और आत्मनिग्रही न होनेके कारण ही निरन्तर विफलता हो सकती है। प्रत्येक मनुष्यको, चाहे जल्दी और चाहे देरसे, सुअवसर अवश्य मिल सकता है और सफलमनोरथ वही होता है जो उससे लाभ उठाना जानता है। भाग्यके समर्थनमें अच्छे अच्छे विद्वानोंने अबतक जो कुछ कहा है उसका किसी न किसी युक्तिसे थोडा बहुत खंडन करके वह विद्वान् कहता है कि युवकोंको सौभाग्य और दुर्भाग्यके अनावश्यक सिद्धान्त समझाना मानों उन्हें बाहुबल और मस्तिष्क पर अवलम्बित रहनेसे विमुख करना है।–" दो मनुष्य एक ही परिणाम निकालनेके लिये एक ही उपाय करते है। उनमेंसे एकको फल-सिद्धि होती है और दूसरेको नही, और इसी लिये हमलोग एकको दूसरेसे अधिक भाग्य-वान् समझते हैं। पर वास्तवमें इस भेदका कारण यह है कि विफल होने-वालेने उस उपायका ठीक ठीक प्रयोग नही किया। + + + + + सबसे अधिक तेज चलनेवाला ही दौड़में नही जीत सकता और न सदा सबल ही युद्ध में विजय प्राप्त करता है। बल्कि जो मनुष्य अपनी तेजी या बलका ठीक ठीक उपयोग करता है, वही जीतता है।"

यदि उक्त विद्वान् युवकोंको अपने बाहुबल और मस्तिष्कपर निर्भर करनेके लिये ही सौभाग्य और दुर्भाग्यका अस्तित्त्व मिटाना चाहता हो तो उसका यह उद्देश्य बहुतसे अंशोंमें प्रशसनीय ही हो सकता है, पर सौभाग्य और दुर्भाग्यका अस्तित्त्व ही एक दमसे नष्ट करनेका प्रयत्न समर्थित नहीं हो सकता। यदि यह बात मान भी ली जाय कि मुहम्मद साहब बहुत सोच समझकर ऐसी गुफामे धसे थे जो कि बड़े ही एकान्तमें थी– (और जहाँ कदाचित् तुरन्त मकड़ीके जाला लगा देनेकी भी सम्भावना

थी !)–और यह बात भी स्वीकार कर ली जाय कि उनका पीछा करनेवालोंने जरा जल्दबाजी की और मकड़ीके जालेके धोखेमें आकर वह गुफा नहीं ढूँढ़ी तो भी भाग्यका समूल नाश नही हो सकता। संसारमें नित्य ऐसी अनेक घटनाएँ हुआ करती हैं जो भाग्यके अतिरिक्त और किसी चीज़के साथ सम्बद्ध हो ही नहीं सकतीं। यदि किसी बड़े अपराधीके साथ आकृति मिलनेके कारण ही पुलिस किसी भले मानुसको साल दो साल तंग करे तो क्या उक्त विद्वान्के कथनानुसार यही समझना होगा कि उस मनुष्यमें " व्यवस्था, दृढनिश्चय, अध्यवसाय और मनोबल आदिकी बड़ी भारी कमी थी "? अथवा यदि कोई पागल किसी महाजनके मकानमें आग लगाकर उसका सर्वस्व नष्ट कर दे तो क्या हम यह कहेंगे कि उस महाजनने अपना मकान बनवानेके लिये उपयुक्त स्थान चुननेमें भूल की थी? महाजन पर अपने मकानके चारो ओर पहरेदार बैठाने और लापरवाही करनेका दोष लगाना कहाँ तक युक्तिसंगत है, यह विज्ञ पाठक स्वय ही समझ लें। अभी हालमें इटालीमें बड़ा भारी भूकम्प आया था जिसमें हजारो आदमी मर गये थे और हजारोंका सर्वस्व नष्ट हो गया था। पर क्या केवल इसी लिये इटलीनिवासी महामूर्ख समझ लिये जायँ ! अवश्य ही उनके पूर्वजोंने अपने रहनेके लिये स्थान चुननेमें विचारसे कुछ कम काम लिया था और अपने लिये ऐसा देश पसन्द किया था जहाँ ज्वालामुखी पर्वतोंका प्रकोप अधिक था, पर अब उस मूर्खताका क्या प्रतीकार है ? वहाँ वाले अपना देश तो छोड़ ही न देंगे, तब क्या सिद्धान्त निकाला जाय ?

आशा है कि इस समय तक पाठक यह बात भलीभाँति समझ गये होंगे कि दोनों पक्षोंने अपना अपना सिद्धान्त पुष्ट करनेके लिये चरम सीमा तक उसकी खींचातानी की है और प्रायः लोग ऐसा ही करते भी हैं। मनुष्यमें पक्षपातका कुछ न कुछ अँश अवश्य होता है। बड़ा

भारी न्यायशील और विचारवान् भी अपने अनुचित पक्षका उस समय तक समर्थन करता जाता है, जब तक कि उसे अपनी भूल मालूम न हो जाय। पर संसार असंख्य विचित्रताओंका आगार है। इसमें अच्छे बुरे, उचित अनुचित, उलटे सीधे सभी तरहके सिद्धान्त पुष्ट करनेवाली अनगिनत घटनाएँ होती रहती हैं और उन्हीं घटनाओंको लेकर दोनों प्रकारके सिद्धान्तोंका खण्डन भी होता है और मण्डन भी । इस लिये न तो केवल भाग्य ही मनुष्यका सर्वस्व समझा जा सकता है और न कोई उद्योग अथवा इसी प्रकारका और कोई गुण ही उसके सब काम चला सकता है । पर इतना अवश्य मानना होगा कि उद्योगका जितना अधिक महत्त्व बतलाया जाता है वह यदि पूरा पूरा नही तो बहुतसे अंशोंमें अवश्य सत्य है। और भाग्यको दी जानेवाली प्रधानता आवश्यकता और औचित्यसे अवश्य अधिक है। आगे चलकर हम ये ही बातें सिद्ध करनेका प्रयत्न करेंगे।

केवल भाग्य पर निर्भर रहनेवाले लोग भी प्रायः बहुत कष्ट भोगते देखे जाते हैं और दिन रात उद्योग और परिश्रम करनेवाले भी । यह कहा जा सकता है कि वे भाग्यवादी अभागे होंगे और उद्योगी और परिश्रमी लोगोंने अपने उद्योग और परिश्रमका ठीक ठीक उपयोग न किया होगा। पर ये बातें केवल कहनेकी ही हैं, इनकी पुष्टिमें किसी प्रकारका प्रमाण उपस्थित नही किया जा सकता । यह बात हम अवश्य मानते है कि भाग्य पर निर्भर रहनेवाले सौ मनुष्योंमें से निन्यानबे मनुष्य अपनी भ्रमात्मक कल्पनाके ही कारण सदा अनेक प्रकारके कष्ट भोगते रहते है। भाग्यका आवश्यकतासे अधिक कल्पित महत्त्व संसारके कल्याणका बहुत कुछ बाधक है और उसके कारण मनुष्य अपना सारा कर्त्तव्य और उत्तरदायित्त्व भूल जाता है । चोर जब चोरी करता हुआ पकड़ा जाय तो वह कह सकता है कि हमारे

भाग्यमें यही बदा था और बालक यदि अपना पाठ याद न करे तो वह भी इस प्रकारकी बातें कह सकता है। पर यदि न्यायाधीश या शिक्षक इन बातोंको मान लें तो परिणाम क्या होगा ? दोनों ही दण्ड पानेके योग्य अवश्य है। चाहे न्यायाधीश और शिक्षक भले ही यह भी कह दें कि दण्डित होना भी तुम लोगोंके भाग्यमें ही बदा है। यदि हम केवल भाग्य पर निर्भर रहेंगे तो हमारे अविचारी, कुकर्म्मी और कर्त्तव्यविमुख हो जानेमें बहुत ही थोड़ी रुकावटें रह जायेंगी। यदि किसी समय हम पर कोई संकट आ पड़ेगा तो उसे निवारण करनेका प्रयत्न तो दूर रहा, हम यही समझ लेंगे कि अरे, अभी हमारे भाग्यमें न जाने और क्या क्या बदा है। इस प्रकार मानों हम अपने आपको कठिनाइयोंका उपयुक्त पात्र बना लेते है और एकके बाद एक नई नई विपत्तियोंको निमन्त्रण देने लगते हैं। जब कभी हमें कोई अच्छा अवसर मिलता है तो उसे भी हम अपने आपको अभागा समझ कर छोड़ देते हैं और इस प्रकार अपना बनता हुआ काम बिगाड़ लेते हैं। यदि नाव डूबनेके समय हम अपनी रक्षा-का प्रयत्न न करके चुपचाप बैठे रहें और यह सोचने लगें कि जो कुछ भाग्यमें बदा होगा सो होगा, तो कैसी बहार हो ! भाग्यकी इतनी अधिक कल्पना मनुष्यका उत्साह भंग कर देती है और इसी लिये वह घातक और त्याज्य है। सन्तोषका विषय है कि ज्यों ज्यों ज्ञानका प्रकाश फैलता जाता है त्यों त्यो लोगोंकी इस सम्बन्धकी यह अनुचित धारणा भी कम होती जाती है और उनका भ्रम दूर होता जाता है। पर इन सब बातोंका यह तात्पर्य्य नहीं है कि भाग्यकी कल्पना एक-दम भ्रमात्मक है और संसारमें भाग्य या उसके सदृश और कोई है ही नहीं। अतिवृष्टि या अनावृष्टिका फल अच्छेसे अच्छे परि-श्रमी कृषकको भी भोगना ही पड़ता है। उसके सम्बन्धमें यह नहीं

कहा जा सकता कि उसने अपने परिश्रमका ठीक ठीक उपयोग नहीं किया। रेल लड़ जानेके कारण मरनेवाले यात्रियों पर यह दोष नहीं लगाया जा सकता कि यात्रा आरम्भ करनेसे पहले उन्होंने विचारसे काम नही लिया था। लाटरीमें अथवा इसी प्रकारके और किसी काक-तालीय न्यायसे अनायास ही बहुतसा धन पानेवालेकी बुद्धिमत्ता या योग्यताकी प्रशंसा नहीं की जा सकती। भाग्य वास्तवमे कुछ न कुछ अवश्य है जिसे लोगोंने अपनी अज्ञानताके कारण बहुत अधिक महत्त्व दे दिया है। ग्रहण अवश्य लगता है, पर उसका कारण राहू और केतु नही है। उसका कारण छाया है। जिस प्रकार छायाको बढ़ाकर, अथवा अज्ञानतासे राहु और केतुकी कल्पना की गई है उसी प्रकार वास्तविक भाग्यको बढ़ाकर, अथवा अज्ञानतासे वह स्वरूप दिया है जिसमे हम उसे सर्वसाधारण पर अपना आतंक जमाये हुए देखते है। अब हमें देखना यह है कि वह वास्तविक भाग्य क्या है।

भाग्यका मनुष्य मात्रके साथ कुछ न कुछ सम्बन्ध है और वह सम्बन्ध अनेक प्रकारका है। अपने कर्म्मोका फल, निसर्ग, परिस्थिति, सामाजिक अवस्था, सभ्यता, संगति आदि सभी भाग्यका एक न एक अग है। अन्य मतवालोंकी अपेक्षा बौद्धों और हिन्दुओंका भाग्य-स-म्बन्धी सिद्धान्त कुछ अधिक सार्थक जान पड़ता है। यदि लोग उ-सका ठीक ठीक अभिप्राय न समझकर अपनी अपनी तरफ खीचातानी करें तो इससे सिद्धान्तमें कोई त्रुटि नही पड़ सकती। जड़ और नि-र्जीव पदार्थोके भाग्य और अभाग्यका विचार बहुत ही सूक्ष्म है और वह विषय बड़े बड़े धर्म्मशास्त्रियो और दिग्गज पंडितोंके लिये छोड़ देना ही अधिक उपयुक्त है। इस पुस्तकका विषय तो पशु-पक्षियोंसे भी कोई सम्बन्ध नहीं रखता, इसलिये हमें केवल मानव-भाग्य पर ही थोड़ा सा विचार करनेकी आवश्यकता जान पड़ती है। कहा है कि—"अव-

श्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म्म शुभाशुभम् । ” मनुष्य जितने अच्छे और बुरे काम करता है उन सबका फल उसे अवश्य भोगना पड़ता है। भोग कभी नष्ट नहीं होता। यह सिद्धान्त अटल है और इसे प्रत्येक देश और कालके लोग किसी न किसी रूपमें अवश्य मानते हैं। आप कह सकते है कि संसारमें बहुतसे आदमी ऐसे मिलेंगे जो अनेक प्रकारके पाप और कुकर्म्म करके बड़े सुखसे इस संसारसे चल बसते हैं। उनके कर्म्मका भोग कहाँ जाता है ? सबसे पहले तो उस पापी और कुकर्म्मी-को ही अपने कियेका फल भोगना पड़ता है, किसी न किसी प्रकार-से दंडित होना पड़ता है। और यदि नहीं तो मनुने कहा है—

“ यदि नात्मनि पुत्रेषु न चेत् पुत्रेषु नप्तृषु ।
न त्वेव तु कृतो धर्म्मः कर्तुर्भवति निष्फल. । ”

(मनुस्मृति अ० ४ श्लो० १७३)

अर्थात्—“ यदि मनुष्य स्वयं अपने अधर्म्मका फल न भोगे तो उसका पुत्र भोगेगा । यदि पुत्र न भोग सका तो पोता और पोता भी न भोग सका तो नाती भोगेगा । अधर्म्म कभी निष्फल नहीं जाता। ” और यही बात संसारिक व्यवहारोंमें नित्यप्रति देखनेमें भी आती है। पिता यदि ऋण छोड जाता है तो पुत्र उसे चुकाता है और पिता यदि सम्पत्ति छोड़ जाता है तो पुत्र उसका भोग करता है। यह सिद्धान्त धर्म्म और अधर्म्म, शुभ और अशुभ कर्म्म सबके लिये समान रूपसे प्रयुक्त होता है।

हिन्दूशास्त्रोंमें जन्म-भेदसे कर्म्म चार प्रकारका माना गया है—संचित, प्रारब्ध, क्रियमाण और भावी। संचितका अर्थ है संग्रह किया हुआ। पुनर्जन्म माननेवालोंके अनुसार ‘ संचित ’ अनेक जन्मोंमें किये हुए हमारे उन शुभ और अशुभ कर्म्मोंका फल है जो हम अभी-तक भोग नहीं सके हैं और जिन्हें भोगनेके लिये हमें बार बार जन्म

लेना पड़ता है। प्रारब्ध उस संचितका वह अंग है जो हम किसी एक जन्ममें भोगते हैं। यहाँ पर यह बात ध्यान रखने योग्य है कि संचित या प्रारब्धका हमारे समस्त जीवन पर पूरा पूरा अधिकार नहीं है। उसे अधिकार केवल अपनी ही सीमातक है। उस सीमाके बाहर भी हमें अपनी योग्यता और विवेकके अनुसार शुभ और अशुभ सभी कर्म्म करनेका अधिकार है। प्रारब्धके प्रभावसे भिन्न, अपनी योग्यता अथवा विवेकके अनुसार हम संसारमें जो अच्छे या बुरे कार्य्य करते हैं उन्हीका नाम क्रियमाण है। हमारे इस जन्मके अच्छे 'क्रियमाण' से पूर्वजन्मके बुरे 'संचित' का नाश होगा और बुरे 'क्रियमाण' से अच्छे 'संचित' का। मनुष्यके मरनेपर बचा हुआ 'क्रियमाण' उसके 'संचित' में मिल जाता है और तब उसी संचितके अनुसार उसका पुनर्जन्म होता है। भावीसे तात्पर्य्य प्रकृति आदिका है जिसपर हमारा कोई वश नही है, पर तो भी जिसका फल हमें अवश्य भोगना पड़ता है। इसे अधिक स्पष्टरूपसे समझनेके लिये पाठकोंको, अतिवृष्टि या अनावृष्टि और कृषकके सम्बन्धका ध्यान कर लेना चाहिये। पर जो लोग पुनर्जन्म आदि कुछ भी नही मानते उनके लिये भी इसका कुछ अर्थ अवश्य होना चाहिये और है। भगवान् मनुके कथनानुसार पिताके कर्म्मोंका फल उसकी भावी सन्तानको अवश्य भोगना पड़ता है और यही नित्य प्रति देखा भी जाता है। अनेक प्रकारके शारीरिक और मानसिक गुण और स्वभाव तथा बहुतसे रोग तक पुरुषानुक्रमिक होते हैं। एक मनुष्यका स्थापित किया हुआ राज्य उसकी बहुतसी पीढ़ियाँ भोगती हैं। ऐसी अवस्थामें इस सिद्धान्तके माननेमे किसी प्रकारकी आपत्ति नहीं हो सकती। यदि संचित और प्रारब्धको हम अपने पूर्व जन्मोंके कियेका फल न मानें तो उन्हें अपने पुरखाओंके कियेका फल मान लेनेसे भी काम चल जायगा। हमारा क्रियमाण जिस

पर हमें पूरा पूरा अधिकार है हमारे बुरे संचितको नष्ट कर देगा। हमारे बाप दादा यदि हमें बुरी दशामें छोड़ गये हों तो हम अपने सत्कर्मोंसे अपनी दशा सुधार लेंगे और अगर हमें बपौतीमें अच्छी मान मर्य्यादा या धन सम्पत्ति मिली होगी तो हम उसे अपनी नालायकी-से नष्ट भी कर देंगे। यही नहीं बल्कि हम अपने अच्छे या बुरे कर्म्मों-का फल यदि भविष्य जन्मके लिये नहीं तो कमसे कम भविष्य सन्तानके भोगनेके लिये अवश्य छोड़ जायँगे। इस सम्बन्धमें यहाँ तक तो हमें पूरा पूरा अधिकार है ही; अब रही भावी, सो उस पर हमें अधिकार तो बिलकुल नहीं है, पर मनुष्य उससे बचनेके बहुतसे उपाय निकाल सकता और निकालता है। इसके सिवा हमारे साथ उसका लगाव भी बहुत कम है और बराबर दिन पर दिन, सभ्यताकी वृद्धिके साथ साथ घटता जाता है।

ऊपर कहा जा चुका है कि यदि गेहूँ बोनेसे गेहूँ उगे तो उसमें सौभाग्यकी कोई बात नहीं है। मनुष्यने परिश्रम किया है उसका फल उसे अवश्य मिलना चाहिये। हाँ अगर सूखा पड़ने या बाढ़ आनेके कारण फसल नष्ट हो जाय तो अवश्य दुर्भाग्य समझना चाहिये। वास्तविक भाग्य वही है जिसका विरोध करना हमारी शक्तिसे एकदम बाहर हो। यदि खेतिहर खूब गहरी जोताई करे, अच्छेसे अच्छे बीज बोए और अपनी ओरसे परिश्रम करनेमें कोई बात उठा न रक्खे तो भी उसका अच्छी फसल करना प्रकृति या ऋतुकी कृपा पर ही निर्भर करता है। पर मनुष्यको ईश्वरने कहाँतक शक्ति दी है और उसे अपने कर्म्मोंके लिये कहाँतक स्वतन्त्र बना दिया है उसका अनुमान इसीसे किया जा सकता है कि वह दिनपर दिन अपने आपको इस भावी, प्रकृति या भाग्य आदिके चंगुलसे निकालनेके लिये नये नये प्रयत्न करता और यथासाध्य सफलीभूत भी होता है।

सब देशोंमें अनावृष्टिके कारण फसल बिलकुल नहीं होती अकाल पड जाता है। पर अभी हालमें अमेरिकावालोंने विना जलकी खेती (Dry Farming) का जो तरीका निकाला है उससे अनावृष्टि-के कारण अच्छी फसल होनेमें कभी कोई बाधा नहीं पड़ सकती। जिस स्थान पर जरा भी वर्षा न होती हो वहाँ भी इस तरीकेसे बहुत अच्छी खेती की जा सकती है और यथेष्ट धान्य उत्पन्न किया जा सकता है। आजसे पाँच सौ वर्ष पहले समुद्र-यात्रा जितनी अधिक भाग्य पर निर्भर करती थी उतनी आज नहीं है। उस समयकी नाव साधारण तूफानोंमें डूब जाती थी पर आजकलके जहाज बड़े बड़े तूफानोंकी जरा भी पर्वा न करके बड़े आनन्दसे बराबर चलते रहते हैं। इतने दिनोंमें भाग्यका महत्त्व इतना कम हो गया ! और यह सब किसकी कृपासे हुआ ? एक मात्र उद्योगकी कृपासे ! पर क्या किसी बिसाती, बजाज, दलाल या किसी और पेशेवरका भी प्रकृतिसे उतना ही लगाव है जितना खेतिहरों और समुद्री यात्रा करनेवालोंका ? कदापि नहीं। बात यह है कि हम ज्यों ज्यों प्रकृतिके प्रभावसे दूर होते जाते हैं त्यों त्यों हमारी भाग्यकी अधीनता भी कम होती जाती है। गरमी, बरसात और जाड़ेका प्रभाव खेतिहरपर तो अवश्य पड़ता है पर कोयलेकी खानके मालिकका उससे उतना या वैसा सम्बन्ध नहीं है। तो भी प्रकृतिके साथ उसका कुछ न कुछ सम्बन्ध अवश्य है। किसीने कोई जमीन लेकर अच्छी तरह उसकी जाँच कराई और जब उसे मालूम हो गया कि यहाँ बहुत अधिक और बढ़िया कोयला निकलेगा तो उसने बहुतसा रुपया खर्च करके काम लगाया। यदि तीन चार महीने बाद उसे मालूम हुआ कि अभी तक ठीक सूत्र नहीं मिला और उसके लिये फिरसे बहुतसा धन और समय लगानेकी आवश्यकता होगी तो वह अवश्य अभागा है।

इस सम्बन्धमें कुछ न कुछ बातें अवश्य ऐसी हैं जिन पर मनुष्यका कोई अधिकार नहीं है। यदि सूत्र पानेमें उसने अपनी ओरसे कोई त्रुटि या भूल न की हो तो अवश्य ही उसके भाग्य (और वह भी केवल भावीसम्बन्धी) का दोष है। पर जब उसे पहले ही पहल ठीक सूत्र मिल गया और अच्छी तरह कोयला निकलने लगा तो वह प्रकृतिके प्रभावसे बाहर निकल आया। अब कोयलेका व्यापार करके लाभ उठाना उसकी एक मात्र योग्यता पर निर्भर है। अपनी दुर्भाग्यकी शिकायत करनेका उसे कोई अधिकार नहीं है। यह सब सिद्धान्त रोजगार और पेशोंके लिये है; अफीम और रूईके सट्टे या इसी प्रकारके किसी और जूएके लिए नहीं। उनमें तो मनुष्य जानबूझकर अपना धन जोखिममें डालनेकी मूर्खता करता है। उसमें होनेवाली हानि न तो दुर्भाग्यके कारण होती है और न प्राप्ति सौभाग्यके कारण। लोग धन गँवा बैठते हैं और कभी कभी संयोगसे पा भी लेते हैं। वास्तवमें रूई या अफीमकी दरके अंकोंसे हमारा किसी प्रकारका सम्पर्क नहीं है और न कौड़ीके चित या पट पड़नेसे कोई लगाव है।

प्रायः लोगोंकी यह एक साधारणा धारणा है कि जो मनुष्य भाग्यवान् होता है उसीको अच्छे अच्छे अवसर भी मिलते हैं और वही उनसे यथेष्ट लाभ उठाता है; अभागे लोगोंको तो कभी किसी बातका अवसर ही नहीं मिलता। इसी लिये "रुपयेको रूपया खींचता है।" "मायाको माया मिले दोनों हाथ पसार।" "भाग्यवान्का हल भूत जोतता है।" आदि आदि अनेक कहावतें भी बन गई है। यदि यह बात मान भी ली जाय तो भी इसे हम नियम मात्र कह सकते हैं, भाग्यका इसके साथ सम्बन्ध प्रायः नहींके समान है। यदि किसी योग्य मनुष्यको कोई अच्छा अवसर हाथ आ जाय तो हमें यही समझना चाहिये कि "ईश्वर उन्हींकी सहायता करता है जो अपनी सहायता

आप करते हैं । " क्योंकि प्रायः यही देखा जाता है कि जब किसी अयोग्य या अभागेको कोई अच्छा अवसर मिलता है तो वह उससे लाभ उठानेके लिये कुछ भी प्रयत्न नहीं करता ।

मुख्य प्रश्न यह है कि "व्यापारों और देशोंका ऐसी घटनाओंसे अथवा बाधाओंसे जिनपर मनुष्यका कोई अधिकार नही है, कहाँतक सम्बन्ध है ?" हमारी समझमें—बहुत ही कम ! नये कामोंमें होनेवाली और दिनपर दिन बढ़नेवाली कठिनाइयोंका महत्त्व हम नहीं घटाते, पर साथ ही यह कहनेमें भी हम कोई हानि नहीं समझते कि एक दृढ-निश्चयी, परिश्रमी और योग्य मनुष्य वे कठिनाइयाँ बहुत सरलतासे दूर कर सकता है। यदि यह बातें स्वीकार कर ली जायँ कि कुछ व्यापारों और पेशोंमें औरोंकी अपेक्षा अधिक लाभ होता है, बेईमान और धूर्त्त लोग प्रायः भले आदमियोंकी अपेक्षा अधिक सुखसे रहते हुए देखे जाते हैं और कुछ लोगोंको अनायास ही उत्तम सन्धियाँ मिल जाती है तोभी हम बातोंकी यथार्थता तक नहीं पहुँचते । सफलता उन्ही लोगोंको होती है जो उच्चाशय, सदाचारी और योग्य हों। कोई दुराचारी कभी वास्तविक सफलता नहीं प्राप्त कर सकता, अयोग्य कभी अच्छे पद पर स्थिर नही रह सकता और नीच प्रकृतिका मनुष्य कभी यशस्वी नहीं हो सकता । यही सब प्रकृतिके साधारण नियम हैं। जो लोग यह नियम नही जानते वे ही भाग्यको सर्वस्व समझने लगते है, पर सूक्ष्म विचारसे यह पता लग जाता है कि नियमोंकी जितनी अधिक प्रधानता है उतनी भाग्यकी नही है । जो काम सच्चे दिल, मेहनत और ईमानदारीसे किया जाय वह जरूर पूरा होगा उसमें दुर्भाग्यकी प्राय' कोई कला न लगेगी ।

" लाला बंसीधरने देखा कि इस शहरमें गोटे पट्टेकी कोई अच्छी दूकान नहीं है, इस लिये उन्होंने चौकमें मौकेकी एक दूकान लेकर गोटे पट्टेका काम शुरू किया । उनकी जान पहिचान बहुतसे लोगोंसे

थी और उनके यहाँ चीज भी अच्छी और किफायतसे मिलती थी। इस लिये सालभरमें ही उनकी दूकान खूब चल निकली और दस बरसमें उन्होंने एक लाख रुपया पैदा कर लिया। क्या बात है, लाला बंसीधर बड़े भाग्यवान् हैं।" यों कहनेको तो सब लोग कह देंगे कि हाँ लाला बंसीधर बड़े भाग्यवान् हैं। पर लालासाहबने गोटेकी दूकानका अभाव देखकर चौकमें मौकेकी दूकान ली, इसके लिये उनकी सूझ और समझदारीकी तारीफ करनेकी तकलीफ कोई नहीं उठाता। अच्छे अच्छे लोगोंसे जान पहचान करनेमें कितनी लियाकतकी जरूरत है, यह समझनेकी फुरसत लोगोंको कहाँ? लाला बंसीधरको भाग्यवान् बतलाकर ही सब लोग छुट्टी पा जाते है। यही दशा और लोगोंकी समझिये। जिसने अपने कार्य्यमें सफलता प्राप्त कर ली उसीको सब लोग भाग्यवान् कहने लगे और जिसका मनोरथ सफल न हुआ वह तो अभागा है ही।

पर यदि इस प्रकारकी सब घटनाओं पर भलीभाँति विचार किया जाय तो जान पड़ेगा कि सफलता और विफलता अधिकतर मनुष्यकी योग्यता और क्षमता पर ही निर्भर करती है। भाग्यसे उनका सम्बन्ध अपेक्षाकृत बहुत ही कम है। इसमें सन्देह नही कि कुछ लोग वास्तवमें बड़े भाग्यवान् होते है और उनके द्वारा उनकी योग्यता और सामर्थ्यसे बाहर बहुतसे काम आप ही आप और अनायास होजाते है। इसीप्रकार कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जिनमें योग्यता कार्य्यपटुता दूरदर्शिता आदि सभी गुण औरोंकी अपेक्षा अधिक होते हैं पर तो भी चाहे संयोगवश ही सही, प्रायः उन्हें विफलता ही होती है। पर ऐसे भाग्यवान् या अभागे संसारमे बहुत ही थोड़े हैं और जबतक प्रत्येक मनुष्य किसी काममें विचारपूर्वक अपनी सारी शक्तियाँ न लगा दे तबतक उसे अपने आपको अभागोंमें कदापि न गिनना चाहिये। बल्कि उचित तो यह है कि

मनुष्य आपको सदा भाग्यवान् ही समझे। इससे उसमें उत्साह और प्रसन्नता आदिकी वृद्धि होगी और धीरे धीरे वह वास्तवमें भाग्यवान् भी हो जायगा। एक विद्वान्का यह कहना बहुतसे अंशोंमें अक्षरशः सत्य है कि ईश्वरके साथ मनुष्यका इतना निकट सम्बन्ध है कि वह जैसा बननेकी प्रबल इच्छा करता है, बहुधा उसे ईश्वर वैसा ही बना भी देता है।

देश, काल और समाज आदिका भी मनुष्यके भाग्यसे थोड़ा बहुत सम्बन्ध है। जिस देशमें सब प्रकारके पदार्थ उत्पन्न होते वा बनते हों उस देशके लोगोंको सुखी होनेका अधिक अवसर मिलता है। यद्यपि आजकी बढ़ती हुई सभ्यता इस कथनके विरुद्ध प्रमाण उपस्थित करती है और जिन देशोंमें कुछ भी उत्पन्न नहीं होता वहाँके लोग बाहरसे कच्चा माल मँगाकर उनसे तरह तरहकी चीजें बनाते और उनसे करोड़ों रुपये पैदा करते हैं, अपने देशको सम्पन्न सभ्य और सुखी बनाते है और विद्या, विज्ञान और कलासम्बन्धी नये नये आविष्कार करके अपनी गणना बड़े बड़े भाग्यवानोंमें कराते हैं, तथापि विचारपूर्वक देखिये तो आप समझ लेंगे कि उनकी उस उन्नतिका मुख्य कारण उनका अध्यवसाय और परिश्रम ही है। एक विद्वान्ने इस सम्बन्धमें जोर देकर यहाँ तक कहा है कि प्राचीन कालमें वे ही देश सम्पन्न समझे जाते थे जहाँ प्राकृतिक सुविधाएँ अन्य देशोंकी अपेक्षा अधिक होती थीं; पर आज कल वही देश सम्पन्न समझा जाता है जहाँ-के लोग अधिक परिश्रमी और कर्म्मठ हों। जिस देशमें सब तरहकी चीजें उत्पन्न होती है, वहाँके लोग यदि केवल कच्चा माल उत्पन्न करके निश्चिन्त बैठ रहें तो उनके अभागे रह जानेमें क्या सन्देह है? पर यदि वे ही लोग अन्य उन्नत जातियोंकी भाँति परिश्रम और उद्योग करें तो अवश्य ही वे अपनी प्राकृतिक सुविधाओंके कारण औरोंकी अपेक्षा शीघ्र और सहजमें सुखी, सम्पन्न और उन्नत हो सकते हैं,

और उस दशामें सारा संसार उन्हींको सबसे अधिक भाग्यवान् समझेगा ।

कालका भी भाग्यके साथ कुछ ऐसा ही सम्बन्ध है । संसारमें कभी तो वह समय रहता है जब कि मनुष्य थोड़े परिश्रमसे ही सब कुछ कर लेता है और कभी ऐसा समय आ जाता है जब कि बहुत अधिक परिश्रम करनेपर भी पेट भरनेतकको पूरा अनाज नहीं मिलता। इस सम्बन्धमें अधिक विचार इस प्रकरणके अन्तमें कठिनाइयोंका वर्णन करते समय प्रकट किये गये हैं। मनुष्य पर संगतिका जो प्रभाव पड़ता है उसका वर्णन यथास्थान पहले ही किया जा चुका है। मनुष्यका जैसे लोगोंके साथ सम्बन्ध रहता है वह उन्हींकी तरहका हो जाता है, इसमें भी कोई सन्देह नहीं । अनेक शूद्र पढ़ लिख कर अच्छे अच्छे पदों पर पहुँचते हुए देखे जाते हैं। हबशियोंने अमेरिकामें यूरोपियनोंके साथ रहकर जो उन्नति की है वह वर्णनातीत है। उन्हींके दूसरे भाई और सजातीय अब तक आफ्रिकामें बैठकर अपने भाग्योंको ही रो रहे हैं ।

ज्यों ज्यों समय बीतता जाता है त्यों त्यों इस बातके अधिकाधिक प्रमाण मिलते जाते है कि संसारके सब कामोंमें उद्योग ही अधिक प्रधान है, भाग्यका अधिकार बहुत ही संकुचित है । उसका यह परिमित अधिकार भी बहुतसे अंशोंमें सृष्टिके कुछ विशिष्ट नियमों पर ही अवलंबित है और उनमें किसी प्रकारका परिवर्तन करना मानवशक्तिके बाहर है । न तो खेतिहर कभी अपने इच्छानुसार पानी बरसा सकता है और न प्रत्येक बालक जन्म लेते ही मखमलकी गद्दियों पर सुलाया जा सकता है । हाँ, पानी न बरसने पर खेतिहर स्वयं अपनी शक्ति भर सिंचाई कर सकता है और दरिद्रके घर जन्म लेनेवाला बालक बड़ा होकर धन कमा सकता है । पर धनवान्के लड़केको बाल्यावस्थामें ही जितनी

अधिक बातें जाननेका अवसर अनायास ही मिल सकता है उतना गरीबके लड़केको नहीं मिल सकता। इस त्रुटि पर गरीबके लड़केका इतना ही अधिकार है कि वह उसे अपने बाहुबलसे पूरा करे। रोगी और दुर्बल माता पितासे उत्पन्न होनेवाला बालक भी रोगी और दुर्बल ही होगा। यदि वह विकलांग हुआ तब तो निरुपाय ही हो जायगा और नही तो नीरोग और सबल बननेके लिये उसे बहुत अधिक प्रयत्न करना पड़ेगा। यदि बालक किसी पुरुषानुक्रमिक रोगसे पीडित हो तो उसका सारा उत्तरदायित्त्व उसके पुरुषाओं पर ही हो सकता है। क्योंकि अधिकाश रोग दुर्व्यसनों और दुगुर्णोंके कारण ही होते हैं। यदि ऐसे लोग सन्तान उत्पन्न न करें तो अवश्य हीं संसारमें अभागोंकी बहुत ही थोडी संख्या दिखाई पड़े। इसी लिये मनु आदि स्मृतिकारोंने अनेक रोगोंसे पीड़ित मनुष्योंके विवाहकी आज्ञा नही दी है। बहुतसे लोग ऐसे भी होते है जिनके माता पितामें तो कोई दोष नही होता पर जो स्वयं अपने कुकर्म्मोंसे शरीरमें इतने दोष और रोग उत्पन्न कर लेते है जितने किसी दूषित माता पितासे उत्पन्न बालकोंमें भी नही हो सकते। पर यह बात भी निर्विवाद सिद्ध है कि प्रत्येक मनुष्यमें स्वयं अपनी उन्नति करनेकी जितनी अधिक शक्ति है, उसे उन्नत बनानेकी प्राय· उतनी ही शक्ति उसके माता पितामें भी है। यदि किसी अनिवार्य्य दोष या अभावके कारण हम स्वयं भाग्यशाली नही बन सकते तो प्रयत्न करने पर कमसे कम अपनी सन्तानके भाग्य अवश्य ही अच्छे बना सकते हैं।

यह बात भी निर्विवाद प्रमाणित ही है कि प्रत्येक शक्ति प्रयत्न करके बढ़ाई जा सकती है। वाग्भटने कहा है कि यदि मनुष्यमें कर्तृत्व शक्ति अधिक हो तो वह दैवसे भी आगे बढ़ सकता है। साधारण मनुष्य मैदानोंमें भी मील दो मीलसे अधिक दूरकी चीजें नहीं देख

सकता, पर दूरबीनें उसे चौगुनी दूर तककी चीजें दिखला सकती हैं। मनुष्यकी आवाज एक मील भी नहीं जा सकती पर तारों द्वारा, और यहाँ तक कि बिना तारके भी, हजारों मील तक समाचार पहुँचते हैं। अभी हालमें अमेरिकाके राष्ट्रपति विलसनने राजनगर वाशिंगटनमें बैठे बैठे केवल एक बटन दबा कर हजारों मील दूरकी पनामा प्रदर्शिनी खोल दी थी। यदि सच पूछिये तो मनुष्योंने प्रयत्नद्वारा प्रकारान्तरसे अपनी देखने और सुननेकी शक्तियाँ ही बढ़ाई हैं। फोनोग्राफ हमारी बोलनेकी बढ़ी हुई शक्ति है और रेल चलनेकी। कलें बना कर मनुष्यने अपने काम करनेकी शक्ति बढ़ाई है और आकाश-यान बना कर तो मानों उसने अपने लिये नई शक्ति ही गढ़ली है। यह सब काम उद्योगियोंके ही हैं, केवल भाग्य पर निर्भर रहनेवाले मनुष्योंने आज तक कभी कोई ऐसा काम नहीं किया। भाग्य किसी मनुष्यको अच्छी या बुरी स्थितिमें उत्पन्न ही कर सकता है पर उद्योग और कर्म्म बहुधा उस स्थितिको बदल देनेमें भी समर्थ होते है।

यहाँ तक तो हुआ भाग्य-सम्बन्धी प्रश्न पर विचार; अब दिन पर दिन बढ़नेवाली कठिनाइयोंको लीजिये। कुछ लोग तो ऐसे हैं जिनका यह विश्वास है कि पहले सतयुग था; उस समयके लोग बहुत सुखी होते थे। आजकलका कलियुग मनुष्योंको केवल दुःख देनेके लिये ही है। ऐसे लोगोंसे हम यह कहना चाहते है कि बहुत प्राचीन कालमें देशोंकी जनसंख्या बहुत ही परिमित होती थी। लोगोंकी आवश्यकताऍं भी बहुत कम होती थीं और आज कलकी तरह इतनी लाग डॉट और चढ़ाऊपरी न होनेके कारण बहुत ही थोड़े परिश्रमसे लोग अपनी सब आवश्यकताएँ पूरी कर लेते थे। पर आजकलकी स्थिति उससे बहुत भिन्न है। जन-संख्या नित्यप्रति बढ़ती जा रही है और मनुष्योंकी आवश्यकताऍं आदि भी उसी मानसे बराबर बढ़ रही हैं।

ऐसी अवस्थामें हमें यह देखना चाहिये कि सारा संसार क्या कर रहा है? यदि हमारी तरह सारा संसार दुखी और दरिद्र हो तब तो कलियुग अवश्य बहुत प्रबल है और हम लोगोंका उस पर कोई वश नही है। पर जब हम देखते है कि सारी जातियाँ उन्नतिकी दौड़में सबसे आगे बढ़नेका प्रयत्न कर रही हैं और केवल हम ही भाग्यके भरोसे जहाँके तहाँ खडे हुए है तो हमें अपनी ही भूल दिखलाई पड़ने लगती है। यदि कलियुग वास्तवमें दु:खदायी है तो उसका प्रभाव सब देशों पर समानरूपसे होना चाहिये, केवल भारतवासियोंसे उसका कोई खास वैर नही है। यदि वास्तवमें उसका कोई बुरा प्रभाव हो भी तो हमें उसका फल उतना ही भोगना चाहिये जितना कि और जातियाँ भोगती है। यदि हम और जातियोंसे अधिक दुखी और पिछड़े हुए हों तो उसमें दोष हमारी अकर्म्मण्यताका है, युग या कालका नही।

पर सौभाग्यवश इस कोटिके लोग केवल भारतमें ही है और बहुत कम हैं; और अधिक सन्तोषका विषय यह है कि जो है वे संख्यामें बराबर कम होते जा रहे है। शेष ससारके लोग यह सिद्धान्त नही मानते। उनमेंसे बहुतसे लोग यही कहते है कि दिनपर दिन जमाना बड़ा टेढ़ा होता जाता है, सभी व्यवसायोमें कठिनाइयाँ बढ़ती जाती हैं और साधारण योग्यताके आदमियोंके लिये जीविका निर्वाह करना यदि असम्भव नही तो परम दुष्कर अवश्य है। सबसे पहली बात तो यह है कि जो लोग इस तरहकी शिकायत करते हुए देखे जायँ उन्हें अकर्म्मण्य और अयोग्य समझना चाहिये। जमानेकी शिकायतका इसके सिवा और कोई मतलब ही नही हो सकता। किसी कविने कहा है—"लोग कहते हैं बदलता है ज़माना अक्सर। मर्द वह हैं जो ज़मानेको बदल देते हैं॥" यद्यपि इस कथनकी सत्यतामें किसीप्रकारका सन्देह नही किया जा सकता

ो भी इतना अवश्य है कि प्रत्येक मनुष्य ऐसा 'मर्द' नहीं होसकता
ो जमाना बदल दे। जो लोग वास्तवमें मर्द हैं, उन्होंने अवश्य
मानेका रुख पलट दिया है। भगवान् श्रीकृष्ण, महात्मा बुद्ध और
गद्गुरु शकराचार्यसे लेकर गुरु नानक, शिवाजी, गुरु गोविन्दसिंह,
जा राममोहनराय, जस्टिस महादेव गोविंद रानडे और स्वामी दयानन्द
रस्वती तक सब इसी कोटिके हैं। इन सबने अपने अपने समयमें देशकी
िसी न किसी प्रकारकी दुर्दशा देखी, जमानेको उलटे रास्ते जाते हुए
खा। वे 'मर्द' थे, उन्होंने अपने बाहुबलसे जमानेका रुख पलट दिया,
ोगोंको उलटे रास्तेसे हटाकर सीधे रास्ते पर लगाया। पर ऐसा करनेके
िए असाधारण विद्या, बुद्धि, आत्मबल, सच्चरित्रता, सहनशीलता और
ृढ़ता आदिकी आवश्यकता होती है। यद्यपि साधारण योग्यताके
ोग भी प्रयत्न करें तो बहुतसे अंशोंमें उक्त गुणोंसे भूषित हो सकते
, पर सब लोगोंके लिए वैसा करना बहुत कठिन है। हाँ, किसी
किसी अंशमे ऐसे महात्माओंका अनुकरण करके ही लोग बहुत कुछ
ाम कर सकते हैं।

जो लोग समयकी शिकायत करते हैं उन्हें सबसे पहले यह जानना
ाहिए कि समय क्या चीज है। जिस समय अधिकांश मनुष्य अज्ञान
ोते थे, उस समयको लोग 'अज्ञानकाल' कहते हैं। इस प्रकार
ोग अपनी अज्ञानताका दोष काल पर डालना चाहते हैं। पर वास्तवमें
मय स्वयं कोई चीज नहीं है। हम उसे जैसा बनाते और समझते हैं
ह वैसा ही हो जाता है। मनुष्य जब जैसे जैसे कार्य्य करता है,
मय तब वैसे ही वैसे रूप धारण करता है। यदि समाज सुशिक्षित,
द्वान्, सभ्य और सम्पन्न हो तो समय अच्छा समझा जाता है और
दि लोग, अपढ़, मूर्ख, गँवार और दरिद्र हों तो समय खराब समझा

जाता है। ऐसी दशामें आज कलके समयको खराब कहनेका कोई कारण नहीं जान पड़ता। कुछ लोग कहा करते हैं कि दिन पर दिन सब बातोंमें कठिनाइयाँ बढ़ती जाती हैं, पर उन्हें कभी इस बातका ध्यान नहीं होता कि कठिनाइयोंके बढ़नेके साथ ही साथ उन्हें दूर करनेके साधन भी बढ़ते जाते हैं। दूसरी बात यह है कि ज्यों ज्यों संसार अधिक उन्नत और सभ्य होता जाता है त्यों त्यों उसकी कठिनाइयाँ भी अनिवार्य्य रूपसे बढ़ती ही जाती है और यही कारण है कि जगत् चाहे पहलेसे बहुत अधिक सम्पन्न और विद्वान् भले ही हो, पर सुखी बहुत ही कम है। पर ऐसी दशामे केवल समयकी कठिनाइयोंका ध्यान करके ही बैठे रहना मानों संसारकी दौडमें सबके पीछे रह जाना और ईश्वरप्रदत्त शक्तियोंका दुरुपयोग करना है। किसी कार्य्यकी कठिनताका महत्त्व और भय उसीके लिए है जो उसको दूर नही कर सकता। जिस मनुष्यमें कठिनता दूर करनेकी शक्ति होती है वह न तो उसको कोई चीज समझता है और न कभी विफल-मनोरथ ही होता है। कठिनतासे घबराना ही अयोग्यता और दुर्बलताका प्रधान चिह्न है।

यह बात सभी लोग स्वीकार करते हैं कि संसारमें दिनपर दिन कठिनाइयाँ बढती जाती है। सब तरहके कामोंमें चढ़ा-ऊपरी और लाग-डॉट बढ़ती जाती है। यदि एक दूकानदार कोई चीज एक रुपयेपर बेचता है तो दूसरा वही चीज पन्द्रह आनेपर बेचनेका प्रयत्न करता है। यदि एक मनुष्य किसी दूकानका किराया १०) रु० दे सकता है तो दूसरा उसी दूकानको १२) या १५) पर लेना चाहता है। यदि एक मनुष्य किसी दफ्तरमें ३०) पर काम करनेके लिए उद्यत होता है तो दूसरा २५) पर ही वह काम करनेके लिए मुँह बाए तैयार रहता और यहाँ तक कि खुशामदें करता, सिफारिशें लाता और

फेरे लगाता है। ज्यों ज्यों जनसंख्या बढ़ती जाती है त्यों त्यों यह लाग-डॉट भी बढ़ती जाती है और इसका बढ़ना अनिवार्य्य है। उसे रोकना मनुष्यकी शक्तिके बाहर है।

अभी हालमें एक स्थानीय विद्यालयमें एक पण्डितकी आवश्यकता हुई थी। दो तीन अखबारोंमें विज्ञापन दिये गये। दो सप्ताहोंके अन्दर प्राय ७०० प्रार्थनापत्र आ गये! प्रार्थनापत्र भेजनेवालोंमें योग्य और अयोग्य सभी प्रकारके लोग थे, पर अधिक संख्या योग्योंकी ही थी। यदि उनमेसे ४०० प्रार्थी भी योग्य हों तो समझनेकी बात है कि प्रत्येक प्रार्थीके लिये ४०० मे से केवल एक अवसर था। यदि केवल २० ही प्रार्थी होते तो बहुत ही थोड़ी चढ़ा-ऊपरीकी जगह बाकी रहती। जगह तो केवल एक ही थी और उस पर नियुक्त भी केवल एक ही आदमी हुआ, शेष सब लोगोको निराश होना पड़ा। प्रार्थियोंमेंसे कुछ लोग तो ऐसे थे जिनकी योग्यता अपेक्षाकृत बहुत कम थी और जो वेतन अधिक चाहते थे, और कुछ लोग ऐसे भी थे जो अधिक योग्य और विद्वान् हो कर भी थोडे वेतन पर काम करनेके लिये तैयार थे। थोडी योग्यतावाले लोगोंका अधिक वेतन चाहना और अन्तमें निराश होना तो ठीक ही है पर बहुतसे योग्य और विद्वान् लोगोंको भी उस अवसर पर निराश ही होना पड़ा, पर सभी निराश होनेवालोंमें, पण्डित नियुक्त करनेवाले अधिकारीकी दृष्टिमें कोई न कोई दोष अवश्य था। पर वास्तवमे दोषी कोई नही ठहराया जा सकता। दोष केवल अयोग्यताका ही हो सकता है, और किसीका नहीं। निराश होनेवालोंने अवश्य ही प्रार्थनापत्र भेजनेके समय इस बातका ध्यान नहीं रक्खा था कि उन्हें सफल होनेका कहाँ तक अवसर मिल सकता है और वे प्रार्थनापत्र भेजनेके अतिरिक्त और कौन कौनसे उचित उपाय कर सकते हैं। साधारण अथवा थोड़ी योग्यतावालोंके लिये अकृतकार्य्य होना बहुत ही स्वाभाविक है; पर जो

वास्तवमें योग्य होता है उसकी सफलतामें किसी प्रकारका सन्देह नहीं रह जाता । योग्यता, सदाचार और अध्यवसाय मनुष्यको शिखर तक पहुँचा कर ही छोड़ते हैं । ऐसी दशामें जैसा कि ऊपर कहा गया है, दोष योग्यताके अभावका ही होता है, और किसीका नही । एक स्थानसे निराश होनेवाला मनुष्य किसी दूसरे स्थानपर और वहाँसे भी निराश होनेवाला तीसरे स्थानपर अपनी योग्यताके अनुसार काम पा ही लेगा ।

यदि विचारपूर्वक देखा जाय तो योग्य मनुष्योंके लिये पहलेकी अपेक्षा आजकल बहुत अधिक और अच्छा अवसर है । यह बात ठीक है कि पदोंकी संख्या उतनी शीघ्रतासे नही बढ़ती जितनी शीघ्रतासे पद-प्रार्थियोंकी सख्या बढती है, पर यह अवश्य है कि सब लोग योग्य मनुष्य चाहते है । अयोग्योको लेकर कोई करेगा ही क्या ? बात यह है कि दिन पर दिन बढ़नेवाले कामोके लिये अधिक बुद्धिमानोंकी आवकता होती है । लोगोंकी बुद्धि और योग्यता तो उतनी शीघ्रतासे बढ़ती नही, उसका मूल्य अवश्य बढता जाता है । आज कलकी स्थिति योग्य मनुष्योंके लिये बहुत अच्छी है । पर असल बात यह है कि अधिक वेतनकी नौकरियाँ बहुत थोड़े आदमियोकों मिलती है अधिकांश लोगोंको थोड़े वेतनपर ही काम करना पडता है । और अधिक वेतनका पद पानेके लिये अनेक प्रकारके प्रयत्न करने पड़ते है वह प्रयत्न करनेकी योग्यता जिनमे होती हे वही सफलता प्राप्त करते है और दूसरे लोग मुहँ देखते रह जाते है । तात्पर्य्य यह कि दिन पर दिन सफलता प्राप्त करनेके लिये, योग्यता सम्पादन करनेकी आवश्यकता बराबर बढ़ती जाती है और इसीका बढ़ना सबको अभीष्ट भी है । और आरामसे पड़े-पड़े जमानेकी शिकायत करनेकी अपेक्षा अपनी योग्यता बढ़ाकर काममे लग जाना ही अधिक उत्तम भी है ।

जो दशा नौकरीकी है, प्रायः वही दशा व्यापारकी भी है। बड़े बड़े कोठीवालों और थोक बेचने वालोंके कारण साधारण और छोटे मोटे दूकानदारोंको दो प्रकारसे हानियाँ सहनी पड़ती है। यदि साधारण मनुष्य पहलेसे ही दूकान करता हो तो उसे बड़े बड़े कोठीवालोंसे मुकाबला करनेमें बड़ी कठिनता होती है, और यदि वह नई दूकान खोलना चाहे तो उसे अपेक्षाकृत अधिक मूलधन लगाना पडता है। यदि मनुष्य केवल दाल रोटी और अपने गुजारेकी ही इच्छा रखता हो तो उसे व्यापारमें बहुत अधिक सिर खपानेकी आवश्यकता नहीं होती, थोडे परिश्रमसे ही उसका काम चल सकता है। पर यदि उसका उद्देश्य अधिक विस्तृत हो तो उसे दिन रात कठिन परिश्रम करना पड़ेगा। दूसरी बात यह है कि साधारण आदमियोको छोटे छोटे नगरोंमें ही अधिक उत्तम अवसर मिलते हैं। बड़े बड़े नगरोंमें उन लोगोंको भारी व्यापारियोंका मुकाबिला करना पड़ता है। दिन पर दिन अधिक मूलधन-की आवश्यकता बढ़ती जाती है। जिस शहरमें आजसे बीस बरस पहले एक हजार रुपयेमे कपड़ेकी अच्छी दूकान हो सकती थी वही आज दूकान खोलनेमें आठ दस हजार रुपये तककी जरूरत होती है। यदि कोई मनुष्य किसी प्रकारके व्यापारके लिये बहुत अधिक उपयुक्त हो, तो भी उसे मूलधनवाली कठिनता दूर करनेके लिये बहुत परिश्रम करना पडेगा। इससे यह बात प्रमाणित होती है कि कठिनता दिन पर दिन बढ़ती जाती है। यही कठिनता दूर करनेके लिये सहयोगसमिति (Co-operation Society) और लिमिटेड कम्पनी (Limited Company) आदिकी योजना की गई है। जो लोग अपनी मानसिक शक्तियोंद्वारा कोई बड़ा काम कर सकते हों, पर धनके अभावके कारण हाथ पर हाथ रक्खे बैठे हों वे सहजमें मूलधनवालोंकी सहायतासे अपनी योग्यता-का सदुपयोग करके अपना और अपने देशवासियोंका बहुत कुछ

उपकार कर सकते हैं । बात यह है कि प्रत्येक मनुष्यकी शक्ति विकसित होकर एक ऐसी सीमा तक पहुँच जाती है जहाँ कि उस मनुष्यके लिये अकेले कोई काम करना असम्भव हो जाता है और उसे दूसरेके सहारे और सहायताकी आवश्यकता पड़ती है । यह प्रथा सदासे चली आई है । सम्राट् चन्द्रगुप्त कुछ कम वीर नही था, पर बिना बुद्धिमान् चाणक्यकी सहायताके सम्राट् बननेमे वह कदापि समर्थ न होता ।

इस चढ़ाऊपरीके अतिरिक्त और भी कुछ कारण ऐसे हैं जिनसे सफलता प्राप्त करना दिनपर दिन और भी कठिन होता जाता है । संसारमें बहुतसे कार्य्योंकी इतनी अधिक उन्नति हो चुकी है कि अब उनसे और अधिक उन्नति करना प्रायः असम्भव सा हो गया है । पर यह बात उन्हीं देशोंके लिये है जो सभ्यता और उन्नतिकी चरम सीमा तक पहुँचे हुए हैं । भारतमें अभी प्रायः सभी बातोंमें उन्नतिके लिये बहुत बड़ा मैदान पड़ा हुआ है । सभ्य देशोंमें साहित्य और समाचारपत्रो आदिकी यथेष्ट उन्नति हो चुकी है ओर अब शीघ्र उसमें किसी विशेष परिवर्त्तनकी सम्भावना नहीं जान पड़ती । प्राचीन भारतीय ऋषि भी आध्यात्मिक विषयोका इतना मनन कर गये है कि अब उसमे और आगे बढ़ना असम्भव और निरर्थक ही है । व्रजभाषाके प्राचीन कवियोने भी शृंगार रसकी कविताओ और नायिकाभेद आदिको उसी सीमा तक पहुँचा दिया है । रामचरितमानस और सूरसागरसे बढ़कर भक्तिरसकी कविता तभी हो सकती है जब कि स्वयं तुलसीदास और सूरदास फिरसे जन्म लें । हाँ, नई नई बातों और प्रणालियोंका आविष्कार अवश्य किया जासकता है और उनमें उन्नतिकी भी बहुत जगह है । इस नवीनताके सम्बन्धमें कुछ विचार आगेके प्रकरणमें प्रकट किये गये है ।

विद्वानोंका मत है कि संसारने अब तक जितनी उन्नति की है, वह भविष्यमें होनेवाली उन्नतिके मुकाबलेमें कुछ भी नही है । बहुत

सम्भव है कि इस समय हम जिन बातोंको पूर्ण समझते हों उनमें आगे चल कर और भी अनेक बड़े बड़े परिवर्त्तन और परिवर्द्धन हो जायँ। जिस समय भापसे चलनेवाला इंजिन निकला था उस समय लोग यही समझते थे कि अब इस सम्बन्धमे आगे बढ़नेका स्थान नही रह गया। पर आज कल बिजली और मोटर हर जगह उसका मुकाबला करनेको तैयार हैं। बात यह है कि जब कोई अच्छी और बढ़िया चीज हाथ आ जाती है तो पुरानी निकम्मी चीजोंकी कदर घट जाती है। जिस मनुष्यने पहले पहल मामूली चिराग बनाया होगा उसकी बुद्धिमत्तामें किसी प्रकारका सन्देह नही किया जा सकता। सबसे बड़ी कठिनता पहले उसीने दूर की। उसके बाद लोग उसमें उन्नति करने लगे। आज कल यह उन्नति जिस सीमा तक पहुँच गई है उसका अनुमान केवल एक इसी बातसे किया जा सकता है कि बड़े बड़े लड़ाईके जहाजोंका अन्वेषक-प्रकाश (Search Light) तीस तीस और चालीस चालीस मील तक पहुँचता है और बीस मीलकी दूरीपर उसके प्रकाशमें महीनसे महीन टाइपोंवाली पुस्तक बहुत सरलतासे पढ़ी जा सकती है। इससे अधिक उन्नति करनेके लिये अवश्य ही बहुत अधिक विद्वत्ता, ज्ञान और अनुभवकी आवश्यकता है। यही दशा मामूली छकड़ा गाड़ियोंसे लेकर घंटेमें सत्तर या अस्सी मील तक चलनेवाले भापके इंजिनों और मोटर गाडियोंकी समझनी चाहिये। वास्तवमें बात यह है कि प्रत्येक कार्य्यमें कुछ न कुछ कठिनता अवश्य होती है और ज्यों ही वह कठिनता दूर कर दी जाती है त्यों ही लोग और आगे बढ़ानेका प्रयत्न करने लगते है। आगे बढ़नेके इस प्रयत्नमें नई और स्वतंत्र कठिनाइयोंका होना स्वाभाविक ही है, और वे कठिनाइयाँ पहलेसे बड़ी भी अवश्य ही होंगी। सृष्टिके आदिसे अब तक कठिनाइयाँ बराबर बढ़ती ही आई हैं और प्रलय काल तक बराबर बढ़ती ही जायँगी। एक झंझट या कठिनता दूर करनेके

लिये जो काम किया जाता है वह प्रकारान्तरसे अनेक झझटे और कठिनाइयाँ अवश्य उत्पन्न कर देता है और यह सिलसिला बराबर बढ़ता जाता है।

जिस दृष्टिसे हमने अब तक कठिनाइयोंका वर्णन किया है उससे यही सिद्ध होता है कि ससारके सब कामोंमे कठिनाइयाँ दिन पर दिन बढ़ती जाती है और उनका बढ़ना अनिवार्य्य भी है जगत् अनन्त कालसे है और उसमें मनुष्य अब तक बहुत अधिक उन्नति कर चुका है। ज्यों ज्यों लोगोंकी विद्या और बुद्धि बढती जाती है त्यो त्यों चढा-ऊपरी भी बराबर बढती जाती है। इसके सिवा जिस मनुष्यका उद्देश्य जितना अधिक उच्च होता है उसे उतनी ही अधिक विद्या, बुद्धि और अनुभव आदिकी आवश्यकता होती है। इस प्रकार वर्तमान कालकी कठिनाइयाँ भूतकालकी अपेक्षा कहीं बढ-चढ़कर है। और भविष्य कालमें होनेवाली कठिनाइयाँ वर्त्तमान कालकी कठिनाइयोंसे भी कहीं बढ़-चढ़कर होंगी। क्योकि जैसा ऊपर कहा गया है सभी समझदार इस विषयमें सहमत है कि ससारने अबतक जो उन्नति की है वह भविष्यमें होनेवाली उन्नतिके सामने तुच्छ है। ऐसी दशामे प्रत्येक मनुष्यके लिये उचित और आवश्यक है कि वह अपने आपको भविष्यमें होनेवाली कठिनाइयोंका मुकाबला करनेके लिये सदा तैयार रक्खे और इस प्रकारसे संसारकी उन्नतिमें सहायक बने।

पर इस चित्रका एक और अंग भी है जिस पर यदि विचार न किया जाय तो वह अपूर्ण रहता है। साथ ही उसके बिना मानवजीवनका कोई मूल्य भी नही रह जाता। केवल कठिनाइयाँ देख कर ही हमें किसी कार्य्यको असम्भव न समझ लेना चाहिये। मूल और उपयुक्त सिद्धान्त तो यह है कि प्रत्येक कार्य्यका मूल्य, महत्त्व अथवा यश उसकी कठिना-इयों, अड़चनों और झझटोंके ही कारण है। सफलता न तो पहले दाल

भातका कौर थी और न अब है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है, संसारकी बढ़ती हुई कठिनाइयोंके साथ ही साथ उन कठिनाइयोंको दूर करनेके साधन भी बराबर बढ़ते जाते है। जिन लोगोंने अबतक बहुत सी कठिनाइयाँ बढ़ाई हैं उन्होंने हमारे लिये अपना ज्ञान और अनुभव आदि भी संग्रह करके रख दिया है जिसके कारण हम बहुत सी पुरानी कठिनाइयोंसे अनायास ही बच सकते हैं। बहुतसे साधनोंद्वारा बड़े बड़े और कठिन काम करनेमें ही मानव जीवनका वास्तविक महत्त्व है। सुख और यश प्राप्त करनेके लिये इससे बढ़कर और कौन सी बात हो सकती है? जिनकी शारीरिक अथवा मानसिक शक्तियाँ किसी रोग या दोष-के कारण एकदम खराब हो गई हों, उनकी बात छोड़ दीजिये। दूसरे लोगोंके लिये कभी निराश, हतोत्साह या विफल-मनोरथ होनेका कभी कोई कारण नहीं हो सकता। मनुष्यका मुख्य काम कठिनाइयाँ दूर करना ही है। यदि समुद्र देखकर रामचन्द्र घबरा जाते तो वह सेतु बाँधने और लंका विजय करनेमें कब समर्थ हो सकते थे? और बिना इन कामोंके उनका यश ही क्या रह जाता? एक बार नेपोलियनसे किसी-ने कहा था कि फ्रांसीसी सेनाके आगे बढ़नेमें आल्प्स पर्वतके कारण ही रुकावट पडती है। उसने उत्तर दिया था—“ अच्छा, तो अब आल्प्स ही न रह जायगा।”

पाँचवाँ अध्याय।

उपयोगी परामर्श।

कर्म्मशीलता—अध्यवसाय—योग्यता—प्रसन्नता, शुद्धता और सात्त्विकता—धन—ससारकी आवश्यकता—कहावतें—हिसाब और बहीखाता—स्मरणशक्ति—सफलताके दो मूल मन्त्र-किसी एक विषयके पूर्ण पण्डित बनो—अपने लिए स्वतंत्र सिद्धान्त बनाओ और नवीनता उत्पन्न करो।

संसारमें दो प्रकारके मनुष्य हुआ करते हैं, एक तो विचारशील और दूसरे कर्म्मशील। इन दोनों श्रेणियोंके मनुष्योंकी संसारको बहुत बड़ी आवश्यकता है। दोनोंमेंसे किसी एकके बिना हमारा काम ही नहीं चल सकता। विचारशीलसे यहाँ हमारा तात्पर्य्य उन लोगों से है जो केवल आध्यात्मिक, प्राकृतिक, वैज्ञानिक, राजनीतिक, औद्योगिक, सामाजिक, साहित्यिक आदि विषयोंका अनुशीलन करते हों और कर्म्मशीलसे अभिप्राय उन लोगोंसे है जो किसी तरहका रोजगार या पेशा आदि करते हों। विचारशीलतामें यह एक विलक्षण गुण है कि जब वह एक निश्चित सीमासे आगे बढ़ निकलती है तब वह मनुष्यको धन अथवा दूसरे सांसारिक वैभवोंसे उदासीन करके परमार्थी अथवा परोपकारी बना देती है। कर्म्मशीलताका परिणाम इससे बिलकुल उलटा होता है। वह मनुष्यको उत्तरोत्तर धनका उपासक बनाती है और बहुतसे अंशोंमें उसे स्वार्थी बना देती है। यद्यपि संसारके अन्य भागोंके बड़े बड़े राजनीतिज्ञ और वैज्ञानिक आदि बहुत कुछ धन

और सम्पत्ति बना लेते हैं पर इससे हमारे सिद्धान्तका खंडन नहीं होता। विचारशील मनुष्य चाहे जितना धन संग्रह कर ले, पर उसकी योग्यता आदिका ध्यान रखते हुए आर्थिक दृष्टिसे उसकी सफलता, किसी कर्म्मशीलकी अपेक्षा बहुत ही कम, प्रायः नहीं के समान होती है। कोई ग्रन्थकार उतना अधिक धन नहीं कमा सकता जितना एक ग्रंथ-प्रकाशक कमा लेता है। यदि विचारक्षेत्रमे काम करनेवाला मनुष्य अपनी योग्यतासे बहुत अधिक धनवान् बन जाय तो समझना होगा कि उसमे विचारशीलताकी अपेक्षा कर्म्मशीलता ही अधिक है। ऐसी दशामें जो लोग धनवान् बनना चाहते हों, उन्हें परमार्थकी अपेक्षा स्वार्थका ही अधिक ध्यान रखना होगा। ऐसे मनुष्योंमें यदि विचार-शीलता भी हो तो सोने और सुगन्धवाली कहावत चरितार्थ होगी।

संसारमें बहुत अधिक संख्या ऐसे ही लोगोंकी है जिनका प्रधान लक्ष्य धन ही होता है। ऐसे लोग यदि नौकरी करना चाहते हों, तो उन्हें विद्यालयोमें शिक्षा प्राप्त करनेकी आवश्यकता होती है; पर यदि वे व्यापार-की ओर प्रवृत्त हों तो उन्हें शिक्षाकी उतनी अधिक परवा नहीं होती। हमारे कहनेका यह तात्पर्य नहीं है कि व्यापारियोंके लिये शिक्षा एकदम अनावश्यक और निरर्थक है। मतलब सिर्फ यही है कि वे बिना कुछ पढ़े-लिखे ही बहुतसे पढ़े लिखोंकी अपेक्षा बहुत अधिक धनवान् हो जाते हैं। एन्ट्रेन्स-पास आदमियोंको तो केवल १५–२० रु० महीनेकी नौकरी ही मिलेगी पर दस्तखत तक न कर सकनेवाला बनिया हजारों रुपयेकी जायदाद बना लेगा। बहुतसे भारतीय अनुभवी वृद्धोंका तो यह दृढ़ विश्वास है कि आज कलके लड़के पढ़लिखकर बाबू तो बन जाते हैं पर रोजगारके कामके वे नहीं रह जाते और उनका यह विश्वास बहुतसे अंशोंमें ठीक भी है। भारतवर्षमें किसी बनिये या बजाजका लड़का पढ़ लिखकर नौकरी ही ढूँढ़ेगा; दूकानपर बैठकर हाथमें तराजू या गज लेने लायक वह नही रह जायगा। इसमें सन्देह नहीं कि यदि वह

शिक्षित होकर अपने व्यापारमे लगे तो अच्छी सफलता प्राप्त कर लेगा, पर कठिनता तो यह है कि उससे व्यापार होगा ही नही। इसमें दोष केवल वर्त्तमान शिक्षा-प्रणालीका है, जिसका प्रभाव समस्त जगत पर कुछ न कुछ पड़ रहा है। आज कलकी शिक्षामें मनुष्यको कर्म्मशील बनानेकी शक्ति बहुत ही कम है। भिन्न भिन्न विषयोंकी शिक्षापर तो आज कल बहुत जोर दिया जाता है, पर मानसिक शक्तियोकी वृद्धि और विकास करनेवाले विषयोंकी ओर कुछ भी ध्यान नही दिया जाता। यही कारण है कि बहुतसे पढे लिखे लोग मुँह ताकते रह जाते हैं और अशिक्षित अपने काममें पूरे होशियार होकर अच्छी सफलता प्राप्त कर लेते है। बहुतसे लोगोको यह जान कर आश्चर्य्य होगा कि हालमें आस्ट्रेलियामें एक स्थानपर संयोगसे चार गडरिये एकत्र हुए थे। उन चारोंमेसे एक तो आक्सफोर्ड विश्वविद्यालयका, दूसरा कैम्ब्रिज विश्ववि-द्यालयका और तीसरा एक जर्म्मन विश्वविद्यालयका ग्रैजुएट था। पर चौथा गड़रिया एकदम अशिक्षित था, तथापि उस अशिक्षित गड़रियेने अपने बाहुबलसे बहुत अधिक भेड़े और बकरियाँ आदि एकत्र की थीं और इस प्रकार वह बहुत धनवान् बन गया था। पर तीनों ग्रैजुएट कोरे ग्रैजुएट ही रह गये थे। अन्तमे उस अशिक्षित गड़रियेने तीनो ग्रैजुएट गड़रियोंको अपने यहाँ नौकर रख लिया। इसमें सन्देह नही कि यदि तीनों शिक्षित गड़-रियोंने अपने काम पर पूरा पूरा ध्यान दिया होता तो वे भी उस अशि-क्षित गड़रियेकी भाँति सम्पन्न हो जाते। पर नही, उनमें कर्म्मशीलताका अभाव था और इसी लिये वे सफलता नही प्राप्त कर सके थे। बात यह है कि प्रत्येक कार्य्यमें सफलता प्राप्त करनेके लिये दूरद-दर्शिता, बुद्धिमत्ता, कार्य्यपटुता आदिकी आवश्यकता होती है।

यद्यपि इन गुणोंकी प्राप्ति प्रायः अनुभवसे ही होती है तथापि बालकों-को आरम्भसे ही ऐसी शिक्षा देना ठीक नही जो उनका अमूल्य समय नष्ट करनेके अतिरिक्त उनके मार्गमे कठिनाईयाँ भी उत्पन्न करे।

यदि समान योग्यता, स्थिति और अवस्थाके दो मनुष्य अलग अलग एक ही प्रकारका व्यापार करें तो उनमेंसे अधिक सफलता उसीको होगी जो सदा इस बातका ध्यान रक्खेगा कि इस व्यापारसे मेरा प्रधान उद्देश्य द्रव्य प्राप्त करना है। ऐसे मनुष्यको स्वार्थी बनना पड़ेगा। उसकी इस स्वार्थपरताको भ्रमसे लोग चाहे कितना ही बुरा क्यों न समझे, पर जब तक वह ईमानदारी और सच्चाईके साथ अपने स्वार्थका ध्यान रक्खेगा, तब तक उसमें कोई वास्तविक बुराई नही आ सकती। यदि किसी दूकानदारके पास कुछ पुराना और महँगा खरीदा हुआ माल हो और वह अपने यहाँ आनेवाले सब ग्राहकोंको किसी ऐसे पड़ोसीकी दूकानपर भेजता जाय जिसके यहाँ नया और सस्ता माल हो तो भला पहले दूकानदारको आर्थिक दृष्टिसे क्या लाभ होगा? या तो उसे स्वार्थी बनना पड़ेगा, या हानि सहकर पुराना माल बेचना और नया खरीदना पड़ेगा और या अपनी दूकान बन्द करनी पड़ेगी।

यदि किसी दूकानदारको दोचार दूसरे दूकानदारोंके मुकाबलेमें अपनी दूकान चलानेकी आवश्यकता पड़ी तो उसे अपने व्यर्थके खर्च कम करने पड़ेंगे। दो चार ऐसे नौकरोको निकालना पड़ेगा जिन्हें वह पहले प्राय. पालन-पोषणके विचारसे ही अपने यहाँ रक्खे हुए था। संसारके और कामोंमें स्वार्थत्यागकी भले ही बहुत बड़ी आवश्यकता हो, पर व्यापारिक दृष्टिसे वह बड़ा ही घातक होगा। अपनी जाति और देशके लिए स्वार्थ-त्याग करो, पर व्यापारमें जबतक आगे चलकर भारी लाभ-की सम्भावना न हो, कभी अपने स्वार्थका ध्यान न छोड़ो। साथ ही यह बात भी ध्यान रखने योग्य है कि बेईमानीसे आपना लाभ करना अपना सर्वस्व नष्ट करनेसे भी बढ़कर बुरा और निन्दनीय है।

\+ \+ \+ \+ \+

कर्मशीलताका एक और अंग है जिसके बिना मनुष्यका सफल-मनोरथ होना बहुत ही दुष्कर है। वह अंग है किसी कामको आरम्भ

करके, बराबर जारी रखना और अन्तमें पूरा करके छोडना। इसके लिये विचारशीलताकी भी बहुत आवश्यकता होती है। ऐसे अकर्म्मण्य और निकम्मे नौकर प्राय: सभी जगह निकलेगे जिन्हें यदि कोई नया और कठिन काम करनेके लिये कहा जाय तो वे बीसियो तरहके बहाने करेंगे, किसी दूसरे मनुष्य या समय पर वह काम टालना चाहेंगे, उसकी उपयोगिता और आवश्यकता आदिके सम्बन्धमें तर्क वितर्क करेंगे और किसी न किसी प्रकार अपना पिंड छुड़ानेका प्रयत्न करेंगे। ऐसे लोगोकी न तो कहीं बहुत अधिक आवश्यकता ही होती है और न उन्हें उन्नति करनेका विशेष अवसर ही मिल सकता है। ऐसे लोग यदि विफलमनोरथ होने और अपने दीनावस्थामें पडे रहनेकी शिकायत करें तो उनकी यह शिकायत कोई समझदार नही सुन सकता। उनके रोगकी चिकित्सा स्वयं उन्हीके पास होती है। ऐसे लोगोंके लिये अधिक उत्तम यही है कि वे व्यर्थका रोना छोड़कर अपने आपको काम करनेके योग्य बनावें और तब देखें कि संसार उनका कैसा आदर करता है।

जिस समय अमेरिकाके सयुक्त राज्यों और स्पेनमें युद्ध छिड़ा था उस समय एक प्रबल दलके नेता जेनरल ग्रेशियाकी सहायताकी आवश्यकता, सयुक्त राज्योंके राष्ट्रपति मैकिनलेको पड़ी थी। पर ग्रेशियाका ठीक ठीक पता किसीको मालूम नही था। लोग केवल इतना ही जानते थे कि वह क्यूबा द्वीपकी किसी दुर्गम पहाड़ी पर रहता है। ग्रेशियाक पास न तो रेल जा सकती थी और न तार। राष्ट्रपति बहुत चिन्तित थे। उनसे किसीने कहा कि रोवन नामक एक व्यक्ति ऐसा है जो ग्रेशियाका पता लगाकर आपका पत्र उस तक पहुँचा सकता है। रोवन बुलाया गया और उसे ग्रेशियाके नामका पत्र दिया गया। वह पत्र लेकर एक नाव पर सवार हुआ और चार दिन बाद क्यूबा द्वीपमें जा पहुँचा। वहाँ पहुँचते ही वह एक घने जंगलमें गायब हो गया और तीन सप्ताह बाद

जंगलमेंसे द्वीपके दूसरे किनारेकी ओर अपना काम करके निकला। किस प्रकार उसने शत्रुके देशमें जाकर अपना काम पूरा किया, यह बतलानेकी यहाँ आवश्यता नहीं। यहाँ केवल यही कह, देना यथेष्ट है कि उसने पत्र हाथमें लेकर यह भी न पूछा कि 'ग्रेशियाका पता क्या है?' अथवा 'वह कहाँ रहता है?' इसे मनुष्यकी योग्यताकी चरम सीमा ही समझना चाहिये। संसारमें ऐसे लोगोंकी बहुत अधिक आवश्यकता है जो 'ग्रेशिया तक खबर पहुँचा सकें।' ऐसे लोगोंकी सफलतामें कभी किसी प्रकारका सन्देह नही हो सकता। संसार ऐसे लोगोंके लिये है जो कुछ काम कर सकते हों—जो ग्रेशिया तक खबर पहुँचा सकते हों। जो लोग ग्रेशियाके नामका पत्र पाकर मालिकसे तुरन्त कह बैठें—'यह काम आप खुद कीजिये या दूसरोंसे कराइये।' तो उन्हें लेकर कोई करेगा ही क्या।

* * * *

सिफारिश दबाव या मेलजोलके कारण सम्भव है कि कभी किसी मनुष्यको कोई अच्छा पद मिल जाय, पर उस पद पर स्थिर रखनेमें एकमात्र उसकी योग्यता ही समर्थ हो सकती है। सिफारिश आदिसे यदि बहुत हुआ तो मनुष्यको अच्छे अवसर मिल जायँगे पर उस मनुष्यकी योग्यता परिवर्द्धित और परिवर्त्तित करनेमें वह सिफारिश किसी प्रकारकी सहायता नहीं कर सकती। यदि कोई अयोग्य मनुष्य सिफारिशसे किसी ऊँचे पद पर पहुँच जाय तो वह बुरी तरह कामोंको नष्ट करने लगेगा और शीघ्र ही उसे पद-त्याग करना पड़ेगा। सन् १८७० वाले फ्रास-जर्म्मनी युद्धमें फ्रांसकी सेनामें जितने उच्च अधि-कारी थे उनमेंसे बहुतसे प्राय: अयोग्य ही थे और केवल अपने सम्राट् तृतीय नेपोलियनकी खुशामद करके उसकी कृपा मात्रसे ही उच्च पदोंपर पहुँचे थे। उस युद्धमें ऐसे अधिकारियोंने अपने देशको जो भारी हानि

पहुँचाई और उसकी कीर्त्ति पर जो कलंक लगाया वह फ्रांसवासी बहुत दिनों तक न भूल सकेंगे और न शीघ्र ही उसका परिहार करनेमें समर्थ होंगे। लोग कहते है–" काम आदमीको खुद सिखला देता है।" अर्थात् यदि मनुष्यको उसकी योग्यताके बाहर कोई बडा काम दिया जाय तो धीरे धीरे वह काम उसे स्वयं आजायगा। यह बात है तो बहुत ठीक, पर इसका एक अंग हीन है। किसी कामको करते करते सीखनेमें ही कुछ विशेष योग्यताकी आवश्यकता होती है, और यदि उस योग्यताका मनुष्यमें अभाव हुआ तो 'काम' उसे कुछ भी न सिखला सकेगा। सिफारिश आदिसे अथवा ऊँचे पदोंपर पहुँचनेसे अयोग्य मनुष्यको किसी प्रकारका लाभ नहीं हो सकता। हाँ, एक योग्य व्यक्तिको उससे बहुत अच्छी सहायता मिल सकती है। जिस मनुष्यका और लोगों पर अच्छा प्रभाव पडता है उसे साधारण लोगोंकी अपेक्षा उन्नति करनेका बहुत अधिक अवसर मिलता है। पर जो मनुष्य दूसरो पर प्रभाव न डाल सकता हो वह भी अपनी योग्यतासे अवश्य ही सफलता प्राप्त कर लेता है। ऐसे लोगोंके लिये सबसे अधिक कामकी सलाह यह है कि वे अपने कामोंसे समय निकाल कर अपनेसे ऊँचे पदवालोंके काम भी सीखते चलें। साधारणत: नौकरी करनेवाले लोग अपना काम अच्छी तरह करते चलते हैं और तरक्कीका आसरा देखते रहते है। वे समझते हैं कि जब तरक्की होगी तब बड़े बड़े काम हम स्वय ही सीख लेंगे। यह सिद्धान्त ठीक नहीं है। यदि किसी दफ्तरमे कभी कोई ऊँचा पद खाली हुआ तो उसके लिये दफ्तरमेंसे पहले वही आदमी ढूँढ़ा जायगा जो उस पदका थोड़ा बहुत काम जानता हो। इस लिये पहलेसे ही उसका ज्ञान प्राप्त कर लेनेसे बहुत काम निकलता है। इसके लिये थोड़ीसी बुद्धिमत्ताकी आवश्यकता होती है। प्रायः दफ्तरोंके सभी काम एक दूसरेसे इतने सम्बद्ध होते हैं कि साधारण योग्यतावाला मनुष्य उन सबको दूरसे देखते ही भली

भाँति समझ और सीख सकता है। यदि अपने कामसे समय निकाल-कर कभी कभी तुम अपने अफसरको भी उसके काममें सहायता दे दो तो तुम्हारी सफलताका मार्ग बहुत कुछ प्रशस्त हो जायगा। यह सिद्धान्त तो केवल नौकरी पेशेवालोंके लिये हुआ। जो लोग शिल्पकार और हाथके कारीगर हों उनको भी सदा उत्तरोत्तर अपनी योग्यता बढ़ाते रहना चाहिये। योग्यता बढ़ानेका सबसे अच्छा उपाय यह है कि हम जो काम करते हों उसमे हमारा सदा यह सिद्धान्त रहना चाहिये कि हरएक बारका किया हुआ काम पहलेके किये हुए कामोंकी अपेक्षा अधिक उत्तम और निर्दोष हो। एक बार जो माल या सामान तैयार किया जाय, दूसरी बारका तैयार किया हुआ माल या सामान, खूबसूरती, मजबूती और सफाईमे उससे बढ़कर हो और तीसरी बारका उससे भी बढ़िया हो। इस प्रकार बिना दूसरोंकी विशेष सहायताके ही वह कारीगर दिन पर दिन उन्नति करता जायगा और थोड़े ही दिनोंमें अपने काममें अच्छा दक्ष और चतुर हो जायगा। यह सिद्धान्त किसी न किसी रूपमें सब प्रकारके सासारिक कार्योंमें भलीभाँति प्रयुक्त हो सकता है और इससे सफलताप्राप्तिमें बहुत अच्छी सहायता मिल सकती है।

*　　*　　*　　*　　*

प्रत्येक मनुष्यको सदा स्वय प्रसन्नचित्त रहना चाहिये और यदि हो सके तो उचित और प्रशंसनीय उपायोंसे दूसरोंको भी प्रसन्न रखना चाहिये। कुछ लोगोंका स्वभाव ही ऐसा मुहर्रमी और मनहूस होता है कि दूसरों-को हँसते देखकर उन्हें असह्य वेदना होती है। ऐसे लोग सदा दुखी रहते है और कभी उन्नति नही कर सकते। न तो वे किसीसे मिलना जुलना ही पसन्द करते हैं और न उनके साथ किसीकी सहानुभूति होती है। जो मनुष्य प्रसन्न चित्त रहता है वह भारी विपत्तिके समय भी दूसरों-को निराश और दुःखित नही होने देता और किसी न किसी प्रकारसे उन्हें ढारस बँधाकर उनका सहायक होता है।

सदा झूठी और दिखौआ तड़क भड़कसे दूर रहो और दूसरोंकी दिखावट आदि पर कभी विश्वास न करो । न तो बढ़िया कपड़े देखकर किसी मनुष्यको परम योग्य समझ लो और न किसीको चीथड़े लपेटे देखकर तुच्छ मानो । कपड़े तो केवल शरीर ढकनेके लिये है, मनुष्यकी वास्तविक योग्यतासे उनका कोई सम्बन्ध नहीं है । पर आजकल लोग दूसरोंके कपड़े पहले देखते हैं और आचरण पीछे । जिस मनुष्यमें योग्यता होगी वह जब जैसा अवसर देखेगा तब वैसे कपडे पहन लेगा ।

जहाँ तक हो सके, गम्भीरतापूर्वक औरोंकी बातें सुनते रहो और उपयुक्त अवसर देख कर थोड़े शब्दोंमें और युक्तिपूर्वक अपनी सम्मति प्रकट करो । जिस समय और लोग बुद्धिमत्ता या कामकी बातें करते हों, उस समय चुपचाप सुनते रहना ही बहुत अच्छा है । हाँ, यदि किसीको अनुचितपथ पर जाते देखो तो उसे तुरन्त सचेत कर दो । कभी किसीको बिना समझे बूझे झूठा बेईमान या खुशामदी न कहो । यदि दूसरेको अनुचित बाते कहते हुए सुनो तो उसे तुरन्त रोक दो । एक विद्वान् कहता है—" बातचीत करनेमें असमर्थ होना अथवा दूसरोंको बोलनेसे रोकनेके अयोग्य होना भी बड़ा भारी दुर्भाग्य है । " अपना अभिप्राय स्पष्ट रूपसे दूसरोको समझा देना, अपनी उचित सम्मति और उक्तिको पुष्ट करना, बातोको सिलसिलेवार कहना, ठीक ठीक परिणाम निकालना आदि ऐसे उत्तम गुण है जिनकी आवश्यकता ससारके प्रायः सभी कामोंमें पड़ती है । मधुरभाषी होना मानों अपने मार्गकी आधी कठिनाइयाँ दूर करना है । खिजलाने, डाँटने-डपटने और बिगड़नेसे कभी वैसा अच्छा काम नही निकल सकता जैसा शान्ति और गम्भीरतापूर्वक समझानेसे निकलता है । यदि कोई मनुष्य अनजानसे और किसी प्रकार तुम्हारा अपमान कर बैठे तो तुरन्त आपेसे बाहर मत हो जाओ । एक शिक्षकने अपने विद्यार्थियोंको शिक्षा देनेके समय

कहा था--"हमेशा दो जेब रक्खो, एक तो बहुत बड़ा, अपमान आदिके सहनेके लिये और दूसरा छोटा, रुपये रखनेके लिये।" सम्भव है कि इस कथनमें कुछ अत्युक्ति हो पर इसमें सन्देह नही कि जीवनमें अधिकाश अवसर ऐसे ही आते है जिनमें सहनशीलतासे ही सबसे अधिक काम निकलता है, उद्दण्डता या रूखेपनसे तो काम प्रायः बिगड़ता ही है। साथ ही यह बात भी कोई बुद्धिमान् अस्वीकार नही कर सकता कि सांसारिक व्यवहारोंमें कभी कभी ऐसे अवसर भी आ पड़ते हैं जब कि उचित रीतिसे अपना काम निकालने या किसी अन्यायको रोकनेके लिये मनुष्यको उग्र रूप धारण करना पड़ता है। पर ऐसे अवसर बहुत ही कम होते हैं; उनके उपस्थित होने पर समझदार आदमी वैसा ही बन भी जाता है। यदि वह ऐसा न करे तो लोग उसे दब्बू, अकर्म्मण्य या दुर्बल समझ लेते है और समय पड़ने पर उसे भारी हानि पहुँचाते है।

* * * * *

इसमें सन्देह नही कि "रुपयेको रुपया खींचता है।" धनवान् मनुष्य अपने धनकी सहायतासे बड़ा व्यापार या और कोई काम करके बहुत शीघ्र अच्छा लाभ कर सकता है। पर उतनी ही योग्यता रखनेवाले निर्धन मनुष्यको धनके अभावके कारण ही बहुतसी कठिनाइयाँ झेलनी पड़ती है और बहुधा विफल-मनोरथ भी होना पड़ता है। अतः मनुष्यको सदा मितव्ययी रहना चाहिये और जहाँतक हो सके सदा अपने पास कुछ न कुछ पूँजी रखनी चाहिये। यही पूँजी अच्छा अवसर मिलने पर हमारा बहुत कुछ आर्थिक लाभ करा सकती है, आवश्यकता पड़ने पर हमें परोपकारी और उदार बनाती है, बीमारी आदिके समय हमारी चिन्ता और कष्ट दूर करनेमें सहायक होती है, शादी और गमीके मौकों पर हमारी इज्जत रखती है और जब उसे

कोई काम नहीं रहता तो वह हमें साहसी स्वतन्त्र और निश्चिन्त बनाये रहती है।

* * * * *

ऐसी योग्यता उपार्जित करो जो सबके काम आसके और उसके बदलेमें तुम्हें अच्छा आर्थिक लाभ भी हो सके। पवित्र आचरणसे ही आटा और चावल नहीं खरीदा जा सकता और न मकानका किराया ही चुकाया जा सकता है। इन कामोंके लिये भी परिश्रम और धनकी ही आवश्यकता होती है। यदि मनुष्य परिश्रमी और ईमानदार हो, पर वह अपनी योग्यताको संसारके कामोंमें न लगा सकता हो तो वह जीविका उपार्जित नहीं कर सकता। मनुष्य चाहे कितना ही धार्म्मिक और पवित्र आचरणवाला क्यो न हो, पर जब तक वह संसारके काम न आवे तब तक उसे लौकिक पदार्थोंके पानेकी बहुत ही थोड़ी आशा रखनी चाहिये। यदि हम कोई ऐसा काम करें जिससे संसारके लाभकी कोई आशा न हो तो हमें उसके बदलेमें अपने लाभकी भी कोई आशा न रखनी चाहिये। ससारकी आवश्यकताओंका ध्यान रख कर ही हमे काम करना चाहिये। यदि सर्वसाधारणको मागधी और शौरसेनी भाषाओंके व्याकरणोंकी अपेक्षा मनोहर और शिक्षाप्रद निबन्धोंकी आवश्यकता अधिक हो तो सफलता भी निबन्ध लिखने-वालोंको ही अधिक होगी, वैय्याकरण महाशय मुँह ही ताकते रह जायँगे।

केवल एक ही प्रकारकी योग्यतासे भी संसारका सारा काम कभी नहीं चल सकता। कदाचित् पाठक जानते होगे कि एक बार एक दिग्गज दार्शनिक नाव पर सवार होकर नदी पार करने लगे। रास्तेमे उन्होंने मल्लाहसे पूछा—"क्यों भाई! तुमने कुछ दर्शनशास्त्र भी देखा है?" उत्तर मिला—"नहीं।" दार्शनिक महाशय बोले—"तब तो तुमने अपना

आधा जीवन व्यर्थ नष्ट किया ।" थोड़ी देर बाद जब तूफान आया और नाव डूबनेको हुई तो मल्लाहने पूछा—"क्यों साहब ! आप तैरना भी जानते हैं ?" उत्तर मिला—"नहीं।" मल्लाहने कहा—"तब तो आपने अपना सारा जीवन व्यर्थ नष्ट किया।" दार्शनिक महाशय दर्शनशास्त्रके गूढ़से गूढ़ विषयोंको तो भलीभाँति समझ लेते थे, पर नाव डूबने पर अपने प्राण बचानेकी सामर्थ्य उनमें नहीं थी । मल्लाह यह भी नहीं जानता था कि दर्शनशास्त्र किस चिड़ियाका नाम है; पर वह तैरना भली भाँति जानता था; इस लिये जान बचाकर किनारेतक पहुँच गया। योग्य मनुष्यको सफलता न होनेके कारण कुछ कुछ इसी प्रकारके होते है। केवल विद्या पढ़-कर ही मनुष्यमें द्रव्य उपार्जन करनेकी शक्ति नहीं आ सकती । गाड़ी हाँकने भरसे ही नाव खेना नहीं आ सकता; दोनोंके लिये भिन्न भिन्न शिक्षाओंकी आवश्यकता होती है । तो भी इतना अवश्य मानना पड़ेगा कि कुछ लोग ऐसे होते हैं जिनमें यद्यपि सब प्रकारकी पूरी पूरी योग्यता होती है पर तो भी वे कभी यशस्वी नहीं हो सकते । इसी प्रकार कुछ लोग ऐसे भी होते है जिनमें किसी प्रकारकी योग्यता नहीं होती; पर तो भी वे अपने सब काम बड़ी सरलता और सुन्दरतासे सुधारते जाते है । पर जैसा कि पहले कहा जा चुका है, ऐसे मनुष्य बहुत ही कम होते हैं और सब लोगोंको अनायास ही अपनेआपको उनमें न समझ लेना चाहिये । जिन दोषों या गुणोंके कारण ये बातें होती हैं उनका पता लगाना मानवशक्तिसे बाहर है ।

* * * *

संसारमें अनेक प्रकारकी कहावतें नित्यप्रति सुननेमें आती हैं। ये कहावतें प्रायः एक दूसरेके विरुद्ध भी हुआ करती हैं । जैसे—"ओस चाटनेसे कहीं प्यास जाती है?" और—"डूबतेको तिनकेका सहारा

बहुत होता है।" इन दोनोंमेंसे यदि किसी एकको ठीक मान लें तो दूसरीका अनायास ही खंडन हो जाता है। एक विद्वान् कहावतोंको बड़े बड़े अनुभवोंका निचोड बतलाता है और दूसरा कहता है–"कहावतोंपर कभी विश्वास न करो, सारी कहावतें लोगोंने अपनी अपनी समझके मुताबिक, अपने अवसरपर और अपने मतलबके लिये बनाई हैं।"

बात यह है कि सभी चीजे, अच्छी और बुरी दोनों प्रकारकी होती हैं। अतः मनुष्यको कहावतोंके मूलसिद्धान्तकी उपयोगिताका विचार कर लेना चाहिये। ऐसा करनेसे उनमेंसे उपदेशपूर्ण कहावते अलग निकल आवेंगी और निरर्थक या हानिकारक कहावतें अलग छँट जायँगी। "जिसकी लाठी उसकी भैस" वाली कहावतमें कहाँ तक यथार्थता है यह विचारवान् पाठक स्वयं समझ सकते हैं। पर कभी न कभी वह भी चरितार्थ हो ही जाती है। अँगरेजीकी एक कहावतका अभिप्राय है–"तुम पैसोंका ध्यान रक्खो, रुपये अपना ध्यान आप ही रख लेंगे।" अर्थात जो मनुष्य व्यर्थ पैसे खर्च नही करता उसके पास रुपये आपसे आप जमा हो जाते हैं। पर आजकल जब कि संसारका धन दिनपर दिन बढ़ता जाता है, एक एक पैसेके लिये जान देना बड़ी भारी मूर्खता समझी जाती है। उचित व्यय करनेसे जितना लाभ हो सकता है उसे रोकनेसे अपेक्षाकृत कही अधिक हानि होती है।

इस अवसरपर हम अनेक प्रकारकी उत्तमोत्तम कहावतोंका उपदेशपूर्ण सार भाग अपने पाठकोंके लाभके लिये दे देना आवश्यक समझते है। इन्हें अपना सिद्धान्त बना लेनेसे बहुधा लाभ ही होगा।

अपने कार्य्यके सब अंगोंपर पूरा पूरा ध्यान रक्खो।

अपना सम्मान चाहनेवालोको दूसरोंका अपमान न करना चाहिये।

जो काम प्रेमसे निकल सकता है वह भय या दण्डसे नहीं निकल सकता ।

दण्डकी चोटसे क्षमाकी चोट अधिक कड़ी होती है ।

आवश्यकता पूरी हो सकती है, इच्छा नहीं, यही ईश्वरीय नियम है ।

विश्राम करनेकी अपेक्षा काम करना कहीं अच्छा है ।

अपना कार्य्य उत्तमतापूर्वक करो, सारा संसार तुम्हारा आदर करेगा

सत्यका आश्रय ही मनुष्यको विजयी बनाता है ।

भला आदमी ही सदा प्रसन्न रह सकता है; कलुषित हृदयवाला नहीं।

पहले खूब सोच विचार लो, और तब जो निश्चय करो उसपर सदा अटल रहो ।

सदा उचित कार्य्य करनेका साहस करो और अनुचित कार्य्योंसे डरो ।

विपत्तियोंको धैर्य्यपूर्वक झेलो, उनसे घबराना मानों अपने कामको स्वयं नष्ट करना है ।

बहादुर और मर्द बनकर सब काम करो ।

बुरे आदमियोंका कभी साथ मत करो ।

सदा अपने आचरण और विचारोंको शुद्ध रक्खो ।

दूसरोंकी प्रतिष्ठा, विश्वास या व्यापार आदिको कभी हानि पहुँचानेकी चेष्टा मत करो ।

केवल सद्गुणी मनुष्योंका साथ करो । नीचे, ओछे और कुकर्म्मी मनुष्योंसे सदा दूर रहो ।

हृदयमें बुरे विचार कभी न आने दो ।

कभी किसी दशामें झूठ न बोलो ।

बहुत थोड़े आदमियोंसे अधिक जान पहचान रक्खो ।

कभी अपने आपको वैसा प्रकट करनेका प्रयत्न न करो, जैसे कि तुम वास्तवमें नहीं हो ।

अच्छी आदतें सीखो और सदा उनपर ध्यान रक्खो।

अपना ऋण ठीक समयपर चुका दो; फिर तुम्हें कभी ऋण लेनेमें कठिनता न होगी।

मित्रकी सत्यतामें कभी सन्देह न करो और न अकारण कभी उसका अविश्वास करो।

माता पिता या बड़ोंकी सम्मतिका पूरापूरा और उचित आदर करो।

अपना सिद्धान्त बनाये रखनेके लिये आवश्यकता पड़नेपर आर्थिक हानि भी सह लो।

सब प्रकारके नशोंसे सदा दूर रहो।

फुरसतके समय अपनी उन्नतिके उपाय सोचो और करो।

सबका प्रेमपूर्वक अभिनन्दन करो।

अपना उत्साह भग न होने दो।

न्याय-संगत, सत्य और शुद्ध कार्य्यके लिये दृढतापूर्वक परिश्रम करो, अवश्य सफलता होगी।

सब काम ठीक तरहसे करो, किसीमें कोई कसर बाकी न रहने दो।

जो काम मिले उसे अपनी सारी शक्ति भर करो और तुरन्त करो।

कोई मनुष्य वास्तवमें उतना सुखी वा दुखी नही होता जितना कि वह अपने आपको समझता है अथवा जितना लोग उसे बतलाते है।

संसार जैसा है, तुम भी वैसे ही बन जाओ। क्योंकि तुम जैसा चाहते हो, वैसा ससार कभी नही बन सकता।

किसीको अपना शत्रु मत बनाओ, एक शत्रु सौ मित्रोंके रहते हुए तुम्हारा बहुत कुछ अपकार कर सकता है।

अगर तुम अच्छे बनना चाहते हो तो अपने आपको सबसे बुरा समझो।

बहुत बोलनेकी अपेक्षा बहुत सुनना कही अच्छा है।

दरिद्रता यदि दोषोंकी माता है तो अज्ञान उनका पिता है ।

दुःख और विपत्ति आदिसे कभी घबराना न चाहिये, क्योंकि उसका भी कभी न कभी अन्त होता ही है ।

मित्रको अपना बनाये रखनेके लिये और शत्रुको अपना बनालेनेके लिये सदा उसके साथ भलाई करो ।

तुम्हारा विचार तभी तक तुम्हारा है जब तक तुम उसे दूसरोंपर प्रकट न करो ।

दूसरोंको धमकाना अपनी कायरता प्रकट करना है ।

यदि तुम कुछ करना चाहते हो तो कमर कसकर काममें लग जाओ।

सदा सच्चे परोपकारी और ईश्वरनिष्ठ रहो । कोरी बातें करनेमें ही सारा समय न बिताओ, कुछ काम भी कर दिखलाओ ।

अपना अज्ञान समझ लेना ही ज्ञानकी ओर बढ़ना है ।

आगे चलकर होनेवाली आमदनीके भरोसेपर कभी पहलेसे उधार मत लो ।

विजयी वही होते हैं जिन्हें अपनी शक्तिपर विश्वास होता है ।

अप्रसन्न वही रहता है जिससे कोई अपराध या दूसरा अनुचित कार्य्य होता है ।

कठिनाइयोंका बढ़ना ही सफलताके समीप पहुँचनेका प्रधान चिह्न है।

संसारका ऊँचनीच देखना ही जीवनका प्रधान कार्य्य है ।

जो कुछ माँगना है, ईश्वरसे माँगो ।

संसारकी सब चीजें दोरुखी होती है, इसलिये दोनों ओर विचार करना चाहिये ।

किसीको उचित मार्गपर लानेके लिये उसकी निन्दा करनेकी अपेक्षा उसके भले कामोंकी प्रशंसा करना कहीं अच्छा और उपयोगी है ।

कामकी अधिकतासे उकतानेवाला मनुष्य कभी कोई बड़ा काम नहीं कर सकता ।

सफलता और उसकी साधनाके उपाय।

संसारकी सब बातोंसे कुछ न कुछ शिक्षा ग्रहण करो।

अपने व्ययको आयसे सदा काम रक्खो, सुखी और सम्पन्न होनेका यही सबसे अच्छा उपाय है।

अपने मित्रोंके साथ कभी व्यर्थ वाद न करो।

जो मनुष्य सबको प्रसन्न रखनेका प्रयत्न करता है वह किसीको भी प्रसन्न नहीं रख सकता।

यदि तुम चाहते हो कि लोग तुम्हारे साथ बहुत सच्चाईका बरताव करें तो तुम स्वयं सच्चे बनो और दूसरे लोगोंके साथ सच्चा व्यवहार करो।

जो मनुष्य सन्तुष्ट नही रहता वह सुखी भी नहीं हो सकता।

पापरहित चित्तसे बढकर हमारे लिये अच्छा रक्षक और कोई नहीं हो सकता।

खुशामद करनेवालेसे सदा बचो; वह बड़ा भारी चोर होता है। वह तुम्हें मूर्ख बनाकर तुम्हारा समय भी चुराता है और बुद्धि भी।

समयके अधिक उलट फेर देखना ही बुद्धिमान् बनाता है।

कोई बुरा काम न करना ही सबसे अच्छा काम है।

बुरे कामोंका फल शीघ्र और अच्छे कामोंका फल देरसे मिलता है।

\+ \+ \+ \+

व्यापार करनेवाले मनुष्योंको हिसाब आदि जानना और बहीखातेकी जानकारी रखना बहुत आवश्यक है। जो हिसाब नही जानता वह न तो माल खरीद सकता है और न बेच सकता है। जो व्यापारी बही खाता नही रखता वह अपनी हानि और लाभ नहीं समझ सकता। व्यापारीको हर छठ महीने अथवा बरसमें एक बार अपने माल और आय-व्ययका पूरा चिट्ठा तैयार करना चाहिये। चिट्ठेसे लाभ यह होता है कि मनुष्यको आय और व्ययकी सब मदोंका पूरा पूरा पता लग

जाता है और वह यह समझ लेता है कि किस मद वा व्यापारसे मुझे कितना लाभ हुआ और किसमें कितना घाटा आया। यदि आय कम हो तो एक ओर आय बढ़ाने और दूसरी ओर व्यय कम करनेका प्रयत्न करना चाहिये। यदि लाभ कम हो तो सदा खर्च कम करो, घाटा पूरा करनेके लिये मालका दाम कभी मत बढ़ाओ।

+ + + +

कभी अपनी स्मरण-शक्तिकी शिकायत मत करो। साधारणतः लोग बाते इसी लिये भूल जाते हैं कि वे उनपर पूरा पूरा ध्यान नही रखते जस्टिस रानडेका मत है कि जिस काममें हमारा जितना स्वार्थ है अथवा जिसका उत्तरदायित्त्व हम जितना समझते हैं उतना ही वह काम हमे याद रहता है। जिस काममें तुम दिल लगाओगे वह कभी न भूलेगा। नित्य प्राति देखनेमें आता है कि प्रत्येक मनुष्य खास अपने कामकी सब बातें याद रखता है। चाहे वह कितना ही भुलक्कड क्यों न हो पर उसे अपना काम कभी नही भूलता। जिस काम या बातको याद रखना चाहो उसमें खूब जी लगाओ। स्मरणशक्ति बढ़ानेका यही सबसे अच्छा उपाय है। दूसरोकी स्मरण-शक्तिकी प्रशंसा करके ही सन्तुष्ट न हो जाओ, बल्कि ध्यानपूर्वक देखो कि जो बातें उन्हें याद रहती हैं उन पर उन्होंने कहाँतक ध्यान दिया है।

* * * * *

अब हम सफलता और उन्नतिके दो मूलमन्त्रोंको लेते है। यही दो बातें ऐसी हैं जो सफलताके लिये सबसे अधिक सहायक हो सकती हैं। एक तो किसी विषयके पूर्ण पण्डित और जानकार बनो और दूसरे कोई नवीनता उत्पन्न करो।

आज कल ज्ञानका इतना अधिक विस्तार हो गया है कि कोई मनुष्य सब क्या दो चार विषयोंका भी पूर्ण पण्डित नहीं बन सकता। इस लिये

यही उचित है कि मनुष्य कोई एक विषय ले ले और जहाँतक हो सके उसके सम्बन्धमें सारी बातें जाननेका प्रयत्न करे । जो मनुष्य सब विषयोंका थोडा थोड़ा जानकार हो उसकी उतनी अधिक कदर नहीं हो सकती जितनी किसी एक विषयके पूर्ण ज्ञाताकी हो सकती है । बहुतसे डाक्टर ऐसे होते है जो केवल कान या आँख या हृदयके रोगोंका ही पूरा पूरा अध्ययन, मनन और अनुशीलन करते हैं और उनके पास अधिकाश वैसे ही रोगी भी आते हैं । फल यह होता है कि दिन पर दिन उनका ज्ञान और अनुभव बढता जाता है और उनके इस ज्ञान और अनुभवसे लाभ उठानेके लिये उनके पास रोगियोकी भीड़ लगी रहती है । ऐसे डाक्टरोको दूसरे डाक्टरोकी अपेक्षा धन और यश अधिक मिलता है। कोई कोई वकील ऐसे होते है जो फौजदारीका काम ही अधिक उत्तमतासे कर सकते है, और कोई कोई केवल दीवानीके मुकदमे ही अच्छी तरह लड़ सकते है । ऐसे लोगोको दोनों अदालतोमे काम करनेवालोंकी अपेक्षा अधिक सफलताकी आशा हो सकती है । यही दशा नौकरी और व्यापारकी भी है। बड़े बड़े कारखानो और कोठियोंमे ऐसे ही निरीक्षकों और उच्च कर्म्मचारियोको बड़ी बडी तनख्वाहे मिलती है जो उस कारखाने या कोठीके सब कामोंको पूरी तरह जानते हों । यदि कोई मनुष्य छापेखानेका थोड़ा बहुत काम जानता हो, थोड़ी बहुत चिकित्सा करना जानता हो और साल दो साल बजाजी भी कर चुका हो, तो न तो उसे किसी बडे छापेखानेकी मैनेजरी मिल सकती है न उसके किए चिकित्साका अच्छा काम हो सकता है और न वह कपड़ेकी किसी कोठीका बड़ा गुमाश्ता हो सकता है । वह जानता तो तीनों काम है; पर पूर्ण ज्ञाता किसी एकका भी नही है और जो मनुष्य किसी एक विषयमें पूरी दक्षता नहीं प्राप्त कर सकता वही पिछड जाता है ।

आजकल ऐसे ही लोगोंकी जरूरत है जो नाम मात्रके लिये 'सर्वगुणसम्पन्न' न होकर किसी एक विषयमें पूरे पारंगत और दक्ष हों ।

जिस विषयके वह पारंगत होंगे उस विषयमें उनकी सम्मति सभी जगह अपेक्षित, आद्दत और मान्य होगी। ऐसा मनुष्य यदि योद्धा हुआ तो शिवाजी होगा—समरसबन्धी एक भी कार्य्य उससे बच न रहेगा; यदि शासक हुआ तो बिस्मार्क होगा—राजनीति सम्बन्धी कोई बात उससे छूटने न पावेगी। यदि वह व्यापारी हुआ तो केवल माल खरीद और बेचकर ही सन्तुष्ट न हो रहेगा बल्कि वह लोगोंकी आवश्यकताएँ देख-कर उनके लिये नये नये माल तैयार करावेगा और सब तरहके मालका परता बैठाकर औरोंके मुकाबलेमें सस्ता और अच्छा माल बेचेगा।

सफलताका दूसरा मूलमंत्र है—नवीनता। किसी विषयके पूरे ज्ञाताकी अपेक्षा किसी प्रकारकी उपयोगी नवीनता उत्पन्न करनेवाले मनुष्यको सफलताका और भी अच्छा अवसर मिल सकता है। 'नवीनता' और कुछ नही केवल बहुतसे साधारण पुराने विचारोंके मेलसे बना हुआ विचारका एक नया स्वरूप है। इस ग्रन्थमे सफलताके अब तक अनेक साधन बतलाये गये है और उनमेंसे अनेक ऐसे भी है जिन्हें साधारणतः सभी लोग जानते होंगे। उनमेंसे यदि किसी एक, दो, या अधिकको हम अपना मूल सिद्धान्त बना लें तोभी हमें पूरी सफलताकी आशा न रखनी चाहिये। पूरी सफलता तभी हो सकती है जब कि हम उन सबका ध्यान रखकर एक ऐसा स्वतन्त्र और नया सिद्धान्त बना लें जो हमारे लिये सब प्रकारसे उपयुक्त हो। अच्छेसे अच्छे ईमानदार आदमी जिनका लाखों रुपयोंका विश्वास किया जा सकता है, पॉच छ' रुपये महीनेकी नौकरीमें जन्म बिता देते है। अच्छेसे अच्छे पवित्र आचरणवाले लोगोंकी भी वही दशा होती है। इसका कारण यही है कि न तो वे कोई काम करनेके योग्य होते हैं और न कामके लिये अपना कोई स्वतन्त्र सिद्धान्त बना सकते हैं। इस लिये इस पुस्तकमें बतलाये हुए सब उपायोंको गौण

और स्वतन्त्र तथा नवीन सिद्धान्त या विचारको ही सफलताके साधनका प्रधान और आवश्यक अंग समझना चाहिये ।

आजकल लोग नकल करना खूब जानते हैं । अगर किसीको पेटेन्ट दवाएँ बेचते और बनाते अथवा इसी प्रकारका और कोई काम करते तथा उससे लाभ उठाते देखते हैं तो स्वयं भी वही करने लग जाते है । केवल यही नही, बहुतसे लोग तो सब बातोंमें दूसरोंकी इतनी अधिक नकल करने लग जाते है कि दूसरे लोग उनपर हँसने और उन्हें तुच्छ समझने लगते है । ऐसा करना केवल मूर्खता ही नही, बल्कि नीचता भी है । इस प्रकारकी नकल आर्थिक दृष्टिसे भले ही थोडी बहुत लाभ-दायक हो, पर नैतिक दृष्टिसे अत्यन्त घृणित, दूषित और निन्दनीय है और अपने कर्ताकी तुच्छता, नीचता और अयोग्यता ही प्रकट करती है । हमे केवल दूसरोंके अच्छे अच्छे गुणोंको ग्रहण करके उन्हें अपना लेना चाहिये । बात बातमें दूसरोंकी नकल करना अपनी अयोग्यता प्रकट करना है । दूसरोंकी नकल करनेसे मनुष्य सुस्त और अकर्म्मण्य ही बनता है । कोई काम करके वही लोग दिखला सकते हैं जो अपने स्वतन्त्र विचारोंसे कोई नवीनता उत्पन्न कर सकते हों । अभी हालकी बात है कि काशीमें एक बंगालीने लोगोंसे अपने टिकट बिकवाकर बदले-में इनामके तौर पर कुछ इनाम देनेकी प्रथा निकाली थी । इस काममे उसको अच्छी सफलता हुई और उसने थोड़े ही दिनोंमें लाखो रुपये पैदा कर लिये । उसकी देखादेखी कमसे कम पचास आदमियोंने वही काम शुरू किया, पर घाटेके सिवा नफा किसीको न हुआ ।

ईमानदार परिश्रमी और योग्य मनुष्य अपने लिये सदा स्वतन्त्र मार्ग बनाते हैं । यदि तुम ग्रन्थकार हो तो बहुत न लिखकर थोड़ा लिखो; पर जो कुछ लिखो सब स्वतन्त्र हो । पचास पृष्ठके अनुवादकी अपेक्षा पाँच पृष्ठके स्वतन्त्र लेखका कहीं अधिक आदर होगा । पर हाँ, इसमें

सन्देह नहीं कि स्वतन्त्र लिखनेके लिये तुम्हें अधिक अध्ययनकी आवश्यकता होगी। मधुमक्खी सब प्रकारके फूलोंसे थोड़ा थोडा रस लेती है, पर अपने तैयार किये हुए मधुमें वह किसी फूलकी गन्ध नही आने देती। जो लोग उत्तम लेखक बनना चाहते हों उन्हें भी सदा इस बातका ध्यान रखना चाहिये कि वे विचार तो सभी स्थानोंसे संग्रह करें पर उनका प्रकाशन स्वतन्त्ररूपसे करें। यही सिद्धान्त किसी न किसी सीमातक सभी अवसरों और कार्य्योंके लिये काममें आसकता है। पुराना सिक्का चाहे कितनी ही शुद्ध धातुका क्यों न बना हो, पर जबतक वह नये सिरेसे ढाला न जाय, कभी चल नही सकता। जिस मनुष्यने जितनी नवीनता दिखलाई है उसने उतना ही आदर भी पाया है। भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्रका इतना अधिक आदर इसी लिये है कि उन्होंने हिन्दीको एक नया स्वरूप दिया। मनुष्य चाहे जूते सीए और चाहे टोपियाँ बनावे, चाहे कविता करे और चाहे वक्तृता दे, चाहे कारखाना खोले और चाहे कोठी चलावे, उसे पूरी सफलता तभी होगी जब वह अपने दिमागसे कोई नई बात निकालेगा। नवीन विचारोंके मनुष्यके लिये ही संसारमें सबसे अधिक आदर और स्थान है।

आप पूछ सकते हैं कि नवीनताका इतना महत्त्व और आदर क्यों है? बात यह है कि पुराने कामोंमें इस समय बहुतसे लोग लगे हुए है और सफलता जल्दी उसी काममे होसकती है जिसमे चढ़ा-ऊपरी और लागडाँट कम हो। साधारणत. लोग ऐसे ही काम ढूँढ़ते हैं जिनमे लाभकी अधिक सम्भावना हो, फल यह होता है कि उनके ढूँढे हुए काममें अधिक लोग लग जाते है और उसमें होनेवाला लाभ दिनपर घटता जाता है। इस प्रकार एक एक करके सभी नये काम पुराने हो जाते हैं और उनका पुरस्कार कम हो जाता है। इस समय

जिस काममें लोग अच्छा लाभ उठा रहे हैं उसमें आगे चलकर सम्मालित होनेवालोंको लाभका बहुत ही थोड़ा अंश मिलेगा। यदि किसी काममें बहुत अधिक लाभ देखो तो समझ लो कि अब उसके दिन पूरे हो चले है। इस अवसरपर यह कह देना भी उपयुक्त जान पड़ता है कि जो काम इस समय प्रचलित हैं उनमें भी नवीनता उत्पन्न की जा सकती है और यही नवीनता उत्पन्न करनेवाले श्रेष्ठ कहलाते और सबसे आगे निकलते है।

लोग कह सकते हैं कि यदि हममें कोई नवीनता उत्पन्न करनेकी शक्ति ही न हो तो हम क्या करें? पर यह आपत्ति मानने योग्य नहीं है। यदि मनुष्यका शरीर और मस्तिष्क शुद्ध और ठीक है तो उसे ऐसी शिकायत करनेका अधिकार नही है। यदि अधिक योग्यतावाला मनुष्य दस मिनटमें कोई नई बात निकाल सकता है तो कोई कारण नहीं है कि साधारण योग्यतावाला मनुष्य दस महीने सोचनेके बाद भी कोई वैसी नई बात न निकाल सके। इसके लिये आवश्यकता केवल इसी बातकी है कि मनुष्य कोई एक उत्तम विषय चुन ले, उसीका मनन करे, उसीपर विचार करे, उठते बैठते, चलते फिरते उसीका ध्यान रक्खे और यहाँ तक कि सोनेमें भी उसीका स्वप्न देखे। साहित्यसेवा, व्यापार, नौकरी आदि सभीमे यह सिद्धान्त समान रूपसे प्रयुक्त हो सकता है और जो इसपर दृढ रहता है उसके लिये सफलता अवश्यम्भावी है।

उपसंहार ।

इस पुस्तकमें सफलतासम्बन्धी सभी आवश्यक बातोंपर थोड़ा बहुत विचार किया जा चुका है । अब स्थूलरूपसे उनका कुछ सार अंश यहाँ दे देना उचित जान पड़ता है । इस बातकी सत्यतामें कोई सन्देह नहीं है कि यदि मनुष्यकी शारीरिक और मानसिक अवस्थाएँ साधारणतः ठीक और अच्छी हों—जैसी कि प्रायः सभी लोगोंकी हुआ करती हैं—तो उसके लिये संसारमें धन, यश, कीर्ति, प्रतिष्ठा अथवा और कोई इष्ट फल प्राप्त करना बहुत अधिक कठिन नहीं है । मनुष्यके कामोंमें भाग्यका महत्त्व उतना अधिक नहीं है जितना लोग समझते है । अपने भाग्यका बहुत बड़ा अंश मनुष्य अपने हाथसे ही बनाता है । अन्य अन्य शक्तियोंकी अपेक्षा मानसिक शक्तिके विकाशसे सफलमनोरथ होनेमें सबसे अधिक सहायता मिलती है । उपयुक्त शिक्षा और शुद्ध आचरण आदिसे उसका कार्य्य और भी सरल हो जाता है । यदि हमारी आकांक्षा परिमित, पवित्र और उपयुक्त हो तो हमें हतोत्साह या निराश होनेका कोई कारण नही है । बिना पूर्ण अध्यवसायके कोई काम नहीं हो सकता । विश्वास और आशाका कभी त्याग न करना चाहिये, क्योंकि जिस हृदयमें ये दोनों रहते है वह सदा धीर और प्रसन्न रहता है । कठिनाइयो और विपत्तियोंका उसपर कोई प्रभाव नही पड़ सकता । आचरण और आत्मबल हमारी योग्यताके प्रधान अंग है । यदि इन दोनों गुणोंके साथ ही साथ मानसिक शक्तियाँ भी प्रबल हों तो फिर पूछना ही क्या है ?

सफलता और उसकी साधनाके उपाय।

सफलता प्राप्त करनेके बाद मनुष्यको सन्तुष्ट, शान्त और सुखी हो जाना चाहिये। यदि ऐसा न हो तो वह सफलता किसी कामकी नहीं। पर फिर भी हम देखते है कि बहुतसे लोग अपनी मूर्खताके कारण सफलमनोरथ हो जानेपर भी असन्तुष्ट और दुःखित रहते है। बहुतसे लोगोंने ऐसे कंजूस देखे होंगे जिन्होंने अपने जीवनका बहुत बड़ा भाग अनुचित और उचित सभी उपायोंसे, दूसरोंका धन अपनी थैलियोंमें भरनेमें ही बिता दिया है। पर अन्तिम समयमें ऐसे ही लोगोंको सबसे अधिक क्लेश भी मिलता है। इसके सिवा ऐसे लोगोंकी सन्तान या तो खूब फिजूलखर्च होती है और या कंजूसीमें उनसे भी हाथ दो हाथ बढ़ कर निकलती है। दोनों अवस्थाओंमें केवल उस मूल पुरुष कंजूसको ही नहीं बल्कि उसके परिवारके सभी लोगोको अनेक प्रकारके दारुण कष्ट सहने पडते है। जालसाजो, जुआरियो और व्यभिचारियोंकी भी प्रायः ऐसी ही घोर दुर्दशा होती है। धन और वैभव उनका असन्तोष और क्लेश दूर नही कर सकता। साधारण फूसकी झोपड़ीमें रह कर अपने बाल बच्चोंसे प्रेमपूर्वक बातचीत करनेवाला दरिद्र भिखमँगा उनसे कही अधिक सुखी होता है। इसका मुख्य कारण यही है कि मनुष्यके दुष्कर्म्म उसका पीछा नही छोडते और सदा उसका कष्ट बढाते रहते है। जीवन सात्त्विक रूपसे व्यतीत होना चाहिये और यदि विचारोंमें स्वतन्त्र सात्त्विकता न हो तो धर्म्मकी शरण लेनी चाहिये।

ससारमें धनको ही सर्वस्व न समझ लेना चाहिये, क्योंकि अनेक दुर्घटनाएँ ऐसी होती है जिनके बुरे परिणामसे हमें सारे विश्वका वैभव भी नही बचा सकता। लोगोंका, देखते देखते, जवान लड़का मर जाता है और सारी दौलत धरी रह जाती है। धन एक साधन मात्र है जिससे संसारके बहुतसे काम निकला करते हैं, वह किसीका ईश्वर नही हो सकता। स्वास्थ्यका धनसे कहीं अधिक मूल्य हो सकता है। सारांश

यह कि मनुष्यको धन, बल, सन्तान, प्रतिष्ठा आदिको अपना लक्ष्य न बनाकर सुख पर दृष्टि रखनी चाहिये । क्योंकि कभी कभी धन, बल आदि मनुष्यको कष्ट पहुँचानेके भी कारण होते हैं । हमारा उद्देश्य सच्ची शान्ति और सुख होना चाहिए जिसके लिए सात्विकताकी बहुत बड़ी आवश्यकता होती है ।

प्रकृतिने तुम्हें जिस उद्देशके लिये बनाया है वह उद्देश पूरा करो, तुम्हे सफलता होगी । कुछ बनना, बिलकुल कुछ न बननेसे लाख दर्जे अच्छा है ।–सिडनी स्मिथ ।

खाली भले आदमी मत बनो, किसी कामके आदमी बनो ।–थोरो ।

मैं जिस कामको हाथमें लेता हूँ उसमे सूईकी तरह गढ़ जाता हूँ ।–बेन जानसन ।

शहतूतकी पत्ती, समय और धैर्य्यकी सहायतासे रेशमी कपड़ा बन जाती है ।–डा० जानसन ।

प्रत्येक मनुष्यके लिये दो प्रकारकी शिक्षाएँ होती हैं; एक तो वे जो उसे दूसरोंसे मिलती हैं और दूसरी सर्वप्रधान वह जो अपने आपको दी जाती है ।—गिबन ।

रोजगार बड़ी लियाकतका खेल है जिसे हरएक आदमी नहीं खेल सकता ।—एमर्सन ।

जिस मनुष्यका हृदय प्रकाशमान और मस्तिष्क शुद्ध होता है वही नवीन और उत्तम विचार उत्पन्न कर सकता है ।—एफ० जाकब्स ।

अपने आनन्दमें दूसरोंको सम्मिलित करो और दूसरोंके दुःखमें तुम स्वयं सम्मिलित रहो–यही उत्तम और आदर्श जीवनका तत्त्व है ।

प्रत्येक मनुष्य यदि अपने कर्त्तव्योंका पालन करने लग जाय तो संसार बहुत शीघ्र आनन्दमय होजाय ।

जिसके हृदयमें विश्वास नहीं है, उसके लिये सारा संसार अशान्तिपूर्ण है।

सबसे अच्छा दिन वही हैं जिसदिन तुमसे कोई अच्छा काम बन बड़े।

ईश्वर और सुख तभी हमारे निकट आते हैं जब हम उन्हें बहुत दूर समझते हैं।

स्वय मनुष्य वास्तवमें कभी बुरा नहीं होता। बुरा बननेके लिये उसे बड़ा परिश्रम करना और कष्ट सहना पड़ता है।

जीवनमें जो कुछ सोचा और कहा जाता है वह किये हुए कृत्योंकी अपेक्षा कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण होता है।—सर आर्थर हेल्पस।

जीवन व्यतीत करनेके लिये नहीं है, श्रेष्ठ बनानेके लिए है।—मारशल।

जिसकी आय उसके व्ययसे अधिक है वह अमीर और जिसका व्यय उसकी आयसे कम है वह गरीब है।—ब्रूयर।

प्रकृति जिसकी स्थितिके अनुकूल हो वह सुखी है, पर जो मनुष्य अपनी स्थितिके अनुकूल अपनी प्रकृति बना लेता है वह बुद्धिमान है।—ह्यूम।

यदि ईश्वर और शासकके दण्डका भय न भी हो तो भी पाप कर्म्म न करना चाहिये, यही सच्चा सदाचरण है।—सेमिका।

छाया अरु सम्मान गति, एकहि सी दरसात।
अनचाहे पीछे लगत, चाहे दूर परात।